हिमज्योति

भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

भीमताल-243 136, नैनीताल (उत्तराखंड)

भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

सम्पादन एवं अनुवाद
अमित कुमार जोशी

आवरण पृष्ठ सज्जा
रविन्द्र पोस्ती

टंकण
ललिता आर्या

संकल्पना, मार्गदर्शन एवं प्रकाशन
डा. प्रमोद कुमार पाण्डेय

निदेशक
भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
भीमताल-263136, जिला- नैनीताल (उत्तराखण्ड)

रूपरेखा एवं मुद्रण
बाइट्स एण्ड बाइट्स, बरेली
मो. 94127 36797; Email: sandybly@gmail.com

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

ICAR

प्रशस्ति–पत्र

गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार

वर्ष 2020 के दौरान 'क' और 'ख' क्षेत्र में स्थित संस्थानों में भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल, नैनीताल द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्रिका ''हिमज्योति'' को द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 16 जुलाई, 2021
नई दिल्ली

(सीमा चोपड़ा)
निदेशक (राजभाषा)

महानिदेशक
(भा.कृ.अनु.प.)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

ICAR

प्रशस्ति–पत्र

गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार 2021

वर्ष 2021 के दौरान 'क' और 'ख' क्षेत्र में स्थित संस्थानों में भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल, नैनीताल द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्रिका ''हिमज्योति'' को द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 16 जुलाई, 2022
नई दिल्ली

(संजय गर्ग)
अपर सचिव (डेयर) एवं सचिव
भा.कृ.अनु.प.

(त्रिलोचन महापात्र)
सचिव (डेयर) एवं महानिदेशक
भा.कृ.अनु.प.

भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
ICAR-DIRECTORATE OF COLDWATER FISHERIES RESEARCH
अनुसंधान भवन, औद्योगिक क्षेत्र, भीमताल-263 136, नैनीताल (उत्तराखंड)
Anusandhan Bhawan, Industrial Area, Bhimtal-263 136, Nainital (Uttarakhand)
An ISO 9001: 2008 Certified

निदेशक की कलम से.....

मत्स्य पालन हमारे देश के आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन के अनुसंधान एवं विकास के उद्देश्य से शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल की स्थापना की गई है। इस निदेशालय द्वारा भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में सतत् मत्स्य उत्पादन में वृद्धि हेतु विभिन्न अनुसंधानात्मक एवं विकासात्मक कार्यों की पहल की गयी है। अपने अनुसंधान कार्य मात्र प्रयोगशालाओं तक ही सीमित न रहे, अतएव वह प्रयोगशालाओं से निकलकर कृषकों के तालाबों तक पहुंचे तथा अधिक से अधिक किसान उन अनुसंधानात्मक प्रविधियों को अपने व्यवहार में ला सकें। यह देखना होगा की ज्ञान का यह प्रवाह एक ही दिशा में सीमित न रहे। इसके लिए यह जरूरी हो जाता है कि अनुसंधान तकनीकियों की जानकारी किसानों तक उनकी ही भाषा में तत्परता से पहुँचे, ताकि हमारे पर्वतीय क्षेत्र के किसान भाई इन तकनीकियों का लाभ अपनी खेती के दौरान उठा सकें। ऐसा करके निश्चित रूप से हम शीतजल मत्स्य उत्पादन को नई ऊँचाईयों तक पहुँचा सकेंगे। कृषकों व देश की साधारण जनता से और अधिक निकट संपर्क में आने का एक माध्यम हमारे हिन्दी प्रकाशन हैं। इसी क्रम में यह गृह पत्रिका '**हिमज्योति**' का प्रकाशन विशेष महत्व रखता है, क्योंकि इसमें मत्स्य पालन से संबन्धित सभी नवीनतम एवं आवश्यक जानकारियों का समावेश किया गया है। निदेशालय के राजभाषा अनुभाग द्वारा किया गया यह छोटा सा प्रयास वास्तव में कृषकों के लिए मील का पत्थर साबित होगा। मुझे यह बताने में प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि आकर्षक कलेवर, साज-सज्जा तथा समय के अनुरूप विषयों का चयन दर्शाता है कि किसानों को परम्परागत खेती की मानसिकता से बाहर निकलने एवं उन्हें प्रोत्साहित करने में यह पत्रिका काफी प्रभावी भूमिका निभा रही है। विगत् वर्षों में निदेशालय की इस पत्रिका को देश के कई क्षेत्रों में स्थित संस्थानों में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा परिषद की द्वितीय सर्वोत्तम हिन्दी पत्रिका के लिए गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार प्रदान किया जाना इस बात का द्योतक है कि यह पत्रिका अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सफल रही है। इसके लिए मैं निदेशालय के श्री अमित कुमार जोशी, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी (राजभाषा), जो इस पत्रिका के प्रधान सम्पादक भी हैं, को धन्यवाद देता हूँ जिनकी कड़ी मेहनत एवं लगन से यह संभव हो सका। मैं उन सभी सहयोगियों के प्रति भी आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने इस पत्रिका को सफल बनाने में अपना प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से योगदान दिया।

शुभकामनाओं सहित।

(प्रमोद कुमार पाण्डेय)
निदेशक

सम्पादकीय.......

यह निदेशालय एक ऐसी संस्था है जहां शीतजल की विभिन्न मत्स्य प्रजातियों पर अनुसंधान कार्य किए जाते हैं, साथ ही इस निदेशालय के वैज्ञानिकों के निर्देशन में विभिन्न छात्र–छात्राओं को अनुसंधान कार्य कराए जाते हैं। हम सभी को ज्ञात है कि कृषि वैज्ञानिकों और किसानों के बीच की दूरी को कम करने में हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। निदेशालय ने मत्स्य पालन की नयी–नयी तकनीकों के प्रचार–प्रसार के लिए हिन्दी के महत्व को आत्मसात करते हुए ज्ञान–विज्ञान के अनुसंधान एवं परिणामों के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग को विशेष महत्व दिया है। किसी देश की अस्मिता उसकी भाषा व संस्कृति से जुड़ी होती है। सौभाग्य से हमारा देश भाषा एवं सांस्कृतिक दृष्टि से एक समृद्व राष्ट्र है। देश के अधिकांश कृषक समुदाय, अनुसंधान कर्मियों एवं प्रसार कर्मिकों से सीधे जुड़ने का माध्यम उनकी ही भाषा में प्रकाशित पत्रिकाऐं हैं। **"हिमज्योति"** पत्रिका का प्रकाशन ऐसे ही प्रयासों की कड़ी है। इस पत्रिका में निदेशालय के वैज्ञानिकों सहित देश भर के विभिन्न संस्थानों के प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों, शोधार्थियों द्वारा मत्स्य पालन एवं दूसरे अन्य विषयों से संबन्धित अनुसंधान लेखों को सरल भाषा में लिखा गया है। पत्रिका को रूचिकर बनाने के उद्देश्य से पत्रिका के अंत में कविता/कहानी, संस्मरण, लघुकथा आदि को भी स्थान दिया गया है।

पत्रिका प्रकाशन में प्रेरणा स्रोत निदेशालय के निदेशक महोदय डॉ. प्रमोद कुमार पाण्डेय का हम हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं, जिनके कुशल मार्गदर्शन एवं सतत् सहयोग से यह पुनीत कार्य सम्भव हो पाया। हम उन लेखकों के प्रति भी कृतज्ञता प्रकट करते हैं जिन्होंने अपने प्रासंगिक लेखों द्वारा पत्रिका में अपना योगदान दिया। इन्ही शब्दों के साथ **'हिमज्योति'** का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। हमें आपके बहुमूल्य विचारों, सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी ताकि भविष्य में यह पत्रिका और अधिक प्रभावशाली बन सके। आशा है यह पत्रिका अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सफल होगी। इसी आशा एवं विश्वास के साथ।

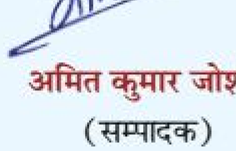

अमित कुमार जोशी
(सम्पादक)

ICAR-DCFR

अनुक्रमणिका

मत्स्य पालन

3 जलकृषि में क्रायोप्रिजर्वेशन
प्रमोद कुमार पाण्डेय एवं अमित कुमार जोशी

10 पर्वतीय क्षेत्रों में विभिन्न मत्स्य प्रजातियों का पालन
एन.एन. पाण्डे एवं आर.एस.पतियाल

18 मध्य हिमालयी क्षेत्रों में रंगीन मछलियों की बागवानी
आर. एस. पतियाल एवं एम. राजेश

24 मत्स्य पालक उत्पादक संगठन : प्रबंधन एवं विकास
पवन कुमार शर्मा, विजय कुमार शर्मा एवं अमरीश वैद

30 हिमालयी क्षेत्रों में रेन्बो ट्राउट का संवर्द्धन
आर.एस. पतियाल, राजेश एम. एवं बीजू सैम कमलम्

35 रोजगार की दिशा में अलंकारिक मात्स्यिकी–
संजय कुमार छिम्वाल एवं अमित कुमार जोशी

42 जल कृषि में आणविक मार्कर–
प्रमोद कुमार पाण्डेय

50 भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में शीतजल मत्स्य पालन का भविश्य–
प्रमोद कुमार पाण्डेय एवं अमित कुमार जोशी

रोग व पोषण

59 जलीय पर्यावरण का जैविक उपचार (बायोरेमेडिएशन)–
अर्चना सिन्हा

69 रेन्बो ट्राउट की बीमारियाँ–
सुरेश चन्द्रा, परवेज़ अहमद एवं राजा आदिल हुसैन

ICAR-DCFR

कृषि / अन्य

75 फसलोत्पादन में जैव उर्वरकों का योगदान–
संजय कुमार एवं विधापति चौधरी

78 कुक्कुट पालन में ग्रामीण महिलाओं की भूमिका–
दिव्या, चन्द्र देव, राजनरायण, जगवीर सिंह त्यागी, संदीप सरन एवं एम० पी० सागर

81 भारत में उद्यमशीलता से सशक्त कृषक : नीतिगत योजनाएं –
प्रतिभा जोशी, गिरिजेश सिंह, रेनू जेठी एवं गीतांजलि जोशी

99 अचार प्रक्रिया के द्वारा सब्जियों का संरक्षण–
सुधा जुकारिया, शशि तिवारी एवं सी तिवारी

104 ग्रामीण क्षेत्रों में कुक्कुट पालन–
दिव्या, चन्द्र देव, जगवीर सिंह त्यागी, संदीप सरन, राजनरायण, एस० के० भान्जा एवं ए.के तिवारी

118 ऊँटनी का दूध डेयरी उद्योग के लिए वरदान
सोनम कुमारी[1], जुई लोध[1] एवं योगेंद्र सिंह जादौन[1]

121 स्थानीय फल एवं फूल का कुटीर उद्योग के रूप में मूल्य संवर्धन –
सुधा जुकारिया, शशि तिवारी एवं सी तिवारी

128 छत बागवानी एवं गमले में फलदार पोधे उगाना–
आकाश शर्मा

134 जल संकट : कारण और निवारण–
तारा दत्त जोशी

138 हिन्दी के राजभाषा बनने की विकास यात्रा –
अभिषेक कुमार सिंह एवं ब्र

कविता/कहानी

149	ननिहाल की सैर-	*रमेश सोमवंशी*
154	भुल्लू दादा-	*तारा दत्त जोशी*
158	लघु कथा -	*शारदा मालराडॉ.*
159	ई. स्टेनली जोन्स और मेथोडिस्ट आश्रम, सातताल-	*अजय एस. रावत*
161	'कब तक पुकारूँ : मेरी पहली किताब-	*दिनेश कर्नाटक*
164	कर्म फल-	*तारा दत्त जोशी*
165	हरियाली तीज -	*सुषमा परमार सिंह*
166	माँ-	*इन्दिरा पाण्डेय*
167	फुहार-	*सुषमा परमार सिंह*
168	नयादौर-	*संदीप जोशी*
169	मैं नारी हूं -	*इन्दिरा पाण्डेय*
170	बारिश की बूँदें और आस के पंछी-	*सुषमा परमार सिंह*
171	कुमाऊँ के लोकगीत-	शारदा मालरा

मत्स्य पालन एवं प्रबंधन

जल कृषि में क्रायोप्रिजर्वेशन

प्रमोद कुमार पाण्डेय एवं अमित कुमार जोशी
भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

क्रायोप्रिजर्वेशन तकनीक ने हैचरी और जलकृषि को बढ़ावा दिया है। यह तकनीक चयनात्मक प्रजनन में मूल्यवान है तथा प्रजनन कार्यक्रमों को नियंत्रित रखती है। यह संकर प्रजातियों के उत्पादन तथा देशी एवं लुप्तप्राय प्रजातियों के जीनोम संरक्षण में भी सहायक है। युग्मक (जननकोष) क्रायोप्रिजर्वेशन की सफलता विभिन्न कारकों पर निर्भर करती है, जैसे– चयनित प्रजाति, मौसम संबन्धी तत्व और युग्मक की गुणवत्ता, तकनीकों का संग्रह, उपयोग किए गए मंदक, भंडारण की स्थिति तथा निषेचन तकनीक आदि। अभी तक अधिकाशंतः शुक्राणुओं का क्रायोप्रिजर्वेशन ही किया जाता है। मोटी कोरियोन की उपस्थिति, झिल्ली की अभेद्यता, जर्दी की पर्याप्त मात्रा, क्रायोप्रोटेक्टेंट की विषाक्तता और इंट्रासेल्युलर बर्फ के निर्माण के कारण भ्रूण और ओवा का क्रायोप्रिजर्वेशन प्रोटोकॉल सीमित होने के साथ साथ निरंतर विफल हो रहे हैं। 200 से अधिक मत्स्य प्रजातियों के शुक्र रस के लिए क्रायोप्रिजर्वेशन प्रोटोकॉल उपलब्ध हैं और कई अन्य मत्स्य प्रजातियों को अभी भी अनुकूलित किया जाना शेष है। शुक्र रस का क्रायोप्रिजर्वेशन अभी तक प्रथम चरण में है तथा सर्वोत्तम संरक्षण तकनीक के साथ, केवल 50% ही जीवित रहना संभव है। क्रायोप्रिजर्वेशन के दौरान कोशिका क्षति मुख्य रूप से घोल के प्रभाव, निर्जलीकरण, बाह्यकोशिकीय और अंतःकोशिकीय बर्फ निर्माण जैसे कारकों के कारण हिमीकरण चरण के दौरान होती है। कोशिका क्षति को कम करने के लिए विभिन्न मत्स्य प्रजातियों में शीतलन और पिघलने की दर के साथ–साथ क्रायोप्रोटेक्टेंट्स के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए विभिन्न अध्ययन किए गए हैं। यद्यपि विभिन्न प्रजातियों के शुक्राणु और अंडाणु के लिए क्रायोप्रिजर्वेशन प्रोटोकॉल विकसित किया गया है, लेकिन उनका व्यावसायीकरण सफल नहीं हो पाया है। सफल क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए Sublethal स्तर पर विशेष रूप से क्रायोइंजुरी के प्रभाव के लिए और अधिक शोध की आवश्यकता है।

परिचय

जल कृषि उत्पादन में वृद्धि करने एवं मत्स्य पालन पर निर्भरता को कम करने के लिए, युग्मकों का क्रायोप्रिजर्वेशन अत्यंत महत्वपूर्ण है। क्रायोप्रिजर्वेशन न केवल मत्स्य उत्पादन में वृद्धि करेगा, बल्कि महत्वपूर्ण आनुवंशिक संसाधनों की पुर्नस्थापना में भी मदद करेगा। क्रायोप्रिजर्वेशन जीवित सामग्रियों के संरक्षण या भंडारण की प्रक्रिया है, जिसमें कम तापमान (-196°C) पर डीएनए क्षरण और कोशिका क्षति को रोकने के लिए सभी जैविक गतिविधियों जैसे–कोशिकाओं, ऊतकों, ओसाइट्स, भ्रूण, शुक्राणु प्रोटोजोआ, अंगों या किसी भी जैविक सामग्री को लंबे समय तक संग्रहीत किया जा सकता है तथा इसकी पुनर्प्राप्ति एवं भविष्य में उपयोग के लिए इसे लम्बे समय तक जल कृषि प्रौद्योगिकियों के द्वारा मत्स्य उत्पादन को बढ़ाने एवं प्राकृतिक मत्स्य स्टॉक पर निर्भरता को कम करने के लिए युग्मक (शुक्राणु और अंडाणु) की क्रायोबैंकिंग बहुत महत्वपूर्ण हो जाती है। वैज्ञानिकों ने मत्स्य शुक्राणुओं के जमने की सूचना देने के साथ साथ विभिन्न मत्स्य प्रजातियों के शुक्राणुओं को क्रायोप्रिजर्वशन भी किया है। जलकृषि में शुक्राणु का क्रायोप्रिजर्वेशन सफलतापूर्वक किया गया है। यद्यपि भ्रूण एवं ओवा क्रायोप्रिजर्वेशन प्रोटोकॉल को सीमित सफलता मिली है। भ्रूण संरक्षण में विफलता मुख्य रूप से गंदले कोरियोन, झिल्ली की अभेद्यता, जर्दी की पर्याप्त मात्रा, क्रायोप्रोटेक्टेंट की विषाक्तता और इंट्रासेल्युलर बर्फ का निर्माण आदि की उपस्थिति के कारण हुई। इसी तरह से किसी भी परिरक्षक घोल के

साथ उनकी कॉर्टिकल प्रतिक्रिया और ओव्यूलेशन के बाद त्वरित क्रियाशीलता के कारण oocyte का क्रायोप्रिजर्वेशन करना कठिन हो गया है। इन समस्याओं के कारण, अंडों और भ्रूण के संरक्षण को अधिक सफलता और व्यवहार्यता नहीं मिली। इसके अलावा जलकृषि उद्योग में क्रायोप्रिजर्व्ड शुक्राणुओं का व्यावसायीकरण क्रायोप्रिजर्वेशन उद्योग के विस्तार में कमी के कारण विफल हो गया है।

क्रायोप्रिजर्वेशन की वर्तमान स्थिति

200 से अधिक प्रजातियों के लिए बहुत ही सुगम शुक्र रस (मिल्ट) क्रायोप्रिजर्वेशन प्रोटोकॉल उपलब्ध है तथा इसके लिए क्रायो बैंक स्थापित किए गए हैं। क्रायोप्रोटेक्टेंट का प्रकार, ठण्डा करने (शीतलन) और पिघलने (विगलन) की दर जैसे विभिन्न कारक क्रायोप्रिजर्वेशन को प्रभावित करते हैं। विद्वानों ने भारतीय मेजर कार्प और लेबियो कालबासु स्परमैटोजोआ पर शीतलन और विगलन की दर के साथ–साथ क्रायो प्रोटेक्टेंट्स के प्रभाव का अध्ययन किया है। हाल ही में, जापानी ईल मछली एंगुइला जपोनिका और यूरोपीय ईल मछली एंगुइला एंगुइला के शुक्राणु के सफल क्रायोप्रिजर्वेशन की सूचना प्राप्त हुयी है। मेथनॉल में संरक्षित शुक्राणुओं की निषेचन दर अधिक पायी गयी है जो भविश्य में उपयोगी सिद्ध होगी। उनके द्वारा रेनबो ट्राउट, साइबेरियन स्टर्जन, टिनकाटिन्का, कतला एवं रोहू जैसी मछलियों में रोगाणु कोशिका के क्रायोप्रिजर्वेशन की सूचना भी दी गई है। हालाँकि इनका सफल क्रायोप्रिजर्वेशन उपलब्ध नहीं है। जेबरा मछली के भ्रूण में माइटोकॉन्ड्रिया, प्लाज्मा झिल्ली और राइबोसोम की क्रायोइंज्यूरी संरक्षण के एक मिनट बाद होती है। लेबियो रोहिता, कॉमन कार्प जैसी कुछ मछलियों की मृत्यु भी रिपोर्ट की गई है। विद्वानों ने केवल प्रारंभिक चरण के भ्रूण में जेबरा मछली के लिए मेथनॉल को एक जहरीले क्रायोप्रोटेक्टेंट के रूप में पहचाना तथा फ्लाउंडर भ्रूण के लिए ग्लिसरॉल को डीएमएसओ से अधिक विषाक्त माना। यह पाया गया है कि मछली के अंडाणुओं का क्रायोप्रिजर्वेशन मछली के भ्रूण के क्रायोप्रिजर्वेशन की तुलना में अधिक सफल है। यह इसलिए है क्योंकि अंडाणुओं का आकार छोटा होता है और उनकी झिल्ली की पारगम्यता कम होती है जिससे वे ठंड और क्रायोप्रोटेक्टेंट्स के प्रति कम संवेदनशील होते हैं। अन्य मत्स्य प्रजातियों मुख्यतः जेबरा मछली के ओसाइट्स क्रायोप्रिजर्वेशन पर विभिन्न रिपोर्टें उपलब्ध हैं। विद्वानों ने बताया कि जेब्राफिश के चरण III में अंडाणु चरण IV की तुलना में ठंडक के प्रति अधिक संवेदनशील पाए गए। एक अन्य विद्वान ने बताया कि जेब्राफिश में चरण III डिम्ब ग्रंथि ऊतक चरण I और II की तुलना में ठंडक के प्रति अधिक संवेदनशील थे। इसी प्रकार एक अन्य विद्वान ने बताया कि KCL बफर में जेब्राफिश के अंडाणुओं की उत्तरजीविता L–माध्यम की तुलना में अधिक थी। एक अन्य विद्वान ने विभिन्न क्रायोसोल्यूशंस का उपयोग करके विट्रीफिकेशन के बाद जेबरा मछली में डिम्बग्रंथि अंडाशय की उत्तरजीवितता का अध्ययन करने के साथ ही विभिन्न क्रायोप्रोटेक्टेंट तथा विभिन्न जीवन चरणों में जेबरा मछली के भ्रूण की विषाक्तता का मूल्यांकन किया और पाया कि चरण IV अधिक संवेदनशील था। एल. रोहिता के अंडे और भ्रूण के असफल क्रायोप्रिजर्वेशन की सूचना दी, जबकि लोच के निषेचित अंडों को क्रायोप्रिजर्व करने का प्रयास किया। ये अध्ययन बताते हैं कि जेब्राफिश अंडाणु के चरण विकास, क्रायोप्रोटेक्टेंट का प्रकार और क्रायोप्रेजर्वेशन की विधि सभी अंडाणु के क्रायोप्रेजर्वेशन के बाद की उत्तरजीविता को प्रभावित कर सकते हैं।

क्रायोप्रिजर्वेशन का महत्व

मछली पालन में युग्मकों का क्रायोप्रिजर्वेशन एक मूल्यवान तकनीक है जिसमें युग्मकों को बहुत कम तापमान पर ठंडा करके संरक्षित किया जाता है। यह तकनीक मछली पालन में कई लाभ प्रदान करती है, जैसे कि युग्मकों की उपलब्धता, हैचरी उत्पादन के लिए शुक्राणु की स्थिर आपूर्ति

और आवश्यकता पड़ने पर हैचरी के बीच शुक्राणु हस्तांतरण। मछली के युग्मकों का क्रायोप्रिजर्वेशन पालतू प्रजातियों के जीनोम संरक्षण में भी मदद कर सकता है। शुक्र रस का क्रायोप्रिजर्वेशन उन प्रजातियों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है जिनमें शुक्र रस की कुल मात्रा बहुत कम होती है। लुप्तप्राय आनुवंशिक संसाधनों को क्रायोप्रिजर्वेशन प्रोटोकॉल के माध्यम से भी संरक्षित किया जाता है। क्रायोप्रिजर्वेशन शुक्राणु को उसके उत्पादन की उच्च गुणवत्ता चरणों के दौरान एकत्र करने की अनुमति देता है और उम्र बढ़ने से बचाता है तथा शुक्राणु की गुणवत्ता में सुधार करता है। क्रायोप्रिजर्वेशन तकनीक ने हैचरी और जल कृषि कार्यों को बढ़ाया है, जो मादाओं के अंडे देने में लचीलापन, प्रजनन कार्यक्रमों में अधिक नियंत्रण और विस्तारित अवधि के लिए अनुकूल जीन को संग्रहीत करने की क्षमता प्रदान करके चयनात्मक प्रजनन कार्यक्रमों में मूल्यवान है। आजकल, क्रायोप्रिजर्व्ड किए गए शुक्राणु का उपयोग अंतर– प्रजाति संकर के उत्पादन में किया जा रहा है।

क्रायोप्रिजर्वेशन सिद्धांत

क्रायोप्रेजर्वेशन सिद्धांत की मूल समझ में ईष्टतम परिणाम, क्रायोप्रेजर्वेशन, न्यूनतम कोशिका क्षति और विगलन के बाद बड़ी संख्या में व्यवहार्य शुक्राणु के पुनरुद्धार के लिए क्रायोप्रेजर्वेशन आवश्यक है। क्रायोप्रेजर्वेशन अभी तक प्रारंभिक अवस्था में है और सर्वोत्तम संरक्षण तकनीक के साथ, केवल 50% जीवित रहने की संभावना है। क्रायोप्रिजर्वेशन के दौरान कोशिकाओं को नुकसान मुख्य रूप से ठंड की अवस्था में होता है जो घोल के प्रभाव, बाहय कोशिकीय बर्फ निर्माण, निर्जलीकरण और अन्तः कोशिकीय बर्फ निर्माण के कारण हो सकता है। मछली के युग्मकों के क्रायोप्रिजर्वेशन की सफलता विभिन्न कारकों पर निर्भर करती है जैसे कि मौसम, युग्मकों की गुणवत्ता, संग्रह तकनीक, उपयोग किए गए मंदक, पर्याप्त ठंड और गलन अवस्था, भंडारण की स्थिति और गलन के बाद निषेचन की तकनीक।

क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए प्रोटोकॉल

मछली के शुक्राणु प्रकृति में विशिष्ट गुण वाले एवं अद्वितीय होते हैं। शुक्राणुओं की गुणवत्ता और मात्रा प्रजातियों पर निर्भर होती है और शुक्राणु की गुणवत्ता तथा मात्रा प्रजाति–विशिष्ट एंव व्यक्ति–विशिष्ट होती है। सामान्य तौर पर, वे गतिहीन होते हैं और केवल कुछ प्रजातियों में ही गतिशील शुक्राणु होते हैं। मछली युग्मक का क्रायोप्रिजर्वेशन अच्छी तरह से स्थापित किया जाता है।

हालाँकि विभिन्न मत्स्य प्रजातियों के क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए अलग–अलग परिस्थितियों की आवश्यकता होती है जिन्हें विशेष रूप से मानकीकृत किया जाना चाहिए। मछली के शुक्राणु या जर्मप्लाज्म के सफल क्रायोप्रिजर्वेशन को प्राप्त करने में मुख्य तकनीकी कारक को विस्तारक, क्रायोप्रोटेक्टेंट और शीतलन दर पर निर्भर बताया गया है। मछली के शुक्राणु के क्रायोप्रिजर्वेशन के विभिन्न चरणों में शामिल हैं:

- शुक्र रस (मिल्ट) का संग्रह
- शुक्र रस (मिल्ट) की गुणवत्ता एवं मात्रा का मूल्यांकन
- एक्सटेंडरों का परिवर्द्धन
- क्रायोप्रोटेक्टेंट का परिवर्द्धन
- मछली के मिल्ट का पतला होना
- मछली के मिल्ट का संतुलन
- भंडारण
- मिल्ट का जमना
- मिल्ट का पिघलना

शुक्र रस (मिल्ट) का संग्रहण

प्रजनन काल के दौरान मिल्ट की अच्छी गुणवत्ता और मात्रा के लिए स्वस्थ प्रजनकों का चयन किया जाना चाहिए। प्रजनक परिपक्व अवस्था में होने चाहिए। प्रजनकों की परिपक्व और अच्छी गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए, उन्हें

पर्याप्त प्रोटीनयुक्त अच्छी गुणवत्ता वाला आहार खिलाया जाना चाहिए। अंतःप्रजनन से बचने के लिए मछली के अलग–अलग स्टॉक का चयन किया जाना चाहिए। मिल्ट को स्वच्छ एवं प्रदूषण मुक्त वातावरण में एकत्र करने के साथ–साथ गंदगी, खून, मल और बलगम से बचने के लिए मछली को ठीक से साफ किया जाना चाहिए। मिल्ट को पेट के क्षेत्र पर हल्के दबाव का उपयोग करके एकत्र किया जाता है तथा एम्पौल या क्रायोवियल में संग्रहित कर उसे 0–4°C के तापमान पर रखा जाना चाहिए। कुछ मामलों में मिल्ट को विशेष रूप से कैटफिश, म्यूरेल आदि मछलियों से शल्य चिकित्सा पद्धति के द्वारा भी एकत्र किया जा सकता है जहां शुक्राणु को स्ट्रिपिंग के माध्यम से एकत्र नहीं किया जा सकता। मिल्ट संग्रह की आवृत्ति मछली की क्षमता के साथ–साथ दूध की मात्रा और घनत्व के आधार पर तय की जा सकती है।

शुक्र रस (मिल्ट) की गुणवत्ता और मात्रा का मूल्यांकन

मिल्ट की गुणवत्ता तथा मात्रा का मूल्यांकन मिल्ट निकलने के तुरंत बाद किया जाना चाहिए। यह मूल्यांकन मिल्ट के नमूनों का भौतिक जैसे कि मिल्ट की मात्रा, रंग, शुक्राणुनाशक मूल्य, शुक्राणु कोशिका गिनती और शुक्राणु गतिशीलता आदि का अवलोकन करके किया जाता है। मिल्ट का स्थूल एवं सूक्ष्म मूल्यांकन विभिन्न विशेशताओं के लिए किया जाना चाहिए। मिल्ट का रंग देखने में दूधिया सफेद से मलाईदार सफेद होना चाहिए। रक्त, मूत्र या मल के साथ दूषित मिल्ट लाल, भूरा या हरा रंग का दिखायी देता है जिसे त्याग दिया जाना चाहिए। मिल्ट की मात्रा मछली की प्रजाति, मछली के आकार एवं परिपक्वता चरण पर निर्भर करती है। यह प्रत्येक में भिन्न–2 होती है जिसे क्रायोवियल्स का उपयोग करके सीधे मापा जाना चाहिए। मिल्ट की मात्रा में किसी भी प्रकार की असामान्यता मछली में बीमारी या तनाव का संकेत देती है। शुक्राणु की स्थिरता का मूल्यांकन मौजूद शुक्राणु कोशिकाओं की संख्या के आधार पर किया जाना चाहिए। मैक्रोस्कोपिक मूल्यांकन के अलावा शुक्राणु की गतिशीलता के लिए मिल्ट की सूक्ष्म जांच की जानी चाहिए अर्थात् गतिशील शुक्राणु कोशिका का प्रतिशत एवं उनकी गति की अवधि 0 (गतिहीन) से 5 (सक्रिय रूप से गतिशील) को मनमाना रूप दिया जा सकता है। मछली के शुक्राणु आमतौर पर गतिहीन होते हैं और पानी द्वारा बाहय रूप से सक्रिय हो सकते हैं। मिल्ट की गुणवत्ता का मूल्यांकन करने के लिए सबसे आम पैरामीटर उपयोग किया जाता है। शुक्राणु गतिशीलता की लंबी अवधि क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए अच्छी मानी जाती है। हालाँकि, इसे प्रजाति विशिष्ट माना जाता है। गतिशीलता के अलावा, गुणात्मक और मात्रात्मक मूल्यांकन के लिए शुक्राणु के घनत्व पर भी विचार किया जाता है। शुक्राणुओं की सांद्रता का मूल्यांकन हेमोसाइटोमीटर द्वारा किया जाता है। मछली के मिल्ट की प्रति इकाई मात्रा में शुक्राणुओं की संख्या आकार, परिपक्वता, प्रजाति, मौसम और स्वास्थ्य के अनुसार भिन्न–2 होती है। फोटोइलेक्ट्रिक कलरमीटर का उपयोग शुक्राणु घनत्व के शीघ्र और सटीक माप के लिए भी किया जा सकता है। शुक्राणु कोशिका का मूल्यांकन करने के लिए शुक्राणु कोशिका मूल्य भी एक आसान और त्वरित तरीका है। इसे माइक्रोहेमेटोक्रिट केशिका ट्यूब का उपयोग करके एक्सेस किया जाता है और पैक्ड सेल वॉल्यूम के रूप में व्यक्त किया जाता है। जीवित और मृत शुक्राणुओं के प्रतिशत का मूल्यांकन इओसिन डाई का उपयोग करके भी किया जा सकता है। डाई केवल मृत कोशिका में प्रवेश करेगी और मृत एवं जीवित कोशिका के बीच अंतर करेगी। क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए मृत कोशिका 25% से अधिक नहीं होनी चाहिए। जैव रासायनिक गुण जैसे पीएच के लिए भी मिल्ट का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। मिल्ट का पीएच विभिन्न प्रजातियों में अलग–अलग होता है। सामान्य तौर पर, मीठे पानी की मछली का मिल्ट थोड़ा क्षारीय होता है। अच्छी गुणवत्ता वाले मिल्ट के लिए पीएच 6.5–7.0 होना चाहिए।

विस्तारकों (एक्सटेंडर्स) का संयोजन

शुक्राणुओं की जीवन शक्ति और व्यवहार्यता के लिए स्परमैटोजोआ की सक्रियता को बनाए रखने के लिए एक्सटेंडर एक उपयुक्त माध्यम है। दूसरे शब्दों में एक्सटेंडर एक डाइल्यूशन माध्यम होता है जो स्पर्म प्रोसेसिंग में उपयोग किया जाता है तथा स्पर्म की जीवनता एवं जीवाष्मता को संरक्षित रखने में मदद करता है। एक्सटेंडर रासायनों का एक घोल है जो कि रक्त या सेमिलन प्लाज्मा की तरह का होता है। क्रायोप्रिजर्वेजरवेशन के लिए उपयोग किए जाने वाले एक्सटेंडर के रासायनिक सूत्रीकरण व्यापक रूप से भिन्न होते हैं तथा स्परमैटोजोआ की शारीरिक एवं रासायनिक विशेषताओं पर निर्भर करते हैं। एक्सटेंडर थोड़ा हाइपरटोनिक होता है तथा स्परमैटोजोआ को निर्जलीकरण/थकावट से बचाता है और एक माध्यम के रूप में कार्य करता है जो इन्ट्रासेल्युलर बर्फ के निर्माण को कम करने के साथ साथ क्रायोइंज्युरी को भी रोकता करता है। शुक्राणुओं को एक आदर्श एक्सटेंडर (विस्तारक) में रखा जाना चाहिए जिसमें बफर, चीनी, क्रायोप्रोटेक्टेंट, लिपिड और एंटीबायोटिक्स शामिल हों। एक्सटेंडर के लिए अच्छा बफर उस विशेष प्रजाति के शुक्रद्रव्य के गुणों से मेल खाना चाहिए। एक अच्छे एक्सटेंडर की संरचना विशेष प्रजाति के शुक्रद्रव्य के बराबर होनी चाहिए। एक्सटेंडर के लिए उपयोग किए जाने वाले विभिन्न साधन हैं–फिश रिंगर्स सॉल्यूशन, NaCl और कॉर्टलैंड का माध्यम आदि। एक्सटेंडर को तैयार करने के लिए विभिन्न लवणों और यौगिकों का उपयोग किया जाता है। $NaHCO_3$, Tris और $KHCO_3$ को बफर के रूप में उपयोग किया जाता है। KCl शुक्राणु सक्रियण को रोकता है, NaCl शक्ति प्रदान करता है, चीनी ऊर्जा और परासरणी संतुलन के स्रोत के रूप में कार्य करती है तथा ग्लाइसिन शुक्राणु के अस्तित्व के लिए, मैनिटोल विषाक्तता प्रभाव से बचाता है। लेसिथिन अंडे की जर्दी, झिल्ली आदि की सुरक्षा प्रदान करते हैं। इनके अलावा Mg^{++} तथा Ca++ आयनों का उपयोग सामान्य शुक्रद्रव्य घटक के रूप में उपयोग किए जाते हैं।

क्रायोप्रोटेक्टेंट का प्रयोग

क्रायोप्रोटेक्टेंट रसायन होते हैं जो कोशिका की रक्षा करते हैं और उनके अस्तित्व में सुधार करते हैं। यह बर्फ के क्रिस्टल के निर्माण को कम करता है और बर्फ के क्रिस्टल के आकार और आकार को बदलता है। यह कोशिका झिल्ली को टूटने से बचाता है और कोशिका को निर्जलीकरण के लिए पर्याप्त समय प्रदान करता है। क्रायोप्रोटेक्टेंट्स प्रकृति में या तो पारगम्य अथवा गैर पारगम्य हो सकते हैं। डी.एम.एस.ओ., मेथनॉल, प्रोपलीन ग्लाइकोल और ग्लिसरॉल जैसे पारगम्य क्रायोप्रोटेक्टेंट कोशिका झिल्ली के लिए पारगम्य होते हैं तथा बर्फ के क्रिस्टल के निर्माण के लिए पानी के बाह्य कोशिकीय प्रसार को कम करने के साथ साथ कोशिका की मात्रा और विलेय परिवर्तन को रोकते है। यह समरूप न्यूक्लियेशन तापमान और बर्फ के क्रिस्टल के गठन को भी कम करते हैं। अब तक डीएमएसओ ने कई प्रजातियों के क्रायोप्रिजर्वेशन के सर्वोत्तम परिणाम दिए हैं। पारगम्य क्रायोप्रोटेक्टेंट कोशिका के लिए विषाक्त हो सकते हैं। इसकी सांद्रता 5–10% से अधिक नहीं होनी चाहिए। सुक्रोज, ग्लूकोज, डेक्सट्रान, अंडे की जर्दी सीरम, मलाई रहित दूध आदि जैसे गैर–घुलनशील क्रायोप्रोटेक्टेंट कोशिका के लिए पारगम्य नहीं होते हैं। यह हिमांक को कम करता है। लिपिड और एंटीबायोटिक्स भी माध्यम में जोड़े जाते हैं। लिपिड ठंड के प्रभाव को कम करता है और प्लाज्मा झिल्ली के टूटने को रोकता है जबकि एंटीबायोटिक किसी भी प्रकार के सूक्ष्मजीवी विकास को रोकते हैं।

मछली के शुक्र रस (मिल्ट) का पतला होना

प्रभावी क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए, क्रायोप्रोटेक्टेंट और एक्सटेंडर को उपयुक्त मंदक बनाने के लिए एक साथ मिलाया जाता है। यह घोल कभी–कभी कार्बनिक यौगिकों के साथ विशिष्ट पीएच और परासरणी शक्ति का एक संतुलित नमक प्रतिरोधी है। पदार्थ पतला एवं ताजा तैयार किया जाना चाहिए तथा उचित अनुपात में मिल्ट के साथ मिलाया जाना चाहिए।

शुक्राणु पतला करने वाला अनुपात प्रजातियों के अनुसार अलग अलग होता है तथा शुक्राणु की व्यवहार्यता को बनाए रखने के लिए विभिन्न प्रजातियों के लिए 1:3–1:9 के अनुपात का उपयोग किया जाता है। किसी भी झटके को रोकने के लिए डाइल्यूटेंट को धीरे–धीरे मिलाया जाना चाहिए और शुक्राणु की गतिशीलता की जांच की जानी चाहिए।

मछली के शुक्र रस (मिल्ट) का संतुलन

मछली के शुक्राणुओं में संतुलन बनाए रखने के लिए उनको एक विशेष अवधि के लिए एक ठण्डे हैंडलिंग कैबिनेट या रेफ्रिजरेटर में रखा जाता है, ताकि क्रायोप्रोटेक्टेंट मछली के शुक्राणु के साथ आपस में बंध सके या उसमें प्रवेश कर सके तथा क्रायोइंजुरी को रोक सके। संतुलन प्रजातियों पर निर्भर करता है और यहां तक कि एक ही प्रजाति के लिए, यह क्रायोप्रोटेक्टेंट और मंदक के प्रकार और सांद्रता पर निर्भर करता है। संतुलन का समय और तापमान मछली की प्रजाति और उपयोग किए जाने वाले क्रयोप्रोटेक्टेंट के प्रकार के आधार पर भिन्न होगा। क्रायोप्रोटेक्टेंट के संतुलन और प्रभावी प्रवेश के लिए पतले शुक्ररस को कुछ समय के लिए 5 डिग्री सेल्सियस पर रखा जा सकता है। यह शुक्राणु को जमने और पिघलने के तनाव से बचाता है। संतुलन का समय भी प्रजाति विशिष्ट होता है। संतुलन का समय संक्षिप्त होना चाहिए और 60 मिनट से अधिक लंबा नहीं होना चाहिए। संतुलन के बाद 70% से अधिक गतिशीलता दिखाने वाले नमूनों को आगे उपयोग के लिए लिया जाना चाहिए।

मछली के शुक्राणुओं का भंडारण

मछली के शुक्ररस को मंदक (डाइल्युएंट) के साथ मिश्रित कर पैलेट, स्ट्रॉ या क्रायोवियल विधि द्वारा संग्रहित किया जा सकता है। पैलेट विधि में शुक्ररस को तरल शुष्क बर्फ में रखा जाता है और तरल नाइट्रोजन (196 सी) में संग्रहित किया जाता है। जमी हुई पैलेट को गर्म ट्यूब में ताजा मंदक के साथ पिघलाया जाता है। यद्यपि यह पैलेट विधि किफायती होती है, तथापि खुले भंडारण के कारण दूषित होने की अधिक संभावना रहने के साथ साथ हैंडलिंग के कारण भौतिक नुकसान की भी अधिक संभावना बने रहती है। क्रिओवियल्स एक व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली विधि है। इस विधि में शुक्ररस को क्रायोवियल में रखा जाता है और भंडारण के लिए सील कर दिया जाता है। जानकारी पुनर्प्राप्ति के लिए शीशियों पर अंकित की जा सकती है। हालाँकि, इस विधि के लिए अधिक संग्रहण स्थान की आवश्यकता होती है। शुक्ररस के संरक्षण हेतु स्ट्रॉ विधि सबसे लोकप्रिय है जहां शुक्ररस को 0.25, 0.5 और 1 मिलीलीटर स्ट्रॉ में संग्रहित किया जा सकता है। सतह से आयतन के बेहतर अनुपात और शुक्ररस की पतली फिल्म के कारण स्ट्रॉ विधि से शुक्राणओं के पिघलने के बाद सबसे अच्छी जीवित रहने की क्षमता प्राप्त होती है।

शुक्र रस (मिल्ट) का जमना

फ्रीजिंग और भंडारण से पहले, शुक्राणु को किसी भी नुकसान से बचाने के लिए तरल नाइट्रोजन वाष्प या प्रोग्राम योग्य फ्रीजर के तहत 10–45°C प्रति मिनट की दर से ठंडा किया जाता है, जब तक कि तापमान 70°C तक न पहुंच जाए। धीमी गति से ठंडा होने से परासरणी संतुलन के लिए पर्याप्त समय मिलता है, फिर स्ट्रॉ या एम्पौल्स को लंबे समय तक भंडारण के लिए क्रायोकैन में 196°C पर तरल नाइट्रोजन में स्थानांतरित किया जाता है। शीशियों पर तिथि, बैच, प्रजाति, क्रायोप्रोटेक्टेंट, मंदक, जमने की विधि और पिघलने के बाद की गुणवत्ता आदि जैसी सभी जानकारी उचित रूप से अंकित की जानी चाहिए। क्रायोकेन को समय–समय पर जांचा और भरा जाना चाहिए। तरल नाइट्रोजन के अलावा, ठोस कार्बन डाइऑक्साइड (79°C), तरल हवा (183°C) का भी भंडारण के लिए उपयोग किया जा सकता है। हालाँकि तरल नाइट्रोजन, निष्क्रिय, रंगहीन और गंधहीन होने के कारण क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए सबसे अधिक उपयोग में लायी जाती है।

शुक्र रस (मिल्ट) को पिघलाना

क्रायोप्रिजर्वेशन में मिल्ट का पिघलना भी एक महत्वपूर्ण चरण माना जाता है। पिघलने का लक्ष्य शुक्राणु कोशिकाओं को एक ऐसे तापमान पर लाना है जहां वे निषेचन के लिए उपयोग किए जा सकें। तेजी से पिघलना धीमी गति से पिघलने की तुलना में बेहतर होता है, क्योंकि धीमी गति से पिघलना बर्फ के क्रिस्टल के निर्माण का कारण बन सकता है जो शुक्राणु कोशिकाओं को नुकसान पहुंचा सकते हैं। मछली के शुक्राणुओं को पिघलाने का सबसे आम तरीका गर्म पानी से पिघलना है। इसमें जमे हुए शुक्राणु को गर्म पानी (37–40°C) में थोड़े समय के लिए (30 सेकंड से 5 मिनट) तक डुबोना शामिल है। पिघलने का समय भंडारण विधि के आधार पर होगा। गतिशीलता, निषेचन और हैचिंग दर, फ्राई उत्तरजीवितता आदि क्रायोप्रिजर्व्ड स्पर्मेटोजोआ के पिघलने के बाद की व्यवहार्यता/प्रजनन क्षमता को आंकने के लिए सामान्य मानदंड हैं। पिघलने के बाद, >40% गतिशीलता वाले नमूनों का आगे उपयोग किया जाना चाहिए। निषेचन दर और हैचिंग प्रतिशत की गणना की जानी चाहिए ताकि क्रिओप्रेजर्वेशन प्रोटोकॉल की प्रभावशीलता का आकलन किया जा सके।

क्रायोप्रिजर्वेशन के दौरान शुक्राणु की गुणवत्ता में परिवर्तन

क्रायोप्रिजर्वेशन के दौरान शुक्राणुओं को कई तरह की तनावों का सामना करना पड़ता है, जैसे कि प्लाज्मा झिल्ली में दरार व टूट–फूट, माइटोकॉन्ड्रियल झिल्ली की क्षमता में कमी और लिपिड पैरोक्सीडेसन आदि। गुणवत्ता मूल्यांकन के लिए शुक्राणु गतिशीलता और जीवन क्षमता सबसे सामान्य पैरामीटर हैं। जमने और पिघलने से शुक्राणुओं पर विभिन्न प्रकार के तनाव पैदा होते हैं और शुक्राणु की गतिशीलता कम हो जाती है तथा प्लाज्मा झिल्ली टूटने के साथ साथ अन्य क्षति भी होती है। क्रायोइंजुरीज के दौरान माइटोकॉन्ड्रियल झिल्ली में दरारें और छेद हो सकते हैं जिससे माइटोकॉन्ड्रिया से ऊर्जा का उत्पादन कम हो सकता है।

विद्वानों ने झिल्ली की तरलता में परिवर्तन देखा जो क्रायोप्रिजर्वेशन के लिए ईष्टतम क्रायोप्रोटेक्टेंट का चयन करने में उपयोगी हो सकता है। अतिरिक्त प्रतिक्रियाशील प्रजातियों का ऑक्सीजन उत्पादन और लिपिड पेरोक्सीडेशन भी विशेष रूप से क्रायोइंजरीज तक पहुंचने के लिए उपयोगी होते हैं, विशेष रूप से उपयुक्त एक्सटेंडर के चयन के लिए। क्रायोइंजुरी शुक्राणु के डीएनए को भी प्रभावित करती है जैसे ट्रांसक्रिप्ट का क्षरण। क्रायोप्रिजर्वेशन कई मत्स्य प्रजातियों के शुक्राणुओं की प्रोटीन और लिपिड संरचना को भी प्रभावित करता है। विद्वानों ने अपनी समीक्षा में शुक्राणु, अंडाणु, भ्रूण, दैहिक कोशिकाओं और प्रारंभिक शुक्राणुजन की प्राइमर्डियल जर्म कोशिकाओं के क्रायोप्रिजर्वेशन के साथ–साथ उनके लाभ एवं हानि की सूचना दी। हालांकि क्रायोप्रिजर्वेशन प्रोटोकॉल विभिन्न प्रजातियों के शुक्राणु और डिम्बाणुजन कोशिका के लिए विकसित किया गया है। इसका व्यावसायीकरण सफल नहीं हो पाया है। विशेष रूप से घातक स्तर पर ठंड के प्रभाव के लिए और अधिक शोध की आवश्यकता है। क्रायोप्रिजर्वेशन की सफलता को बढ़ाने के लिए, इन तनावों के प्रभाव को कम करना महत्वपूर्ण है. यह क्रायोप्रोटेक्टेंट के सही चयन, भंडारण और पिघलने के तापमान के नियंत्रण और उपयुक्त एक्सटेंडर के उपयोग के द्वारा किया जा सकता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में विभिन्न मत्स्य प्रजातियों का पालन

एन.एन. पाण्डे एवं आर.एस. पतियाल
भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

पहाड़ी क्षेत्रों में कठिन भौगोलिक परिस्थितियों, सीमित संसाधन, खेतों का छोटा आकार तथा जटिल जलवायु के फलस्वरूप भी कृषि एवं कृषि आधारित व्यवसाय ही किसानों की जीविका का मूल आधार है। इन परिस्थितियों के फलस्वरूप ही यहाँ के किसान मिली–जुली एकीकृत खेती करते हैं। सुधरी तकनीकों एवं आधुनिकतम कृषि व्यवहार से पहाड़ के किसानों की आमदनी को बढ़ाया जा सकता है। पर्वतीय क्षेत्रों की ठण्डी जलवायु में मछली लोगों के लिए उत्तम प्रोटीन आहार है तथा मछली पालन जीविकोपार्जन के लिए अत्यन्त उपयोगी है। मिली–जुली खेती बाड़ी में छोटे–छोटे आकार के तालाब किसानों के लिए अत्यन्त उपयोगी होते हैं। तालाबों में संचित जल मत्स्य पालन के साथ–साथ बागवानी, सब्जी उत्पादन एवं पशुपालन के लिए भी उपयोगी है। भौगोलिक स्वरूप एवं जलवायु के अनुसार हिमालय के पहाड़ी क्षेत्रों में त्रिस्तरीय मत्स्य पालन किया जा सकता है। समुद्रतल से लगभग 1600 मी० से अधिक ऊँचाई वाले अत्यन्त ठण्डे क्षेत्र रेन्बो ट्राउट मछली पालन के लिए उपयुक्त है। मध्यम ऊँचाई (1000–1600मी०) वाले पहाड़ी क्षेत्र विदेशी कार्प मछलियों के समन्वित व्यवहार के लिए उपयुक्त है। कम ऊँचाई (1000मी० तक) के तराई एवं भावर क्षेत्र सभी प्रकार की कार्प मछलियों के पालन में सहयोगी हैं। इन तीन विशिष्ट क्षेत्रों के लिए जलकृषि हेतु उपयुक्त तौर तरीके इस प्रकार हैं:

(क) अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में रेन्बो ट्राउट पालन (1600मी० से अधिक)

अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में ठण्डा पानी शुद्ध एवं ऑक्सीजन युक्त बहता हुआ पानी उपलब्ध रहता है, जो कि पर्वत श्रृंखलाओं पर जमी बर्फ के पिघलने से आता है। यह क्षेत्र रेन्बो ट्राउट मत्स्य पालन के लिए उपयुक्त है। रेन्बो ट्राउट अधिक

उत्पादन देने वाली तथा ऊँचे दामों में बिकने वाली विदेशी मछली है। ढलान वाले कन्टूर क्षेत्र जहाँ बाहुल्यता से शीतल जल उपलब्ध होता है, इस प्रजाति के पालन के लिए उपयुक्त हैं। जम्मू–कश्मीर राज्य में कश्मीर घाटी, अनन्तनाग एवं लेह–लद्दाख घाटी तथा हिमाचल प्रदेश में चम्बा, किन्नौर, लाहुल स्पीति एवं कूल्लू घाटी, उत्तराखण्ड़ में चमोली उत्तरकाशी, देहरादून, चम्पावत एवं पिथौरागढ का क्षेत्र तथा सिक्किम राज्य में पश्चिम, उत्तरी एवं पूर्वी सिक्किम का क्षेत्र तथा अरूणाचल प्रदेश में तवांग, दिरांग, टेन्गा तथा चेला का कुछ क्षेत्र ट्राउट पालन के लिए उपयुक्त है। ट्राउट पालन के लिए छोटे आकार (30 वर्ग मी०) का लम्बाई वाला (15 मी० लम्बाई, 2 मी० चौड़ाई) पक्के तालाब (रेश–वे) की आवश्यकता होती है। पानी में 7 मिग्रा०/ली० से अधिक घुलित ऑक्सीजन तथा 6.5–8.0पी०एच० आवश्यक होता है। ट्राउट रेश–वे में 40–60 आंगुलिकाएं प्रति धन मी० की दर से संचय करके 12 माह में 300–350 ग्रा० आकार की मछलियों से लगभग 500 किग्रा० प्रति रेश–वे उत्पादन किया जाता है तथा 190ली० प्रति मिनट पानी का बहाव रखा जाता है। अच्छी प्रबन्ध व्यवस्था, 100 आंगुलिकाएं प्रति धन मी० संचय दर, उत्तम आहार व्यवस्था तथा 300 ली० प्रति मिनट पानी बहाव के साथ 700–1000किग्रा/रेश–वे उत्पादन किया जा सकता है। रेन्बो ट्राउट की अधिक बढ़वार एवं अच्छे उत्पादन के लिए पानी

का तापक्रम 13–18 डिग्री से० ग्रे० आवश्यक है। पानी की उपलब्धता के अनुसार ट्राउट फार्म में एक रेशवे या श्रेणीबद्ध कई रेश–वे का निर्माण किया जा सकता है। अनुकूल परिस्थितियॉं बनाये रखने के लिए रेशवे का उपयुक्त आकार एवं स्वरूप आवश्यक है। रेशवे का लम्बाई युक्त 30 वर्ग मी० का आकार, पानी के इन्लेट से आउटलेट की ओर 3 प्रतिशत तलीय ढलान तथा पिट टाइप आउट लेट डिजाइन, अधिक ऑक्सीजन देने, अमोनिया का निष्कासन तथा पानी को साफ रखने में सहायक है। रेशवे को 1 मिग्रा०/ली० पोटेशियम परमैग्नेट के घोल से धोकर 80 सेमी० गहराई तक शुद्व शीत जल से भरते हैं। रेशवे में 300 ली० प्रति मिनट बहाव के साथ 2–5 ग्रा० की 100 अंगुलिकाएं प्रति धन मी० जल की दर से (3000 अंगुलिकांए प्रति रेश–वे) संचय करते हैं तथा समय–समय पर छोटी–बड़ी मछलियों की ग्रेडिंग करते रहते हैं, ताकि स्वयं भक्षण को रोका जा सके। ट्राउट मछली पूरी तरह दिये गये आहार पर पाली जाती है जिसमें 35–40% उत्तम कोटि की प्रोटीन तथा 10–14% वसा का होना आवश्यक है। ट्राउट मछली का आहार, फिशमील सोयाबीन मील, गेहू आटा, स्टार्च, मछली का तेल, ईस्ट मिनरल–विटामिन मिलाकर तैयार किया जा सकता है। अंगुलिकांए एवं ट्राउट आहार को मत्स्य विभाग से प्राप्त जा सकता है।

लगभग 10–12 माह में 300–400 ग्रा० के आकार की मछलियों को तालाब से निकालकर बेचा जा सकता है। निष्कासन के 1–2 दिन पहले आहार नही देते हैं तथा मछलियों की ग्रेडिंग कर लेते हैं। दूर बाजार में भेजने के लिए बर्फ के साथ पैकिंग की जा सकती है। प्रत्येक रेशवे (30 वर्ग मी०) से लगभग 1.25 लाख रूपये की शुद्व आमदनी की जा सकती है। मूल्यवर्धित उत्पाद बनाकर तथा ब्रान्ड नेम "हिमालयन ट्राउट" से और अधिक आमदनी हो सकती है। वर्तमान में देश का ट्राउट उत्पादन लगभग 842 टन है तथा औसतन सालाना वृद्वि दर लगभग 31% आंकी गई है। कुल उत्पादन का लगभग 80% उत्पादन हिमाचल प्रदेश तथा जम्मू एवं कश्मीर राज्य से होता है। अन्य पर्वतीय राज्य जैसे–उत्तराखण्ड, सिक्किम तथा अरूणाचल प्रदेश में भी आधुनिकतम तकनीक का प्रसार करके रेन्बो–ट्राउट पालन की व्यापक पहल की गई है, जो कि किसानों की आय वृद्वि में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

(ख) मध्यम ऊॅंचाई के पर्वतीय क्षेत्रों में विदेशी कार्प मछली का समन्वित पालन (1000–1600 मी०)

ठण्डी जलवायु के कारण इन क्षेत्रों में भारतीय कार्प मछलियों की बढ़वार नही होती है। अतः इन क्षेत्रों में विदेशी कार्प जैसे–सिल्वर कार्प,

ग्रास कार्प तथा कामन कार्प का समन्वित पालन किया जाता है। परम्परागत ढंग से इस प्रकार मछली पालकर लगभग 34किग्रा०/100 वर्ग मी0 उत्पादन किया जाता है। शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल द्वारा विकसित पॉलिथीन लगे (पॉलीटैंक) तालाबों से लगभग 70किग्रा०/100 वर्ग मी०/वर्ष उत्पादन किया जा सकता है। तालाब में एकत्र जल का उपयोग मछली पालन के साथ–साथ सब्जी तथा बागवानी में सिचाई हेतु भी किया जाता है। पॉलिथीन पानी के रिसाव को रोकता है तथा पानी के तापक्रम को 2–6 डिग्री से०ग्रे० तक बढ़ा देता है जो कि मछलियों की बढ़वार में सहायक है। पानी के अधिक तापक्रम तथा हंगेरियन कामन कार्प के संचय से लगभग दो गुनी आमदनी प्राप्त की जा सकती है। नाइट्रोजन युक्त तालाब का पानी सिंचाई के लिए उपयोगी है तथा सब्जी उत्पादन को बढ़ाने में सहायक है।

उपलब्ध जल स्रोत से तालाब पुनः भर लिया जाता है। उपलब्ध हरी घास तथा फसल के पत्तों को ग्रास कार्प खा सकती है। उत्तराखण्ड राज्य में इस व्यवहार का सफल प्रदर्शन किया है तथा अन्य उपयुक्त क्षेत्रों में यह तकनीक उपयोगी है।

(ग) कम ऊँचाई वाले तलीय पर्वतीय क्षेत्रों में कार्प पालन (1000मी० से कम)

भारतीय कार्प मछलियों (रोहू, कतला, मृगल) तथा विदेशी कार्प मछलियों (सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प, कामन कार्प) को लगभग 0.1–0.4 है0

आकार के कच्चे तालाबों में वर्ष भर पाला जाता है तथा औसतन 2.6 टन/है० उत्पादन किया जाता है। स्टंट फिश (अधिक समय तक नर्सरी में रखी मछली) के संचय से वर्ष में दो फसलें लेकर उत्पादन में लगभग दोगुना वृद्वि की जा सकती है। इस व्यवहार में तालाब की तैयारी के उपरान्त 50–80 ग्रा० की बड़े आकार की अगुलिकाएं (स्टंट फिश) 5000–6000/है० की दर से संचय की जाती है तथा नियमित उनके वजन का 2–3% सम्पूरक आहार दिया जाता है। 6 माह की अवधि में लगभग 2.5–3 टन/है० मछली की फसल लेकर तालाब को पुनः तैयार करके अगुलिकाओं का संचय करते हैं। इस प्रकार वर्ष में दो फसलों के द्वारा कुल उत्पादन 5–6 टन/है० किया जा सकता है। मछली के तालाब के साथ पशु, मुर्गी, बत्तख या बागवानी करने से उत्पादन दर में कमी तथा आमदनी में वृद्वि की जा सकती है। पर्वतीय राज्यों के मैदानी क्षेत्रों तथा कम पहाड़ी क्षेत्रों में इस व्यवहार को किया जा सकता है। इसके लिए स्टंट फिश की उपलब्धता हेतु सीड बैंक होना आवश्यक हैं जो कि किसानों को व्यक्तिगत तौर पर छोटी नर्सरी तालाब बनाकर या मत्स्य विभाग के प्रक्षेत्रों पर बडे स्तर पर किया जा सकता है।

रेन्बो ट्राउट पर्वतीय क्षेत्रों में पाली जाने वाली विदेशी प्रजाति की मछली है। यह मत्स्य प्रजाति उत्तरी अमेरिका के प्रशान्त महासागर वाले तटीय क्षेत्रों की मूल वासी है, जिसको 20 वीं सदी के प्रारम्भ में अंग्रेजों द्वारा भारत में लाकर मुख्यतः क्रीडा मात्स्यिकी तथा मनोरंजन के लिए उत्तर भारत के हिमालय क्षेत्र एवं दक्षिण भारत के कुछ पर्वतीय क्षेत्रों में स्थापित किया गया था। अच्छी बढवार, पोषक तत्वों की प्रचुरता, अनूठा स्वाद एवं लोगो की पसन्दीदा प्रजाति होने के कारण यह मछली विश्व के लगभग 100 से अधिक देशों मे पाली जाती है। इस मछली का पालन यूरोप के देशों में बहुतायत से किया जाता है। भारत में इस मछली के पालन की शुरूआत 20 वीं सदी के 60 वें दशक से हुई है। सर्वप्रथम रेन्बो ट्राउट मछली का पालन जम्मू–कश्मीर एवं हिमाचल प्रदेश के ठण्डी जलवायु वाले क्षेत्रों में हुआ, तदुपरान्त् यह प्रजाति अधिक ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अधिक आमदनी परक जल कृषि की मुख्य प्रजाति के रूप में प्रचलित हो चुकी है। आधुनिक मत्स्य संवर्धन की विधाओं में रेन्बो ट्राउट पालन पर्वतीय क्षेत्र के किसानों के लिए आमदनी का एक अच्छा साधन होते हुए जीविजोपार्जन का एक मुख्य आधार बनता जा रहा है। लगभग 30 वर्ग मी० के तालाब से 1.27 लाख रूपये की सालाना आमदनी के साथ पर्वतीय क्षेत्रों के मत्स्य पालको का यह एक मुख्य आकर्षण है। पर्वतीय क्षेत्र के मत्स्य पालकों की रूचि एवं ट्राउट पालन की उत्सुकता के फलस्वरूप पिछले एक दशक में हमारे देश का ट्राउट उत्पादन 147 टन से बढ़कर 2500 टन तक पहुँच गया है जिसमें मुख्य रूप से जम्मू–कश्मीर हिमाचल प्रदेश एवं सिक्किम राज्य की भागीदारी रही है। वर्तमान में इस मछली की

मॉग को देखते हुए हिमालय के इन तीन राज्यों के साथ–साथ उत्तराखण्ड़ एवं अरूणाचल प्रदेश में भी इस मछली के उत्पादन की कई–गुना संभावनाएं हैं। रेन्बो ट्राउट मछली (आन्कोरिन्कस मायकिस) साल्मोनिड समूह की एक मांसाहारी प्रजाति है, जोकि इन्द्र धनुषीय रंगो के कारण देखने में अत्यन्त आकर्षक, उच्च कोटि की प्रोटीन एवं उमेगा–3 तथा उमेगा–6 जैसे अति उपयोगी वसीय अम्लों की प्रचुरता होते हुए बहुत ही पोषक तथा खनिज तत्वों की भरपूर मात्रा के साथ अत्यन्त स्वादिष्ट मछली है। मध्यम आकार के शल्को से ढके सप्तरंगी धारियो एवं धब्बो से युक्त आकर्शक शरीर इस प्रजाति की विशेष पहचान है। लम्बाई युक्त दबी हुई शारीरिक बनावट के साथ इस मछली की रीढ़ में 60–66 कशेरूकाएं, 3–4 कॉटे तथा 10–12 धारी युक्त, अधर पंख, 3–4 कांटे तथा 8–12 धारी युक्त गुदा पंख, 19 संयुक्त धारीयां युक्त पुच्छ पंख, कुल्हे पर मॉसल पंख तथा इन्द्र धनुषीय रंगीन शरीर इस मछली की पहचान के अन्य लक्षण हैं।

रेन्बो ट्राउट मछली पालन कैसे करें?

लगभग 1600मी० से अधिक ऊँचाई के पर्वतीय क्षेत्रों में इस मछली का पालन संभव है। जिन क्षेत्रों में ठण्डा, अधिक घुलित आक्सीजन वाला, शुद्ध एवं निर्मल बहता हुआ पानी भरपूर मात्रा में उपलब्ध है, ऐसे क्षेत्रों में ट्राउट मछली पालन के तालाब बनाये जा सकते हैं। हिमछादित क्षेत्रों से पिघले पाले की जल धाराएं तथा नदियाँ इस प्रकार के जल का मुख्य स्रोत है। इस प्रकार

का जल प्रदूषण रहित, प्रचुर ऑक्सीजन युक्त (7 मि०ग्रा०/ली० से अधिक) तथा 0–20 डिग्री से०ग्रे० तापक्रम वाला रहता है, जोकि ट्राउट संवर्धन एवं प्रजनन के लिए उपयुक्त है। अच्छी बढ़वार के लिए जल का तापक्रम 13–18 डिग्री से०ग्रे० तथा प्रजनन एवं हैचरी उत्पादन के लिए 9–14 डिग्री से०ग्रे० तापक्रम अच्छा रहता है। उपयुक्त जल की पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता के साथ–साथ ट्राउट पालन के स्थान चुनाव हेतु आवागमन की सुविधा, बीज एवं आहार की प्राप्ति तथा बाजार व्यवस्था भी महत्वपूर्ण है। एक व्यस्क रेन्बो ट्राउट मछली का आकार लगभग 2–3 कि०ग्रा० होता है, जो कि लगभग 3 वर्ष की उम्र की होती है। इस प्रजाति की मछली का अधिकतम वजन 25.4 कि०ग्रा० देखा गया है, जो कि लगभग 11 वर्ष की उम्र की थी। पाली जाने वाली रेन्बो ट्राउट की दो किस्में प्रचलित है जिनका प्रजनन काल बसन्त तथा हेमन्त ऋतु में होता है। कुछ देशों में इसकी एल्विनो किस्म भी होती है जिसे गोल्डन ट्राउट कहा गया है।

रेन्बो ट्राउट मत्स्य पालन की आवश्यकताएं

शीतजल

रेन्बो ट्राउट के लिए कम तापक्रम का शुद्ध, प्रदूषण रहित बहता हुआ पानी अत्यन्त आवश्यक है। लगभग 1 टन ट्राउट उत्पादन के लिए 300 ली० प्रति मिनट बहते हुए पानी की आवश्कता रहती है। पानी का तापक्रम 0 से 20 डिग्री से0ग्रे0 उपयुक्त रहता है। 20 डिग्री से०ग्रे० से अधिक तापक्रम का पानी ट्राउट पालन के लिए उपयुक्त नही है। पानी का 13–18 डिग्री से0ग्रे0 तापक्रम ट्राउट की बढ़वार के लिए उत्तम होता है। अतः इस तापक्रम का पानी जितने अधिक समय तक उपलब्ध रहता है उतना ही उत्पादन अधिक तथा मछली स्वस्थ्य रहती है। पानी में सल्ट/ मिट्टी या कार्बनिक पदार्थों का रहना अवांछनीय है। ट्राउट मछली पालन की सफलता के लिए मूलभूत आवश्यकताओं की जानकारी आवश्यक है। एक या दो रेस–वे में छोटे स्तर पर या फिर बड़े स्तर पर ट्राउट पालन करने के लिए इन आवश्यकताओं की व्यवस्था आवश्यक होती

है। पानी में पर्याप्त घुलित ऑक्सीजन (7 मि0ग्रा0/ली0 से अधिक) रहना आवश्यक है। अधिक अम्लीय या क्षारीय पानी भी उपयुक्त नही है, अतः पानी का पी०एच० 6.8–8 के मध्य ठीक रहता है। पानी की उपलब्धता के अनुसार ही ट्राउट प्रक्षेत्र का आंकलन किया जा सकता है या उत्पादन लक्ष्य के अनुसार आवश्यक पानी की व्यवस्था अति आवश्यक है।

ट्राउट रेस–वे

आमतौर पर ट्राउट मछली का पालन लम्बाई युक्त पक्के तालाबों में किया जाता है। इन तालाबों को रेस–वे कहते हैं, जिसमें लगातार पानी का बहाव बनाये रखना आवश्यक है। पानी के बहाव से मछली को आवश्यक धुलित ऑक्सीजन की पूर्ति होती है तथा बचा हुआ आहार एवं बिष्ठा जैसे अवांछनीय पदार्थो का लगातार बहाव के साथ निष्कासन होता रहता है। बहता हुआ पानी तालाब में वांछित कम तापक्रम को भी नियंत्रित रखता है। रेस–वे का उचित आकार मछली की बढ़वार को प्रभावित करता है। आमतौर पर उत्पादन वाले तालाबों का आकार

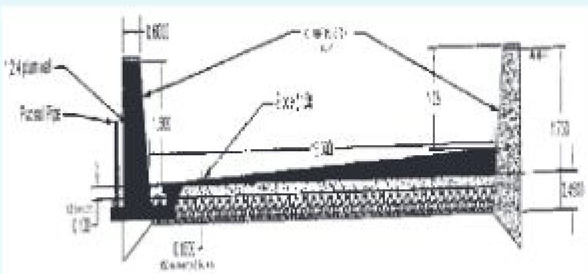

30 वर्ग मी० का होता है। जिसकी लम्बाई लगभग 15 मी० तथा चौड़ाई 2 मी० रखी जा सकती है। रेस–वे में प्रवेश द्वार (इन्लेट) तथा जल निश्कासन द्वार (आउटलेट) की व्यवस्था आवश्यक है। इनलेट के रुप में खुली नाली या 2 इंच व्यास की पाइप व्यवस्था हो सकती है तथा आउटलेट रेस–वे के गहरे क्षेत्र में नीचे की तरफ 3 इंच व्यास के पाइप द्वारा या स्लुइस गेट के आकार में बनाया जाता है। रेस–वे की तली वाले फर्श में इन्लेट से आउटलेट की तरफ 3 प्रतिशत का ढलान आवश्यक है, जो कि रेस–वे की सफाई तथा पानी के बहाव में सुविधाजनक है। रेस–वे में पानी का जलस्तर उथले भाग की तरफ कम से कम 80 से०मी० आवश्यक है। इन्लेट की व्यवस्था जल स्तर से लगभग 30 से०मी० ऊपर रखी जाती है। जलस्तर से रेस–वे की दीवारों का लगभग 30 से०मी० ऊँचा रहना आवश्यक है जिससे कि मछलियाँ तालाब से बाहर न कूद सकें। कम जलस्तर रखने से अचानक ऑक्सीजन की कम, जल तापक्रम का बढ़ना या मछलियों को सन बर्निगं की सम्भावना बनी रहती है।

नर्सरी तालाबों की रेस–वे का आकार 15वर्ग मी० (लम्बाई 10मी० तथा चौड़ाई 1.5मी०) रखा जा सकता है जिसमें फ्राई से फिगरलिंग अवस्था का पालन होता है तथा ट्राउट फार्म के लिए फिगरलिंग का स्टाक रखा जा सकता है। प्रजनकों के लिए बड़े आकार का रेस–वे बनाया जा सकता है जिनका आकार 50 वर्ग मी० (लम्बाई 10 मी० तथा चौड़ाई 5 मी०) या 5मी० व्यास के गोल आकार में होता है। रेस–वे निर्माण का लागत को कम करने या सुविधा के अनुसार 500 जी०एस०एम० पॉलीथीन लगाकर पॉली रेस–वे या फ्राइबर ग्लास से FRP रेस–वे भी बनाया जा सकता है। कम जल रिसाव वाली मिट्टी में पर्याप्त पानी की उपलब्धता रहते हुए कच्चे तालाबों में भी ट्राउट पालन किया जा सकता है, जिसमें उत्पादन स्तर काफी कम रहता है। ठण्डे जल की नदियों की छोटी धाराओं को दो तरफ से उपयुक्त जाली से बन्द करके लम्बी रेश–वे के रुप में भी ट्राउट पालन के लिए एक सुविधा बनाई जा सकती है। ट्राउट पालन एक या दो रेश–वे में या फिर बहुत सी रेस–वे में ट्राउट फार्म के रुप में किया जा सकता है। ट्राउट फार्म में रेस–वे का निर्माण लगातार 2–3 की कतार में या फिर एक दूसरे के समानान्तर श्रेणीवद्ध रुप से किया जा सकता है।

अंगुलिकाएं

रेस–वे में संचय करने के लिए, 2–5 ग्रा० आकार की स्वस्थ्य एवं रोगरहित अंगुलिकाओं का पर्याप्त मात्रा में होना आवश्यक है। अंगुलिकाओं का आकार लगभग समान होना चाहिए। छोटी

एवं असमान आकार की अंगुलिकाओं का संचय उचित नही है। अंगुलिकाओं को फार्म पर ही तैयार किया जा सकता है या अन्य स्थान से उचित ढ़ग से जीवित अवस्था मे लाया जा सकता है।

उपकरण

संवर्धन के दौरान कुछ छोटे प्रकार के उपकरणों तथा औजारों की आवश्यकता होती है, जैसे– टब, बाल्टी, मग, रेस–वे सफाई का ब्रश, छोटे आकार का मत्स्य जाल, फीड कन्टेनर, फिड़िंग ट्रे, इत्यादि। बड़े ट्राउट फार्म के लिए छोटे आकार के फिल्टर, एयरेटर फिड मिल, ग्रेडर, फिड ड्रायर, आइस बॉक्स तथा छोटी बड़ी तुलाएं आवश्यक होती है। जल तापक्रम मापने के लिए थर्मामीटर, ऑक्सीजन सिलैण्डर, ऑक्सीजन तथा अमोनिया मापने की किट तथा गम बूट की भी आवश्यकता होती है। लाल दवा (पोटैशियम परमैग्नेट) तथा साधारण नमक भी रखना चाहिए।

3. पालन विधि एवं प्रबन्धन

सुविधा एवं संसाधन के अनुसार ट्राउट पालन का कार्य तीन स्तर पर किया जा सकता है:

(क) एकल या युगल रेश–वे पालन– छोटे स्तर पर एक या दो रेस–वे में लगभग 1 या 2 टन ट्राउट का उत्पादन किया जा सकता है तथा सालाना 1 से 2 लाख रुपये की आमदनी की जा सकती है। इसके लिए अंगुलिकाओं एवं आहार का प्रबन्ध मत्स्य विभाग या अन्य स्रोत से किया जा सकता है। इस प्रकार के व्यवहार को सहायक धन्धे के रुप में अतिरिक्त आमदनी हेतु किया जाता है।

(ख) जीविकोपार्जन परक ट्राउट पालन–

एक कृषक परिवार की आवश्यकता पूर्ति के लक्ष्य के साथ 6–10 रेस–वे में लगभग 8–12 लाख रुपये की सालाना आमदनी के लिए ट्राउट पालन किया जा सकता है। अपनी आवश्यकता के अनुसार छोटी ट्राउट हैचरी (1 लाख आइड ओवा) तथा छोटा फिड मिल (20–40कि०ग्रा० /घ०) भी लगाया जा सकता है अन्यथा अगुलिकाएं एवं आहार की व्यवस्था अन्य स्रोत से की जा सकती है।

(ग) व्यवसायिक ट्राउट पालन– बड़े स्तर पर ट्राउट फार्म बना कर 80 से 160 टन उत्पादन लक्ष्य या एक से दो करोड़ रुपये आमदनी हेतु व्यवसायिक तौर पर ट्राउट पालन किया जा सकता है। इस प्रकार के व्यवस्थित ट्राउट फार्म में ट्राउट हैचरी, फीडमिल आधुनिक उपकरण, परिवहन व्यवस्था के साथ सुचारु प्रबन्धन की आवश्यकता होती है।

अभी तक पर्वतीय क्षेत्रों में एकल रेस–वे पालन या जीविकोपार्जन परक ट्राउट पालन का व्यवहार ही किया जाता है, जब कि व्यवसायिक ट्राउट पालन की भी प्रबल संभावनाएं हैं।

संचय पूर्व रेस–वे की तैयारी

रेस–वे का पानी निकालकर 3–4 दिन सूखने देते हैं। इस अवधि में रेस–वे में आवश्यक मरम्मत भी की जा सकती है। तदोपरान्त लाल दवा, पोटैशियम परमैग्नेट के 1 मिग्रा० / ली० के घोल से रेस–वे की दीवारों एवं फर्श को रगड़कर धो देते हैं तथा वांछित स्तर तक पानी भर देते हैं। संचय पूर्व पानी के तापक्रम तथा धुलित ऑक्सीजन को जानना आवश्यक है।

अंगुलिकाओ का संचय

2–5 ग्रा० वजन की लगभग सामान आकार की अंगुलिकाओं को 60–100 अंगुलिकाएं प्रति घन लीटर पानी में संचय करते हैं। संचय के समय अगुलिकाओं को लाल दवा (पोटेशियम परमैग्नेट) के 1 मिग्रा0 / ली0 के घोल में 5 मिनट तक उपचारित करते हैं तथा पानी के बहाव को तेज रखते हैं।

जल आपूर्ति एवं जलीय गुण धर्म

संवर्धन के दौरान लगातार आवश्यक जल की आपूर्ति आवश्यक है। एकल या युगल रेस–वे के व्यवहार में 2 × 2 × 1.5 मी०

(लम्बाई ×चौडाई × गहराई) आकार का सेटलिंग टैंक रेस–वे के इन्लेट से पहले बनाते हैं इससे पानी से बालू एवं अवांछनीय कचरे का निष्कासन हो जाता है। व्यवसायिक ट्राउट फार्म में बड़े आकार के सेटलिंग टैंक बनाये जाते हैं जो कि कचरा एवं बालू निष्कासन के साथ जल भण्डारण के रुप में भी उपयोगी रहते हैं। बर्फ का पिघला पानी (स्नो मैल्ट) या ठण्डे स्रोत का पानी ही उपयोग किया जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों के ऊपरी ढलान से पानी लिया जाता है ताकि स्वयं ही पानी तेज बहाव के साथ रेस–वे में आता रहता है। ट्राउट पालन के लिए जलीय गुणों का विवरण तालिका में दिया गया है

ट्राउट पालन हेतु उचित जलीय गुण

जलीय गुण	परिमाप
तापक्रम	180 से0ग्रे0
घुलित ऑक्सीजन	7 मिग्रा0/ली0
पारदर्शिता	1.5–1.8 मी0
कार्बन डाई ऑक्साइड	1.5 मिग्रा0/ली0
पी0एच0	6.5 –8
घुलित ठोस पदार्थ	10 मिग्रा0/ली0
क्षारीयता	50–150
अमोनिया	मिग्रा0/ली0
नाइट्रेट	0.05 मिग्रा0/ली0
फास्फेट	0.03 मिग्रा0/ली0

ट्राउट पालन में पानी के तापक्रम की महत्वपूर्ण भूमिका है। सामान्यतः 0–20डिग्री० से०ग्रे० तापक्रम ट्राउट पालन के लिए अनुकूल रहता है। फिर भी, अच्छी बढ़वार एवं अधिक उत्पादन के लिए 13–18 डिग्री० से०ग्रे० तापक्रम रहना आवश्यक है। उचित तापक्रम रहने से मछली ठीक प्रकार से आहार ग्रहण करती है तथा धुलित ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा बनी रहती है। इसके विपरीत अधिक तापक्रम पर मछली तनाव ग्रस्त अवस्था में रहती है तथा सामान्य व्यवहार नही करती है। आमतौर पर 18 डिग्री० से०ग्रे० से अधिक तापक्रम ट्राउट के लिए अनुकूल नही है तथा इस स्थिति में ज्यादा समय तक रहने से मछली मरने लगती है। ऐसी स्थिति में पानी के बहाव को बढ़ाकर कुछ नियंत्रण किया जा सकता है अन्यथा ठण्डे पानी की व्यवस्था आवश्यक हो जाती है। अतः मछलियों की संख्या एवं वजन के अनुसार संवर्धन के दौरान रेस–वे में पानी की आवश्यकता मछली की अवस्था के अनुसार अलग–अलग रहती है। सुविधा के लिए आवश्यक जल की मात्रा को जल बहाव के रुप में समझा जा सकता है। जल बहाव को ली० प्रति मिनट (एल.पी.एम.) में गणना की जाती है। आमतौर पर एक टन मछली उत्पादन के लिए 300 ली० प्रति मिनट पानी की आवश्यकता होती है। गणना के अनुसार प्रत्येक अवस्था के लिए वांछित जल बहाव का विवरण नीचे तालिका में दिया गया है।

अवस्था/उम्र /माह	संचय दर प्रति मी० 3	जल बहाव प्रति रेस–वे (30 वर्गमी0)	
		12 डिग्री सेग्रे०	18 डिग्री से ग्रे०
फ्राई (1–5 ग्रा0) 0.5–2 माह	1000–2500	110	118 ली/मि०
फिगरलिंग (5–25ग्रा०) 2–4माह	100–250	120	270 ली/मि०
तरुण मीन (25–250 ग्रा०) 4–10 माह	60–100	150	240 ली/मि०
टेबल मीन (250–350 ग्रा०) 10–14 माह	60–100	190	300 ली/मि०
व्यस्क मछली (>350 ग्रा0)	30–50	90	150 ली/मि०

आहार व्यवस्था

प्रतिदिन आवश्यकतानुसार मछलियों को खिलाने के लिए आहार की आवश्यकता होती है। मछली की अवस्था के अनुसार अंगुलिका आहार या ट्राउट आहार स्वयं तैयार करके या अन्य स्रोत से व्यवस्था करना आवश्यक है। एक बार में सिर्फ 3 महीने की आवश्यकता का आहार ही रखना उचित है तथा इसका भण्डारण उचित ढ़ग से करना आवश्यक है। अधिक पुराना एवं फफूंदी लगा आहार प्रयोग नही करना चाहिए। रेन्बो ट्राउट मॉसाहारी मछली है। अतः इस मछली की खुराक में उच्च कोटि की प्रोटीन का प्रचुर मात्रा में रहना आवश्यक है। ट्राउट मछली पूरी तरह दिये गये आहार पर पाली जाती है जिसमें 35–40% उत्तम कोटि की प्रोटीन तथा 10–14% वसा का होना आवश्यक है। ट्राउट मछली का आहार, फिशमील सोयाबीन मील, गेहू आटा, स्टार्च, मछली का तेल, ईस्ट मिनरल–विटामिन मिलाकर तैयार किया जा सकता है। अंगुलिकांए एवं ट्राउट आहार को मत्स्य विभाग से प्राप्त जा सकता है।

आकार	प्रोट्रीन	आहार दर वजन का % प्रतिदिन	प्रतिदिन आहार देने की संख्या
< 10 ग्रा0	40%	5–10%	7–8
< 50 ग्रा0	35%	5–6%	3–4
< 50 ग्रा0	35%	2–3%	2–3

उत्पादन

लगभग 10–12 माह में 300–400ग्रा० के आकार की मछलियों को तालाब से निकालकर बेचा जा सकता है। निष्कासन के 1–2 दिन पहले आहार नही देते हैं तथा मछलियों की ग्रेडिंग कर लेते हैं। दूर बाजार में भेजने के लिए बर्फ के साथ पैकिंग की जा सकती है। प्रत्येक रेस–वे (30 वर्ग मी0) से लगभग 1.25 लाख रूपये की शुद्ध आमदनी की जा सकती है। मूल्यवर्धित उत्पाद बनाकर तथा ब्रान्ड नेम "हिमालयन ट्राउट" से और अधिक आमदनी हो सकती है।

मध्य हिमालयी क्षेत्रों में रंगीन मछलियों की बागवानी

आर. एस. पतियाल एवं एम. राजेश

भ.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

विश्व में विभिन्न जलीय पर्यावरण से अब तक लगभग 800 सजावटी मछलियों की प्रजातियाँ पहचानी गयी है, जिनमें से भारत में लगभग 121 सजावटी मछलियां मीठा जल में होने का उल्लेख है। भारतीय जलस्रोत सजावटी मत्स्य विभिन्नता में धनी हैं। भारत के हिमालय क्षेत्रों में सामान्यतः 258 मछलियों की प्रजातियां उपलब्ध हैं जिनमें से लगभग 70 मछलियां, प्रमुख शीतजलीय सजावटी मछलियों की श्रेणी में आती हैं जो कि विभिन्न रंग–रूप के कारण प्रसिद्ध हैं। सजावटी मछलियों को अपने सुन्दर रूप–रंग, आकृति और स्वभाव के अनुसार "जीवित जेवर" भी कहा जाता हैं। यद्यपि सभी मछलियां जिनका आकार विचित्र होता है उनको को भी सजावटी मछलियों की भांति ही पाला जाता है। आजकल सजावटी मछलियों का पालन फोटोग्राफी के बाद दूसरा महत्वपूर्ण शौक बन गया है। भा०कृ० अनु०परि०–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल हिमालय क्षेत्र के शीतजल में वास करने वाले मछलियों के शोध संरक्षण एवं व्यावसायिक उन्नयन के दिशा में शोध कार्य का प्रतिनिधित्व करती है। आम जनता में संरक्षण के प्रति जागरूकता, सजावटी मछलियों का व्यावसायिकरण, मनोरंजन की महत्ता तथा रोजगार की असीम सम्भावनाओं को देखते हुए इसके प्रचार प्रसार के लिए शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल द्वारा स्थानीय देशी मछली (endemic) के साथ–साथ विदेशी (exotic) मछलियों के लिए एक्वेरियम की स्थापना एवं इसके साथ ही एक्वागार्डिनिंग की परिकल्पना को साकार कर किसानों तक पहुंचाया गया है। प्राचीन काल से ही इन सजावटी मछलियों को पालना एक शौक माना जाता है। ये हमारे सामाजिक व धार्मिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। वास्तु शास्त्र के अनुसार भी मछलियों को घर में पालना शुभ माना जाता हैं। कई धार्मिक ग्रन्थों में इसके उल्लेख इस प्रकार हैं:–

हिन्दू धर्म में मान्यता

हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों के अनुसार मछलियाँ हिन्दू धर्म में एक विशिष्ट स्थान रखती है। हिन्दूओं के महत्वपूर्ण देवता विष्णु के 10 अवतारो में से पहला अवतार 'मत्स्य' रूप में पूजा जाता है। मछलियों को मन्दिरों के तालाबों में पूजा जाता है तथा यहां उन्हें संरक्षण भी प्राप्त होता है।

फेंगशुई में मान्यता

इसकी शुरूआत आज से लगभग 3500 वर्ष पूर्व चीन से हुई। बाधाओं को अवरूद्ध व कम करके भाग्य, धन व समृद्धि में बढ़ावा करने को फेंगशुई कहते हैं। चाइनीज फेंगशुई के अनुसार, टैंकों में मछलियों की तेजी गति से विचरण, घरों में घनात्मक ऊर्जा को बढ़ाती है। इसे "ची" कहते हैं। जिसके परिणाम स्वरूप उच्च स्वास्थ्य व धन की बढ़ोत्तरी होती है। आम धारणा है कि घरों में 9 गोल्ड फिश 8 लाल सुनहरी और 1 काली मछली को एक्वेरियम में रखना घरों में अच्छे भाग्य को आमन्त्रित करती है।

बौद्ध धर्म में मान्यता

बौद्ध धर्म में, मछली खुशी का प्रतीक है क्योंकि मछली पानी में स्वतन्त्र रूप से विचरण करती है। बौद्ध धर्म में यह साहस का प्रतीक भी है। दूसरे विश्व युद्ध के बाद से ही मछली पालन एक वैश्विक उद्योग के रूप में जाना जाता है। सन् 1853 में लंदन में एक सार्वजनिक मछलीघर पहली बार प्राणी उद्यान के रूप में बनाया गया था। सर्वप्रथम शीशे के एक्वेरियम में सजावटी मछली रखने का प्रचलन शुरू किया गया था। सजावटी मछली के पालन ने एक वाणिज्य व्यापार का रूप ले लिया है। भारतवर्ष से सबसे बड़ी संख्या में अंलकारिक मछलियाँ (उत्तर–पूर्वी भाग) तथा पश्चिमी घाट (85 प्रतिशत) से निर्यात होती है। भारतवर्ष में लगभग 80 प्रतिशत सजावटी मछलियों का विदेशी बाजार में निर्यात

कोलकाता, मुम्बई तथा चेन्नई से होता है। सजावटी मछलियों का पालन आज दुनिया में सबसे लोकप्रिय शौक बन गया है। विश्व स्तर पर एक्वेरियम मछलियों में बढ़ती रूचि के कारण सजावटी मछलियों के व्यापार में लगातार बृद्धि हो रही हैं हिमालय क्षेत्र में सजावटी मछलियों के व्यवसाय से किसानों के अर्थिक स्थिति में सुधार की आपार सम्भावनाएं है। यह महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसकी सहायता से बेरोजगारी की समस्या को कम किया जा सकता है तथा क्षेत्र एवं किसानों की आय बृद्धि का महत्वपूर्ण स्रोत हो सकता है। सजावटी मछलियों के लिए विविध एवं अनुकूल जलवायु की स्थिति, उपलब्ध जल संसाधन, पर्यटक गंतब्य, होटल व्यवसाय, घर में रखे जाने वाले एक्वेरियम, रिसार्ट/बंगले में मत्स्य बागवानी, बड़े एक्वेरियम घर के व्यापार की सम्भावनाऐं हो सकती हैं। वर्तमान में शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल रंगीन प्रजाति की मछलियों पर कार्य कर रहा है। यहां गारा गोट्यला, कोई कार्प, गोल्ड फिश, टौर चिलिनॉइड, टौर प्युटिटोरा, शाइजोथोरैक्स, बेरिलियस स्पेसीज, निमैचिलस स्पेसीज, राइमस बोला, बेरिलियस बेंडेलिसिज,बेरिलियस बगैरा, सैस्टुरा आदि में कार्य कर रहा है। ज्ञानवर्धन, मनोरंजन संवेदनशीलता एवं व्यवसाय को प्रेरित करने हेतु निम्न सुविधाओं को आम जनता के लिए सुलभ किया जा सकता है :

मत्स्यावलोकन

सुंदर रंग–बिरंगी, चंचल मछलियों को देखने से जो मन को सुखद आनंद की अनुभूति होती है,

उससे दिन–भर की थकान और तनाव अपने आप ही खत्म हो जाती है। यही नही आज के इस कम्प्यूटर युग में बच्चों में एक्वागार्डिनिंग एक्वेरियम के प्रति लगाव इन्हे कम्प्यूटर स्क्रीन से हटाकर उनके प्रकृति प्रेम की भावना को जाग्रत करता है।

मत्स्य बागवानी

कांच घर में दृश्यावलोकन के साथ–साथ प्राकृतिक रूप से तथा छोटे–छोटे बागवानी में मछलियों का पालन एवं अवलोकन एक सुखद अनुभव के साथ–साथ रंगीन मछलियों की दृश्यावलोकन से मत्स्य का अपने आंगन में घरेलू उद्यमशीलता को प्रेरित करता है।

मत्स्य फीडिंग

मत्स्य फीडिंग की अवधारण सदियों पुरानी है। मछलियों का दृश्यावलोकन के साथ ही साथ मत्स्य आहार देना संवेदनाओं को स्फूर्ति प्रदान करता है। विभिन्न शास्त्रों के अनुसार मछलियों को आहार देने से कई बाधाओं का समूल नाश होता है तथा जीवन में सफलनताएं प्राप्त होती है। इसलिए आम लोग ढूंढ ढूंढ कर मछलियों को चारा प्रदान करती है।

मत्स्य स्पर्श (फिश हैंडलिंग)

किसी भी वस्तु को देखने के साथ–साथ ही उस जीव की स्पर्शता पाने को उसको आलिंगन करने, पुचकारने से एक अलग अनुभूति प्राप्त होती हैं साथ ही साथ जीव प्रेम की एक संवेदना संचार होती है। इस तरह जीवों के प्रति लगाव एवं उसके संरक्षण के प्रति प्रेम भावना जागती है। इस अवसर हेतु एक्वा गार्डिनिंग एक्वेरियम को विकसित कर प्रसारित किया जा सकता है।

मछलियों की बागवानी (एक्वा गार्डिनिंग)

सजावटी मछलियों का पालन आज दुनिया में सबसे लोकप्रिय रूचियों में से एक है। विश्व स्तर पर एक्वेरियम में मछलियों को पालना तथा मछलियों में बढ़ती रूचि के कारण सजावटी मछलियों के व्यापार में लगातार बृद्धि हो रही है। आज कल सजावटी मछलियां घरों, होटलों तथा कार्यालयों में अपनी मुग्धता, मनोरंजन तथा सौंदर्य मूल्य के कारण पाली जा रही है। प्राचीन काल से ही इन सजावटी मछलियों को पालना

एक शौक माना जाता रहा है। भारतवर्ष की जलवायु, श्रमिक की प्रचुरता तथा विविधता में धनी होने के कारण यहां सजावटी मछली के उत्पादन की अपार सम्भावनायें हैं। भारतवर्ष से सबसे बड़ी संख्या में अंलकारिक मछलियां उत्तरी, पूर्वी भाग (नॉर्थ ईस्ट रिजन) से निर्यात होती है परन्तु समस्त उत्तर भारत में मछलियों का आयात दक्षिण भारत से ही होता है।

उत्तराखण्ड में सजावटी मछलियों के व्यवसाय से किसानों के अर्थिक स्थिति में सुधार की अपार सम्भावनाएं है। यह महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसकी सहायता से बेरोजगारी की समस्या को कम किया जा सकता है तथा राज्य एवं किसानों की आय वृद्धि का महत्वपूर्ण स्रोत हो सकता है। उत्तराखण्ड की भौगोलिक, सामाजिक स्थिति को देखते हुए सरल प्रबन्धन/ कम रख–रखाव व छोटे से छोटे जगह में घर के आंगन में बिना अतिरिक्त श्रम के पाली जाने वाली उपयुक्त मछलियों का एक पैकेज ऑफ प्रैक्टिस हमारे द्वारा तैयार की गया है जिसमें मनोरंजन, मुग्धता के साथ आय भी प्राप्त की जा सकती है। जिस प्रकार छोटे छोटे बगीचों में रंग बिरंगे फूल लगाये जाते है उसी प्रकार छोटे छोटे तालाबों में रंग–बिरंगी मछलियां पाली जाती है। छोटे सस्ते व मेंटेनेंस फ्री एक्वा बागवानी सजावटी मछलियों के ऊत्पादन से नये आर्थिकिकी दृष्टिकोण को अपनाया जा सकता है ताकि यह एक व्यवसाय के रूप में स्थापित हों। यहाँ पर घर के समीप एक्वागार्डन में मछली पालन हेतु सम्पूर्ण क्रियाविधि कार्यान्वन्यन (Package of practice के बारे में बताया जा रहा है:–

क) तालाब बनाने के लिए आवश्यक सामान की सूची

1. घर के आस–पास बेकार पड़ी भूमी कम से कम 20–30 स्क्वायर फीट अथवा एक चारपाई के साइज के बराबर हो।
2. पानी की उपलब्धता या नल का पानी जो क्लोरिन मुक्त हो।
3. जमीन बहुत कंकड़युक्त न हो तथा छाया वाली जगह न हो।

4. सिल्पोलिन या हाई डेंसिटी 150 हे. का पौलीथीन तालाब के साइज के अनुसार हो।
5. नायलॉन की जाली तालाब के साइज अनुसार ढ़कने हेतु आधा इंच मेस साइज का हो।
5. हैंड नेट तथा तालाब के अनुसार जाल।

ख) बागवानी बनाने की विधि

1. सबसे पहले भूमि का चुनाव करें और कम से कम दो तालाब बनाना प्रबन्धन की दृष्टि से उचित है।
2. उसे आयताकार फूलों के गार्डन के समान अथवा भूमी उपलब्धता के अनुसार लगभग 1.5.सेन्टिग्रेट 2 फिट गहरा खोदे और तलहटी समान रहे उसमें कोई नुकीली चीज ना हो।
3. तालाब के बंधे थोड़ा समानता लिये होने चाहिए।
4. खोदे गये मिटट्री से तालाब का बंधा 2 फिट तक बनाए।
5. पानी का सीपेज होता हो तो अब उसमें पौलीथीन को बिछाये उसे थोड़ा लूज रखे ताकि प्लास्टिक तल से बिल्कुल चिपक जाये या प्लास्टिक बिछाने के बाद छह इंच पानी डाले ताकि पौलीथीन पूर्ण रूप से बैठ जाऐ। इसके बाद बंधे में एक 1/2 इंच का आवश्यकतानुसार निकासी पाइप प्लास्टिक के ऊपर थोड़ा मिटटी दबाकर लगाऐ ताकि आवश्यकता पड़ने पर पानी निकाला जा सके, पौलीथीन के ऊपर लगभग 6 इंच मिटट्री से पौलीथीन को दबाऐं और बंधे सुन्दर दिखे। मिटट्री न फैले इसके लिए दूब या अन्य घास लगाए।
6. अब तालाब के तलहटी में लगभग 4 से 6 इंच खेती वाली मिट्टी डाले और निकासी पाइप /आउटलैट नल तक पानी भर दे।
7. एक दिन बाद कुछ गाय का कच्चा गोबर एक वर्ग मीटर में लगभग 1 किलो के हिसाब से डाले, 15 दिन में तालाब हरा होने लगेगा।

ग) बागवानी में मछली संचय

1. अब तालाब मछली डालने के लिए तैयार है लेकिन मछली डालने से एक दिन पहले 20% पानी को दुबारा भर दें।
2. मछली डालने से पहले पाइप से पानी को 5 मिनट तक शावर करे दें।
3. एक वर्ग फिट में लगभग 1 इंच के 10 –15 मछली डाल सकते है।
4. मछली डालकर जालीदार नेट से ढ़क दे ताकि चिडिया उनका शिकार न कर पाये।

घ) चारा प्रबन्धन

1. बाजार में कई प्रकार के चारा उपलब्ध है तथापि
2. सरसों की खली के साथ पॉलिश मिलाकर दे सकते है।
3. बची हुई रोटियों को सुखाकर उसे भी दे सकते है।
4. चारा रोज दो बार दें लेकिन मात्रा 10 मछलियों में 1 चम्मच के लगभग हिसाब से दे।

ड़) ध्यान देने वाली बातें

1. पानी जैसे ही ज्यादा हरा होने लगे तो पाइप से 50 प्रतिशत तक पानी बदल दें और चारा कम करें
2. पानी लेबेल से कम हो तो पानी दुबारा भरें
3. पानी लगातार डालने की आवश्यकता नही है। रोज जिस प्रकार गार्डन में डालते है 2 मिनट के लिए शावर कर दें।
4. मछली की पूंछ गल रही हो या पेट फूल रहा हो या गलफड़े में चकत्ते बन रहे हों तो उसे तुरंत हटा दें।

इन सब बातों के साथ–साथ परिस्थितिनुसार किसान को अपने विवेक से प्रबन्धन करना होता है। दूसरे चरण में मछलियों से बीज पैदा करना बताया जाएगा।

रंगीन मछलियां पालन की आर्थिकी की

तालाब का प्रकार	आकार	संचयन दर	निर्माण की लागत
आंगन में निर्मित एक्वा बागवानी	10'×3' =30 वर्ग फिट	300	मजदूरी= 400/-+सिलपोलाइन= 1000/-+ बीज= 900/- + आहार = 500/- + अन्य खर्चे 500/– कुल =**3300/-**

उत्पादन

समय/वर्ष	साइज	उत्पादन सख्या	बाजार के थोक विक्रेता को
7 से 79 माह में	साइज लगभग 3 से 4 इंच	260 @रू.25 प्रति मछली ×260=6500/–	रू. 50/– जोड़ा कम से कम

आय और व्यय

1 वर्ष में	6500 -3300=रू. 3200/-	अतः कुल आय लगभग रू. 3200/–होती है उचित प्रबन्धन होने पर और अधिक आय
अर्थात्	रू. लगभग 100 /- वर्ग फिट प्रथम वर्ष में	द्वितीय वर्ष में यह आय और बढ़ जाती है।

कुमायूं में रंगीन मछली पालन की शुरूआतः सफलता की कहानी

किसान द्वारा रंगीन मछली उत्पादन और विक्रय (थोक विक्रेता को)

एक्वा गार्डन में रंगीन मछली का उत्पादन

पौलिथीन बिछाकर एक्वागार्डन तैयार करना

तालाब के बंधे में घास रोपन एवं पानी भरना

मछली के लिए तैयार एक्वा गार्डन

एक्वा गार्डन में रंगीन मछलियों की स्टॉकिंग

मत्स्य पालक उत्पादक संगठन : प्रबंधन एवं विकास

पवन कुमार शर्मा, विजय कुमार शर्मा एवं अमरीश वैद
शेर–ए–कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, जम्मू

भारतीय कृषि परिदृश्य जटिल और विविध है, जो देश की विशाल भौगोलक, जलवायु और सामाजिक आर्थिक विविधता को दर्शाता है। कृषि क्षेत्र भारत की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जनसंख्या के एक महत्वपूर्ण हिस्से को रोजगार देता है और देश की जी.डी.पी. में योगदान देता है। भारत की लगभग 58% आबादी के लिए कृषि आजीविका का प्राथमिक स्रोत है, जो सीधे खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण विकास में योगदान देता है। भारत में अधिकांश खेत छोटे और सीमांत हैं, जिनमें सीमित भूमि है। छोटे किसानो को ऋण, इनपुट, सिंचाई और बाजार के बुनियादी ढांचे तक पहुंच की कमी जैसी विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

भारतीय कृषि में सिंचाई एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिसमें सतही जल और भूजल दोनों स्रोतों का उपयोग किया जाता है। हालाँकि, पानी की कमी, अकुशल सिंचाई पद्धतियाँ और भूजल का अत्यधिक दोहन बड़ी चुनौतियाँ हैं। भारत सरकार कृषि उत्पादकता, आय और ग्रामीण आजीविका में सुधार लाने के उद्देश्य से विभिन्न नीतियों, सब्सिडी और कार्यक्रमों के माध्यम से कृषि का समर्थन करने में सक्रिय भूमिका निभाती है। प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि (पीएम–किसान) योजना, फसल बीमा और मृदा स्वास्थ्य कार्ड जैसी पहल ऐसे समर्थन उपायों के उदाहरण है। भारतीय कृषि को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें भूमिक्षरण, मिट्टी का कटाव, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव, कीट और बीमारी का प्रकोप,फसल के बाद के नुकसान और बाजार की अस्थिरता शामिल हैं। इसके अवतरिक्त, भूमि स्वामित्व, किरायेदारी कानून, और बाजारों और ऋण तक पहुंच से संबंधित मुद्दे क्षेत्र की वृद्धि को बाधित करते हैं। भंडारण सुविधाओं, परिवहन और बाजार सूचना प्रणालियों सहित अपर्याप्त बाजार बुनियादी ढांचा, किसानों की बाजारों तक पहुँचने और उनकी उपज के लिए उचित मूल्य प्राप्त करने की क्षमता में बाधा डालता है। पर्यावरणीय गिरावट को दूर करने, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए टिकाऊ कृषि प्रथाओं को बढावा देने की आवश्यकता की मान्यता बढ रही है। किसानों के लिए उत्पादकता, दक्षता और बाजार पहुंच बढाने के लिए सटिक खेती, कृषि–तकनीक स्टार्टअप और मोबाइल–आधारित विस्तार सेवाओं जैसे डिजिटल कृषि समाधानों में रुचि और निवेश बढ़ रहा है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि, जबकि भारतीय कृषि ने उत्पादन और उत्पादकता के मामले में महत्वपूर्ण प्रगति की है, इस क्षेत्र की सतत् वृद्धि और लाखों छोटे किसानों की भलाई सुनिश्चित करने के लिए अभी भी कई चुनौतियाँ हैं।

मत्स्यपालन

भारत में मत्स्यपालन क्षेत्र देश की अर्थव्यवस्था का एक अभिन्न अंग है, जो लाखो लोगों को आजीविका प्रदान करता है और खाद्य सुरक्षा, पोषण और विदेशी मुद्रा आय में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

भारतीय मत्स्य पालन परिदृश्य के कुछ प्रमुख पहलू निम्नलिखित हैं :

भारत लगभग 7,517 किलोमीटर की विशाल तट रेखा के साथ–साथ नदियों, झीलों, जलाशयों और तालाबों सहित व्यापक अंतर्देशीय जलनिकायों से संपन्न है। जलीय संसाधनों की यह विविधता समुद्री और मीठे पानी दोनों प्रकार

की मछली प्रजातियों की एक विस्तृत विविधता का समर्थन करती है। मत्स्यपालन क्षेत्र भारत के सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 1.07% योगदान देता है और मछुआरों, मछली किसानों, प्रोसेसर, व्यापारियो और मूल्य श्रृंखला में शामिल अन्य लोगों सहित 14 मिलियन से अधिक लोगों को रोजगार प्रदान करता है। भारत दुनिया में मछली के सबसे बड़े उत्पादकों में से एक है, जिसका कुल मछली उत्पादन सालाना 14 मिलियन मीट्रिक टन से अधिक है। उत्पादन का अधिकांश हिस्सा समुद्री मत्स्यपालन से आता है, इसके बाद अंतर्देशी यमत्स्यपालन और जलीय कृषि का स्थान आता है।

भारत दुनिया में समुद्री भोजन के अग्रणी निर्यातकों में से एक है, जो दुनिया भर के बाजारों में जमे हुए झींगा, मछली फिलेट्स, स्क्विड, केकड़ा और प्रसंस्कृत मछली उत्पादों सहित उत्पादों की एक विस्तृत श्रृंखला का निर्यात करता है। समुद्री भोजन के निर्यात से देश को बहुमूल्य विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।

चुनौतियाँ

भारत में मत्स्यपालन क्षेत्र को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें मछली स्टॉक का अत्याधिक दोहन, निवास स्थान का क्षरण, प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव, अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा, फसल के बाद के नुकसान और मछली की गुणवत्ता और सुरक्षा से संबंधित मुद्दे शामिल हैं।

सहकारी उद्यमिता के व्यावसायिक आयाम

सहकारी उद्यमिता आय असमानता, पर्यावरणीय गिरावट और सामाजिक अन्याय जैसी चुनौतियों का समाधान करने के लिए एक आशाजनक दृष्टिकोण प्रदान करती है। साझा उद्यमों की जड़ों का पता प्राचीन सभ्यताओं से लगाया जा सकता है, जहां समुदाय अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए सामूहिक श्रम और संसाधन–साझाकरण पर निर्भर थे। हालांकि, औद्योगिक क्रांति के दौरान भी श्रमिकों द्वारा सामना की जाने वाली कठोर कामकाजी परिस्थियों और शोषण के जवाब में सहकारी आंदोलनों ने आकार लेना शुरू कर दिया था।

आर्थिक गतिशीलता

साझा उद्यम सहयोग, एकजुटता और पारस्परिक लाभ के सिद्धांतों की विशेषता वाले एक अलग आर्थिक ढांचे के भीतर काम करते हैं। पारंपरिक निगमों के विपरीत, जो लाभ अधिकतमकरण और शेयर धारक मूल्य को प्राथमिकता देते हैं, साझा उद्यम सामाजिक और पर्यावरणीय जिम्मेदारी के साथ आर्थिक दक्षता को संतुलित करना चाहते हैं। संसाधनों को इकट्ठा करके,जोखिमों को साझा करके, और अधिशेष को फिर से निवेश करके,सहकारी व्यवयसाय धन और अवसर के समान वितरण को बढ़ावा देते हुए पैमाने की अर्थव्यवस्थाओं (Economies of Scale) को प्राप्त कर सकते है। साझा उद्यमों के प्रमुख आर्थिक लाभों में से एक हाशिए के समुदायों को सशक्त बनाने और बाजार की विफलताओं को दूर करने की उनकी क्षमता है। कम सेवा वाले क्षेत्रों में जहां पारंपरिक व्यवसाय निवेश करने के लिए अनिच्छुक हो सकते हैं, सहकारी समितियां स्थानीय जरूरतों के अनुरूप आवश्यक वस्तुएं और सेवाएं प्रदान करके अंतर को भर सकती हैं। उदाहरण के लिए, समुदाय के स्वामित्व वाली सहकारी समितियां ग्रामीण अर्थव्यवस्थाओं को पुनर्जीवित करने, छोटे किसानों का समर्थन करने और सतत विकास को बढ़ावा देने में सहायक रही हैं। इसके अलावा, साझा उद्यम अक्सर आर्थिक मंदी और वित्तीय संकटों के समय में अधिक लचीलापन प्रदर्शित करते हैं। अल्पकालिक मुनाफे पर दीर्घकालिक स्थिरता को प्राथमिकता देकर, सहकारी समितियां अधिक रूढिवादी वित्तीय प्रथाओं को अपनाती हैं, जैसे कि मुनाफे का पुनर्निवेश, राजस्व धाराओं में विविधता लाना और मजबूत भंडार बनाए रखना। वित्तीय प्रबंधन के लिए यह विवेकपूर्ण दृष्टिकोण साझा उद्यमों को अर्थिक झटके का सामना करने और अपने सदस्यों के हितों की रक्षा करने में सक्षम बनाता है।

मत्स्य पालक उत्पादक संगठन

मत्स्य पालक उत्पादक सठिन (एफ.एफ.पी.ओ.) मछुआरों या मछली किसानों या मत्स्य पालन हितधारकों का एकसंघ या समूह है {किसान उपज टी.सी.एफ.सी. अधिनियम 2020 की धारा 2 (डी)}। इसे केंद्र या राज्य सरकार द्वारा समर्थित किसी भी कानून के तहत पंजीकृत होना चाहिए। एफ.एफ.पी.ओ. का प्राथमिक उद्देश्य एफ.एफ.पी.ओ. का प्राथमिक उद्देश्य मत्स्य पालन मूल्य श्रृंखला व्यवसाय को स्थायी रूप से स्थापित करना है। मत्स्य पालक उत्पादक संगठनों को भारत में निम्नलिखित उद्देश्यों के साथ बढावा दिया जा रहा है:

- मछुआरों और मछली पालकों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाना।
- कुशल, लागत प्रभावी और टिकाऊ संसाधन उपयोग के माध्यम से उत्पादकता बढाना।
- संभावित बाजारो से सम्बन्ध विकसित करके उच्च्य लाभ प्राप्त करना।
- मछुआरों और मछली पालकों की क्षमता को विकसित करना।
- जीवंत और स्थायी आय के अवसर विकसित करना।

मत्स्य कृषक उत्पादक संगठन की प्रमुख गतिविधियाँ

मत्स्य पालक उत्पादक संगठन की संरचना

मैदानी क्षेत्र

मैदानी क्षेत्रों के लिए एफ.एफ.पी.ओ. के सदस्यों की योग्य न्यूनतम संख्या 100 है। "मैदानी क्षेत्र" आमतौर पर अपेक्षाकृत समतल क्षेत्रों को संदर्भित करते हैं, जिनमें पहाड़ियों या घाटियों जैसी भूवैज्ञानिक विशेषताओं का अभाव होता है। इन क्षेत्रों को अक्सर व्यापक मैदानों या तराई द्वारा ऊंचाई में न्यूनतम भिन्नता के साथ चिन्हित किया जाता है।

पहाड़ी और उत्तर पूवी क्षेत्र

पहाड़ी और उत्तर–पूवी क्षेत्रों में एफ.एफ.पी.ओ. के लिए योग्य न्यूनतम संख्या 35 है। पहाड़ी क्षेत्रों को उन क्षेत्रों के रूप में परिभाषित किया जाता है जो औसत समुद्र तल से 1000 मीटर से ऊपर की ऊंचाई पर स्थित होते हैं।

एफएफपीओ के सदस्यों में निम्नलिखित में से कोई भी शामिल हो सकता है:

- मछुआरे
- मछली पालक
- मछली श्रमिक और मछली विक्रेता
- मत्स्य उद्यमी

मत्स्य पालन क्षेत्र से जुड़ा कोई अन्य व्यक्ति जैसा कि मत्स्य विभाग, भारत सरकार द्वारा तय किया जाता है। तथपि, सामाजिक समावेश सुनिश्चित करने के उद्देश्य से लघु एवं सीमान्त मत्स्य पालको, अनुसूचित जातियो, अनुसूचित जनजातियो, महिलाओं तथा अन्य आथक रूप से कमजोर श्रेणियों को शामिल करने पर विशेष ध्यान दिया जाता है। मत्स्यपालन एफ.पी.ओ., कृषि एफ.पी.ओ. के समान, मत्स्यपालन क्षेत्र में आम चुनौतियों का समाधान करने के लिए मछुआरों द्वारा गठित सामूहिक संस्थाएं हैं। यहां उनकी पहचान, सिद्धांतों और मूल्यों और व्यावसायिक आयामों का विवरण नीचे दिया गया है:

मत्स्य पालक उत्पादक संगठन की पहचान

एफ.एफ.पी.ओ. की पहचान छोटे और सीमांत किसानों से जुड़ी है। मत्स्यपालन एफपीओ मछुआरों द्वारा स्थापित और प्रबंधित संगठन हैं, जिनमें छोटे पैमाने के मछुआरे, कारीगर मछुआरे और मछली किसान शामिल हैं।

वे मछुआरा समुदायों के हितों का प्रतिनिधित्व करते हुए तटीय क्षेत्रों, अंतर्देशीय जलनिकायों और जलीय कृषि फार्मों में काम करते हैं।

मत्स्य पालक उत्पादक संगठन के सिद्वांत और मूल्य

मत्स्य पालक उत्पादक संगठन के सिद्वांत और मूल्य निम्नलिखित हैं:

लोकतांत्रिक शासन

कृषि एफपीओ की तरह, मत्स्यपालन एफ.पी.ओ. लोकतांत्रिक तरीके से संचालित होते हैं, जिसमें सदस्य मछुआरों द्वारा सामूहिक रूप से निर्णय लिए जाते हैं।

समावेशिता

मत्स्यपालन एफपीओ समावेशी संगठन हैं, जो लिंग, जातीयता या सामाजिक–आर्थिक स्थित के बावजूद सभी मछुआरों का स्वागत करते हैं। मत्स्यपालन एफ.पी.ओ. अक्सर जलीय पारिस्थतिकी तंत्र के दीर्घकालिक स्वास्थ्य और मछुआरों की आजीविका की व्यवहार्यता सुनिश्चित करने के लिए टिकाऊ मछली पकड़ने और जलीय कृषि प्रथाओं को प्राथमिकता देते हैं।

मत्स्य पालक उत्पादक संगठन के व्यावसायिक आयाम

मत्स्य पालन किसान उत्पादक संगठन (एफ.एफ.पी.ओ.) के व्यावसायिक आयाम संगठन के संचालन, प्रबंधन और रणनीतिक से संबंधित विभिन्न पहलुओं का प्रबंधन करते हैं। एफ.एफ.पी.ओ.के प्रमुख व्यावसायिक आयाम निम्नलिखित हैं:

मछली पकडने का संचालन

संचालन में पारंपरिक मछली पकड़ने या जलीय कृषि सहित मछली पकड़ने की गतिविधियों का प्रबंधन करना, टिकाऊ प्रथाओं का पालन करना, नियमों का अनुपालन सुनिश्चित करना और उत्पादकता का अनुकूलन करना आदि शामिल है।

जलकृषि प्रबंधन

मत्स्यपालन एफ.पी.ओ अपने सदस्यों कि जलीय कृषि प्रबंधन में भी सहायता करते हैं जैसे कि तालाब प्रबंधन, भंडारण, भोजन, जलगुणत्ता प्रबंधन, रोग नियंत्रण और कटाई जैसी जलीय कृषि गतिविधियों की योजना बनाना और उन्हें क्रियान्वित करना। प्रशिक्षण, प्रौद्योगिकी और उपकरण की उपलब्धता के माध्यम से मछली पकड़ने और जलीय कृषि प्रथाओं के सुधार में भी एफ.एफ.पी.ओ अपने सदस्यों की मदद करते हैं।

प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धन

मत्स्यपालन एफ.पी.ओ. मछली प्रसंस्करण गतिविधियों जैसे सफाई, काटने, सुखाने, डिब्बा बंदी करने, मछली उत्पादों में मूल्य जोड़ने और बाजार के अवसरों को बढाने में भी सहायक होते हैं। उत्पाद के विविधीकरण द्वारा जैसे स्मोक्ड मछली, मछली फिललेट्स पकाने के लिए तैयार समुद्री भोजन उपलब्ध कराने में भी एफ.एफ.पी.ओ. अपने सदस्यों की मदद करते हैं।

ब्रांडिंग और प्रमोशन

एफ.एफ.पी.ओ. को अलग–अलग उत्पादो की दृश्यता बढाने और ग्राहकों को आकर्षित करने के लिएएक मजबूत ब्रांड पहचान, पैकेजिंग और मार्केटिंग रणनीतियों का विकास भी करना चाहिए।

बिक्री चैनल

एफ.एफ.पी.ओ. वितरण चैनल को स्थापित कर के, थोक विक्रेताओं, खुदरा विक्रेताओं, नियातकों के साथ साझेदारी करके, या सीधे बिक्री कर के अपने सदस्यों के मुनाफे को बढाने में मदद करते हैं।

मत्स्यपालन एफ.पी.ओ मछली उत्पादों को एकत्रित करते हैं और सामूहिक विपणन की सुविधा प्रदान करते हैं, जिससे मछुआरों को व्यापक बाजारों तक पहुंचने, बेहतर कीमतों को पाने और फसल के बाद के नुकसान को कम करने में सक्षम बनाया जाता है।

बजट एवं वित्तीय योजना बनाना

मत्स्यपालन एफ.पी.ओ. मछली पकड़ने के उपकरण, जलीय कृषि बुनियादी ढांचे, या व्यवसाय विस्तार में निवेश करने के लिए मछुआरों को सीधे या वित्तीय संस्थानों के साथ साझेदारी के माध्यम से ऋण और वित्तीय सेवाओं को प्राप्त करने में मदद करते हैं। इसमें एफ.एफ.पी.ओ. का संचालन, निवेश और व्यय का मार्गदर्शन करने के लिए वार्षिक बजट, वित्तीय अनुमान और नकदी प्रवाह का पूर्वानुमान लगाना शामिल है।

कच्चे माल की खरीद

प्रतिस्पर्धी कीमतों पर विश्वसनीय आपूर्तिकर्ताओं से मछली पकड़ने के उपकरण, जलीय कृषि इनपुट, चारा, बीज, या उत्पादन गतिविधियों के लिए आवश्यक अन्य कच्चे माल की खरीद मत्स्यपालन एफ.पी.ओ. के मुख्य कार्यों में शामिल है। मत्स्यपालन एफ.पी.ओ. मछली पकड़ने के गियर, जलीय कृषि इनपुट और अन्य आपूर्ति की थोक खरीद में मदद करते हैं, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि सदस्यों को उचित मूल्य पर गुणवत्ता वाले कच्चे माल की प्राप्ति हो।

आपूर्तिकर्ता और खरीदार संबंध

सुचारू संचालन और पारस्परिक रूप से लाभप्रद साझेदारी की सुविधा के लिए आपूर्ति श्रृंखला में कच्चे माल के आपूर्तिकताओं, सेवाप्रदाताओं, खरीदारों, वितरकों, खुदरा विक्रेताओं और अन्य हितधारकों के साथ मजबूत संबंध बनाने में भी एफ.एफ.पी.ओ. की एहम भूमिका होती है।

गुणवत्तामानक

उत्पाद सुरक्षा, अखंडता और बाजार मानकों के अनुपालन को सुनिश्चित करने के गुणवत्ता मानकों, स्वच्छता प्रथाओं, खाद्य सुरक्षा नियमों और प्रमाणन आवश्यकताओं का पालन भी एफ.एफ.पी.ओ.सुनिश्चित करता है।

विनियामक अनुपालन

एफ.एफ.पी.ओ. अपने सदस्यों को मत्स्यपालन नियमों, पर्यावरणीय कानूनों, श्रममानकों, कराधान, लाइसेंसिंग और मत्स्य संचालन और व्यावसायिक गतिविधियों को नियंत्रित करने वाली अन्य कानूनी आवश्यकताओं का अनुपालन करने में पूरी मदद करता है।

मानव संसाधन प्रबंधन

मानव संसाधन विकास एफएफपीओ का एक महत्वपूर्ण पहलू है। कुशल संगठन समय–समय पर विभिन्न कार्यक्रमों के आयोजन के माध्यम से अपने सदस्यों की क्षमता का निर्माण करते हैं जैसे कि–

स्टाफिंग और प्रशिक्षण

एफ.एफ.पी.ओ. मत्स्यपालन प्रबंधन, जलीय कृषि, प्रसंस्करण, विपणन, वित्त और प्रशासन में विशेषज्ञता वाले योग्य कर्मियों की भर्ती में सहायक होते हैं।

क्षमता निर्माण

एफ.एफ.पी.ओ. अपने सदस्यों क्षमता का प्रशिक्षण द्वारा निर्माण करते हैं, जिससे कृषि प्रथाओं, विपणन और उद्यमिता जैसे क्षेत्रों में वृद्धि होती है। उत्पादकता, व्यावसायिकता और संठनात्मक प्रभावशीलता को बढाने के लिए कर्मचारियों और सामुदायिक हितधारकों के कौशल विकास और क्षमता निमार्ण में भी एफ.एफ. पी.ओ. सहायक होते हैं।

सामुदायिक विकास

मत्स्यपालन एफ.पी.ओ. अक्सर मछुआरा समुदायों की समग्र भलाई में सुधार के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और बुनियादी ढांचे के विकास सहित सामुदायिक विकास पहल में संलग्न होते हैं। इन व्यावसायिक आयामों को प्रभावी ढंग से प्रबंधित कर के एफ.एफ.पी.ओ. मत्स्यपालन पर निर्भर समुदायों के विकास और जलीय संसाधनों के संरक्षण में योगदान करते हुए अपनी प्रतिस्पर्धात्मकता, स्थिरता और सामाजिक–आर्थिक प्रभाव में सुधार करते हैं।

संविदात्मक समझौते

खरीदारों, आपूर्तिकताओं और सेवा प्रदाताओं के साथ अनुबंध, समझौते या साझेदारी

स्थापित करें जिसमें जोखिम– साझाकरणतंत्र शामिल हैं, जैसे मूल्य स्थिरताखंड, मात्रा प्रतिबद्धताएं, या पारस्परिक क्षति पूर्ति प्रावधान।

आकस्मिक योजना

संभावित जोखिमों और व्यवधानों, जैसे वैकल्पिक सोर्सिंग व्यवस्था, आपदा तैयारी उपाय, या व्यवसाय निरंतरता योजनाओं को संबोधित करने के लिए आकस्मिक योजनाएं और आपातकालीन प्रतिक्रिया प्रोटोकॉल विकसित करें।

प्रौद्योगिकी को अपनाना

निर्णय लेने में सुधार, परिचालन जोखिमों को कम करने और उत्पादकता बढाने के लिए मौसम पूर्वानुमान प्रणाली, जीपीएस ट्रैंकिंग डिवाइस या रिमोट मॉनिटरिंग टूल जैसे प्रौद्योगिकी समाधानों में निवेश करें।

प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण

जोखिम पहचान, प्रबंधन और शमन रणनीतियों में कौशल में सुधार करने के लिए मछुआरों के सदस्यों और कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण कार्यक्रम प्रदान करें, जैसे मछली पकड़ने के संचालन या वित्तीय प्रबंधन कार्यशालाओं के लिए सुरक्षा प्रशिक्षण।

हितधारकों के साथ राजस्व या लाभ साझा करना

- प्रोत्साहनों को संरेखित करने, सहयोग को बढावा देने और जोखिमों और पुरस्कारों को साझा करने के लिए मछुआरों के सदस्यों, कर्मचारियों, निवेशकों और सामुदायिक भागीदारों सहित हितधारकों के साथ राजस्व–साझाकरण या लाभ–साझाकरण तंत्र स्थापित करें।
- पारदर्शी और न्यायसंगत लाभ– साझाकरण व्यवस्था विकसित करें जो एफएफपीओ गतिविधियों और परिणामों में प्रत्येक हितधारक के योगदान, जोखिम और हितों को प्रतिबिंबित करें।
- वैकल्पिक वित्त पोषण मॉडल का पता लगाएं, जैसे राजस्व–आधारित वित्त पोषण या निवेशकों के साथ राजस्व–साझाकरण समझौते, जहां रिर्टन एफ.एफ.पी.ओ. राजस्व या लाभप्रदता से जुड़ा हआ है, हितधारक जुड़ाव और समर्थन को प्रोत्साहित करता है।
- मजबूत जोखिम प्रबंधन प्रथाओं को लागू करने और राजस्व या लाभ साझाकरण के माध्यम से सहयोगी साझेदारी को बढावा देकर,एफएफपीओ लचीलापन बढा सकते हैं, पारस्परिक विकास को बढावा दे सकते हैं और इसमें शामिल भी हितधारकों के लिए सतत विकास परिणाम प्राप्त कर सकते हैं।

निष्कर्ष

यह मछली किसान उत्पादक संगठन मछलीपालन करने वाले समुदायों को मूल्यवान अंतर्दृष्टि,संसाधन और सहायता प्रदान करने में अहम भूमिका निभाता है। जल कृशि क्षेत्र वैश्विक खाद्य मॉगों को पूरा करने और आर्थिक विकास को बढाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इस संदर्भ में एफ.एफ.पी.ओ. सतत् विकास, सामुदायिक सशक्तिकरण और पर्यावरणीय प्रबंधन को बढावा देने वाली महत्वपूर्ण संस्थाओं के रूप में उभर रही हैं। माहीगीरों, उत्पादकों और हितधारकों को एक साथ लाकर, एफ.एफ.पी.ओ. आधुनिक जलीय कृषि की जटिलताओं से निपटने के लिए आवश्यक सामूहिक शक्ति और सहयोगात्मक भावना का उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

हिमालयी क्षेत्रों में रेन्बो ट्राउट का संवर्द्धन

आर.एस. पतियाल, राजेश एम. एवं बीजू सैम कमलम्
भा. .अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

परिचय

शीत जल संसाधनों का सदुपयोग करने के लिए, तेजी से बढ़ने वाली और आर्थिक रूप से व्यवहार्य प्रजातियों का पालन आरंभ किया गया है, जिसमें कार्प और ट्राउट की प्रजातियां शामिल हैं। रेनबो ट्राउट (ऑन्कोरिंकस माइकिस) एक समशीतोष्ण क्षेत्र (ठंडे पानी) की मांसाहारी मत्स्य प्रजाति है, जिसे बिल्कुल साफ एवं ऑक्सीजन युक्त पानी की आवश्यकता होती है। इस प्रकार यह यह हिमालयी राज्यों की जल प्रणालियों के लिए उपयुक्त है। यूरोप, उत्तरी अमेरिका, चिली, जापान और ऑस्ट्रेलिया मुख्य उत्पादक देश हैं।

भारत में रेनबो ट्राउट के पालन की बहुत संभावनाएं है क्योंकि ट्राउट उच्च मूल्य वाली प्रजातियों में से एक है तथा घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय दोनों बाजारों में इसकी मांग अधिक है। उपयुक्त तापमान सीमा (5 डिग्री से 18 डिग्री सेल्सियस) के कारण जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश और लद्दाख राज्यों में ट्राउट की खेती आम है। इन राज्यों ने आवश्यक मात्रा एवं गुणवत्ता में पानी की उपलब्धता के आधार पर ट्राउट उत्पादन के लिए एक अच्छी तरह से विकसित बुनियादी ढाँचा स्थापित किया है अर्थात् झरनों और हिम/हिमनदों से निकलने वाली धाराओं से। भारत में ट्राउट की खेती की बहुत अधिक संभावना है। इन राज्यों में ठंडे पानी के पर्याप्त संसाधन हैं और ये ट्राउट जैसी उच्च्य मूल्य वाली ठंडे पानी की मछली के संवर्द्धन के लिए उपयुक्त हैं। रेसवे में ट्राउट का पालन मछली पालन का एक पारंपरिक तरीका है जो विशेष रूप से मछली के अण्डों के उत्पादन के लिए उपयोगी है। इस विधि में पानी की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए एक निरंतर जल प्रवाही प्रणाली का उपयोग किया जाता है। तालाबों की तुलना में रेसवे में पर्यावरण और पानी की मात्रा के मापदंडों का प्रबंधन करना आसान होता है। बहता पानी पालन इकाइयों से अपशिष्टों को बहा देता है और मछलियों को सक्रिय होने के लिए भी मजबूर करता है, जिससे मछलियों के बेहतर अस्तित्व में मदद मिलती है। रेसवे में उथले पानी में मछलियों को सरलतापूर्वक देखा जा सकता है ताकि आहार / बीमारी की समस्याओं को तुरंत ठीक किया जा सके। रेसवे सिस्टम में आम तौर पर मछलियों को चारा एवं प्रग्रहण में सरलता रहती है, साथ ही मछली की बीमारी से संबन्धित समस्याओं का पता लगाना एवं उसका समाधान करना संभव हो जाता है। दूसरे शब्दों में, रेसवे में, मछलियों को चैनलों में रखा जाता है जिनमें पानी लगातार बहता रहता है। पानी की मात्रा और प्रवाह दर को मछलियों के आकार और घनत्व के अनुसार समायोजित किया जाता है। आहार को पानी में मिलाकर या चैनलों में छिड़ककर दिया जाता है। मछलियों को नियमित रूप से बीमारियों और परजीवियों के लिए निरीक्षण किया जाता है।

रेनबो ट्राउट एक प्रकार की Salmónidos (सैल्मोनिड) मछली हैं,। प्राकृतिक जल स्रोतों में रेनबो ट्राउट प्रजनन करती हैं। मादा रेनबो ट्राउट एक बार में 8,000 तक अंडे दे सकती हैं। रेनबो ट्राउट में प्रोटीन, ओमेगा –3 फैटी एसिड और

विटामिन डी का अच्छा स्रोत हैं। पारंपरिक रेसवे प्रणाली के अलावा आजकल पुर्नजल संचरण प्रणाली (RAS) में भी ट्राउट पालन किया जा रहा है। रेसवे में ट्राउट पालन की तुलना में, पुर्नजल संचरण जलकृषि प्रणाली (RAS) कई फायदे प्रदान करती है। ये फायदे संसाधन प्रबंधन, रोग नियंत्रण और उत्पादन क्षमता जैसे कारकों को ध्यान में रखते हुए महत्वपूर्ण हैं। पुर्नजल संचरण जलकृषि प्रणाली (RAS) के कुछ प्रमुख लाभों इस प्रकार हैं :

- **कम पानी का उपयोग**
  रेसवे सिस्टम लगातार ताजे पानी के प्रवाह पर निर्भर करते हैं, जबकि RAS 90% तक पानी को फिर से परिचालित और पुनः उपयोग करता है। यह सीमित जल संसाधनों वाले क्षेत्रों या सूखे की अवधि के दौरान एक महत्वपूर्ण लाभ है।

- **बेहतर जल गुणवत्ता नियंत्रण**
  पुर्नजल संचरण जलकृषि प्रणाली अपशिष्ट उत्पादों जैसे अमोनिया को निकालने और ईष्टतम ऑक्सीजन स्तर बनाए रखने के लिए निस्पंदन प्रणालियों का उपयोग करता है। यह ट्राउट के लिए एक स्थिर और स्वस्थ वातावरण बनाता है, जिससे तनाव कम होता है और बेहतर वृद्धि को बढ़ावा मिलता है।

- **रोग का कम जोखिम**
  पुर्नजल संचरण जलकृषि प्रणाली बंद प्रणाली हैं जो बाहरी स्रोतों के साथ पानी के आदान–प्रदान को कम करती हैं। यह उन रोगजनकों और परजीवियों के प्रवेश को रोकने में मदद करता है जो मछली में बीमारी पैदा कर सकते हैं।

- **वर्ष भर उत्पादन**
  पुर्नजल संचरण जलकृषि प्रणाली पानी के तापमान और अन्य पर्यावरणीय कारकों के सटीक नियंत्रण किया जा सकता है। यह मौसमी बदलावों की परवाह किए बिना, पूरे वर्ष ट्राउट के निरंतर उत्पादन को सक्षम बनाता है।

- **अधिक मछली घनत्व**
  रेसवे की तुलना में पुर्नजल संचरण जलकृषि प्रणाली प्रति इकाई आयतन में अधिक घनत्व वाली मछलियों को समायोजित कर सकता है। यह कम जगह में अधिक उत्पादन प्राप्त करने में सहायक होता है।

- **पर्यावरण के अनुकूल**
  RAS प्रणाली जल निर्वहन को कम करती है और संभावित रूप से नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करके बिजली प्राप्त कर सकती है, जिससे यह जलकृषि को और अधिक टिकाऊ बनाती है।

- **बेहतर आहार दक्षता**
  RAS का नियंत्रित वातावरण अनुकूलित आहार व्यवस्थाओं की अनुमति देता है, जो संभावित रूप से बचे हुए भोजन को कम करता है और समग्र उत्पादन क्षमता में सुधार करता है।

कुल मिलाकर, पुर्नजल संचरण प्रणाली पारंपरिक रेसवे की तुलना में ट्राउट पालन के लिए अधिक गहन और नियंत्रित दृष्टिकोण प्रदान करता है। हालांकि RAS के लिए प्रारंभिक निवेश लागत अधिक हो सकती है, लेकिन संसाधन प्रबंधन, रोग नियंत्रण और उत्पादन क्षमता के संदर्भ में दीर्घकालिक लाभ ट्राउट पालकों के लिए इसे एक उपयुक्त विकल्प बना सकते हैं।

रेनबो ट्राउट के बारे में रोचक तथ्य

मीठे पानी की मछली

रेनबो ट्राउट उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी भाग में तेज धारा वाली ठंडी नदियों और झरनों में पाई जाने वाली मीठे पानी की एक सुंदर मत्स्य

प्रजाति है। ये रूस में भी पाई जाती हैं और दुनिया के कई अन्य हिस्सों में, जिनमें यूरोप, एशिया, दक्षिण अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया शामिल हैं, को इनको ले जाया गया है।

रेनबो नाम का राज

इस मत्स्य प्रजाति को उनका नाम उनके किनारों पर चमकने वाले रंगीन रंगों से मिलता है। ये रंग मछली की उम्र, लिंग और रहने की जगह के आधार पर बदल सकते हैं। रेनबो ट्राउट में आम तौर पर हरे–नीले रंग की पीठ, चांदी जैसा पेट और गुलाबी या लाल पार्श्वीय पट्टी होती है। उनके शरीर पर कई छोटे काले धब्बे भी होते हैं।

मांसाहारी शिकारी

रेनबो ट्राउट मांसाहारी मछली हैं जो विभिन्न प्रकार के कीड़ों, क्रस्टेशियंस और छोटी मछलियों को खाती हैं। वे मौका देखकर खाने वाली होती हैं और जो भी मिलता है उसे खा लेती हैं।

मछुआरों की पसंदीदा

मछली पकड़ने के शौकीनों के लिए रेनबो ट्राउट एक लोकप्रिय शिकारमाही (आखेट) योग्य मछली है। वे अपनी लड़ने की विशेषता एवं अपने स्वादिष्ट मांस के लिए जानी जाती हैं। रेनबो ट्राउट काफी बड़ी हो सकती हैं, कुछ तो 40 इंच लंबाई और 40 पाउंड वजन तक वाली भी होती हैं। हालांकि, औसतन रेनबो ट्राउट बहुत छोटी होती है, जो आमतौर पर लगभग 12–20 इंच लंबी होती है।

पर्यावरण के रक्षक

जलीय पारिस्थितिकी तंत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। वे कीड़ों और अन्य छोटी मछलियों की आबादी को नियंत्रित करने में मदद करती हैं। वे बड़ी मछलियों, पक्षियों और स्तनधारियों के लिए भोजन का एक स्रोत भी हैं।

रेनबो ट्राउट का उत्पादन चक्र

प्री–स्टॉक प्रबंधन

फ्राई/फिंगरलिंग आने से पहले बीज पालन टैंक को साफ किया जाना चाहिए। टैंक की तैयारी पूरी होने के बाद, पानी की आपूर्ति की जाँच की जानी चाहिए। ट्राउट पानी के तापमान में बदलाव के प्रति संवेदनशील है, खासकर जब यह ठंडे से गर्म होता है। मछली जितनी छोटी होती है, उतनी ही संवेदनशील होती है, और विशेष रूप से गर्म थर्मल शॉक के लिए अतिसंवेदनशील होती है। इसलिए, सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए परिवहन पानी के तापमान को धीरे–धीरे 0.6°से.ग्रे./मिनट के चरणों में बढ़ाना या कम करना महत्वपूर्ण है। रेसवे में पानी का ईष्टतम वेग छोटी मछलियों के लिए 3–4 सेमी/सेकंड (1.3–1.7 मी/मिनट) और बड़ी मछलियों के लिए 5–10 सेमी/सेकंड (2.3–5 मीटर/मिनट) होता है।

स्टॉक के बाद प्रबंधन

भौतिक–रासायनिक मापदंड एवं स्वच्छता ट्राउट मत्स्य उत्पादन को सफल खेती की ओर ले जाती है :

अधिकतम तापमान : 18°C
घुलित ऑक्सीजन : 5-7 से 100 मिग्रा./ली
अमोनिया : मिग्रा./ली.
हाइनेस : 50-200 मिग्रा./ली.
पी.एच :
ट्राउट के लिए एक तटस्थ अथवा थोड़ा क्षारीय पी.एच सबसे अच्छा है। विकास के लिए 6.5- 8.5 का ईष्टतम पी.एच स्तर आदर्श होता है।

गदलापन

ट्राउट की खेती के लिए बिना किसी संदूषण के साफ पानी की आवश्यकता होती है। हालाँकि, Secchi Disc में गदलापन 30 सेमी से अधिक नहीं होना चाहिए।

स्वच्छता

ट्राउट पालन में सफाई एक बहुत ही महत्वपूर्ण कारक है। मछली को समय–समय पर डिप ट्रीटमेंट के माध्यम से 10% फॉर्मेलिन या 4 पीपीएम $KMnO_4$ घोल से साफ और कीटाणुरहित किया जाना चाहिए। संक्रमित मछली को तुरंत टैंक से निकाल देना चाहिए और यदि कोई

बीमारी हो तो उसके बारे में किसी मत्स्य विशेषज्ञ से परामर्श करने के लिए उचित सावधानी बरतनी चाहिए।

रेनबो ट्राउट पालन रेसवे

पुर्नजल संचरण प्रणाली (आर.ए.एस.)

बीज भंडारण

मछली के बीज को ईष्टतम तापमान वाले पानी में ले जाया जाना चाहिए। उचित अनुकूलन के पश्चात मछली के बीज को छोड़ना भी महत्वपूर्ण है। इसलिए जिस बाल्टी या बेसिन में मछली स्थानांतरित की जाती है, उसे उचित अनुकूलन के लिए उस पानी में डूबा होना चाहिए जहाँ मछली छोड़ी जाती है।

चारा (फीड)

सरकारी / निजी स्तर पर निर्मित वाणिज्यिक ट्राउट फीड उपलब्ध रहता है। बेहतर

विकास के लिए अंगुलिकाओं (फिंगरलिंग्स) को उनके शरीर के वजन का 4–6% चारा खिलाना आवश्यक होता है, लेकिन खिलाने के शेड्यूल का पालन करने के लिए पानी के तापमान पर उचित ध्यान दिया जाना चाहिए। 10–12° C के पानी के तापमान की सीमा पर, 6% का फीडिंग शेड्यूल ईष्टतम होता है, लेकिन जब यह 15°C तक बढ़ जाता है, तो फीडिंग शेड्यूल को घटाकर 4% कर दिया जाना चाहिए। प्रति माह ईष्टतम विकास दर 30–40 ग्राम होती है।

ट्राउट पालन के लिए पुर्नजल संचरण प्रणाली (आरएएस) के प्रमुख घटक

- इंसुलेटेड शेड / बिल्डिंग
- फीड और सहायक उपकरण के लिए स्टोर सह कार्यालय
- पंप हाउस
- ग्रो आउट टैंक : गोलाकार सीमेंट के टैंक / एफआरपी टैंक जिसमें पानी के निकास व आपूर्ति हेतु उचित व्यवस्था हो
- कीचड़ के लिए निपटान टैंक
- जल संग्रहण (Sump) टैंक
- ओवरहेड टैंक
- मैकेनिकल (हाइड्रोलिक) फिल्टर, ग्लास ऊन / मलमल का कपडा तथा फिल्टर मैट
- पंप और मोटर
- पावर जनरेटर
- कीचड़ संग्रहण हेतु व्यवस्थित संग्राहक
- बायो–फिल्टर, यूवी इकाइयाँ
- विद्युतीकरण
- स्वचालित फीडर (जहाँ भी आवश्यक हो)
- वातन प्रणाली (वायु / ऑक्सीजन), कार्बन डाइऑक्साइड ट्रैपर सिस्टम (degasser)
- जल परीक्षण किट
- जल आपूर्ति प्रणाली, बोरवेल आदि (जहाँ भी आवश्यक हो)
- इनपुट जैसे बीज, चारा, योजक और पूरक, बिजली / डीजल, मानव शक्ति आदि।

पुर्नजल संचरण प्रणाली (आरएएस) में ट्राउट पालन हेतु मॉडल तकनीकी विनिर्देश

शीर्षक	विवरण
प्रजाति का नाम	रेनबो ट्राउट (ओंकोरहिन्कस मायकिस)
आरएएस टैंक का आकार	16 मीटर x 2 मीटर x 2 मीटर
प्रभावी पानी की गहराई	1.5 मीटर
टैंकों की संख्या	4
प्रभावी पानी की मात्रा	50 घन मीटर (4 टैंकों के लिए कुल 200 घन मीटर)
औसत गहराई	1.5 मीटर
स्टॉकिंग आकार	10 ग्राम
स्टॉकिंग घनत्व	100 घन मीटर
स्टॉकिंग संख्या	20,000 (प्रत्येक आरएएस टैंक में 5000 संख्या)
जीवित रहने की दर	80%
एफसीआर	1रू1.5
पालन अवधि/फसल अवधि	8–10 महीने
बीज की लागत	रु.10/बीज
चारे की लागत	रु.110/किग्रा
कुल आवश्यक चारा	6 मीट्रिक टन
कटाई के समय आकार	250 ग्राम
अपेक्षित कुल बायोमास	4 मीट्रिक टन
बिक्री मूल्य	रु.500/किग्रा

रोजगार की दिशा में अलंकारिक मात्स्यिकी

[1]संजय कुमार छिम्वाल एवं [2]अमित कुमार जोशी
[1]राज्य मत्स्य विभाग अल्मोड़ा, (उत्तराखण्ड)
[2]भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

सजावटी रंग–बिरंगी मछलियॉं चाहे घरों में रखी हों अथवा स्कूलों, व्यावसायिक प्रतिष्ठानों, होटलों, अस्पतालों या फिर पर्यटक स्थलों के बागों आदि में, सभी के मन को तो भाती हैं। एकाग्रता में इनके क्रियाकलापों को निहारने से एक तरह की आत्मीय शांति का अहसास भी होता है। विश्व के कुछ देशों में इनकी घरों में उपस्थिति शुभ और लाभकारी भी मानी जाती है। इस विषय में मनोचिकित्सकों का भी मानना है कि कुछ विशेश तरह के मानसिक रोगों से ग्रस्त लोगों के पास एक्वैरियम की उपस्थिति इनके उपचार में काफी सहायक सिद्व होती है। एक्वैरियम घर में अन्य पालतू जानवरों की अपेक्षा कम खर्चीला, अल्प देखरेख तथा थोड़ी सी जगह में रखा जा सकता है। हमारे देश में एक्वैरियम में पाली जाने वाली मछलियों का शौंक देश की आर्थिक उन्नति के साथ बढ़ता ही जा रहा है। इसके परिणाम–स्वरूप विविध तरह की इन सजावटी मछलियों की मॉग बाजारों में दिनों–दिन बढ़ रही है। इन मछलियों की व्यावसायिक स्तर पर खेती कर अच्छी आमदनी अर्जित की जा सकती है।

मछली प्रजनन और पालन की जानकारी से पूर्व यदि इस रोचक व्यवसाय के इतिहास पर नजर डालें तो पाते है कि रंगीन मछलियों को एक्वैरियम में रखने का चलन सन् 1853 में हुआ। इसके साथ ही संसार के बड़े–बड़े शहरों में वृहद एक्वैरियमों का निर्माण शुरू हुआ जिनकी संख्या लगभग 500 से ज्यादा तक पहुँच चुकी है। इन वृहद आकार के एक्वैरियमों में कुल प्रयोग की जाने वाली रंगीन मछलियों का एक प्रतिशत रंगीन मछलियों के का बाजार शौकीन लोगों पर निर्भर रहता है। आकर्षक, चटकीले, विविध तरह की ऑखें, पूँछ, पंख, मुँह वाली मछलियॉं सभी उम्र, जाति, धर्म के लोगो को अपनी ओर खींचती है। परिवहन आदि सुविधाओं के विस्तार से अब देश के किसी भी भाग में रंगीन मछलियों के शौकीन लोगों को मनपंसद मछलियॉं प्राप्त हो जाती है।

भारत में रंगीन मछलियों को पालने का इतिहास ज्यादा पुराना नहीं है। यह ब्रिटिश राज्य में शुरू हुआ। समय के साथ रंग–बिरंगी मछलियों को घरों में रखने की ओर रूझान बढ़ता गया। अब यह एक शौक के साथ धन अर्जित करने का साधन भी बन गया है। छोटे शहरों, कस्बों आदि में एक्वैरियम दुकानों का खुलना इस उद्यम की बढ़ती लोकप्रियता और मॉग को संकेत देती है।

रंगीन मछलियों का विश्व बाजार

वस्तुतः सन् 1980 के दशक से सजावटी मछलियों के बाजार में अधिक वृद्वि देखी गयी है। पूरे विश्व में इनका 4.5 बिलियन अमेरीकी डालर का व्यापार होता है और यह प्रतिवर्ष लगभग 10 प्रतिशत की वृद्वि दर से बढ़ रहा है। विश्व खाद्य और कृषि संगठन की सन् 2000 की रिपोर्ट के अनुसार सजावटी मछलियों का विश्व व्यापार नौ बिलियन डालर का रहा जिसमें खुरदरा तीन बिलियन डालर का था। इसमें एक्वैरियम में पाली जाने वाली सभी तरह के जीव सम्मलित हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका इसका सबसे बड़ा बाजार है। यहां 500 मिलियन डालर की मछलियां विभिन्न देशों से आयात की जाती है। इसके बाद यूरोपीय यूनियन देश और जापान आते है। अनुमानों के अनुसार अमेरिका के कुल 90 मिलियन घरों में से 7.2 मिलियन घरों में से 7.2मिलियन घरों में (8प्रतिशत) एक्वैरियम में मछलियॉं पाली जाती है। नीदरलैंड विश्व का एक्वैरियम मछलियों के शौकीनों का देश माना जाता है। यहां 20 प्रतिशत से भी अधिक लोगों के घरों में रंग–बिरंगी सजावटी मछलियां पाली

जाती है। जापान में यह 10 प्रतिशत (1.2 मिलियन घरों में) है जो विश्व का तीसरा सबसे बड़ा देश है। इसी तरह ब्रिटेन के 15 प्रतिशत घरों में रंगीन मछलियॉ पाली जाती है। अमेरिका में कुल आयात की जाने वाली रंगीन मछलियों का 80 प्रतिशत भाग एशिया से और अन्य 20 प्रतिशत दक्षिणी अमेरिकी देशों से प्राप्त किया जाता है। इन रंग–बिरंगी मछलियों में 85 प्रतिशत मीठे पानी में प्रजनन करती हैं और 15 प्रतिशत खुले प्राकृतिक स्थानों से पकड़ी जाती हैं। विभिन्न तरह के अध्ययनों से प्राप्त जानकारी के अनुसार यद्यपि मीठे पानी की मछलियों की मॉग अधिक है लेकिन धीरे–धीरे एक्वैरियम शौकीन लोगों में समुद्री रंगीन मछलियों का पालने का रूझान देखा जा रहा है। जहां एक ओर थाइलैंड़, हांगकांग,जापान, मलेशिया जैसे देश मत्स्य प्रजातियों का प्रजनन करवा कर इनकी आपूर्ति करते हैं वहीं दूसरी ओर फिलीपीन्स, इंडोनेशिया और श्रीलंका जैसे देश समुद्र से प्राप्त मछलियों की आपूर्ति करते हैं। यूरोपीय यूनियन के देशों के बाजार में 1994 तक लगभग 80 से भी अधिक देशों ने इन मछलियों का निर्यात किया। इसमें 42.5 प्रतिशत भागीदारी एशिया के देशों की 9.3 प्रतिशत इजराइल और 8.4 प्रतिशत चेक गणराज्य की रही। इसी दौरान करीब 50 देशों ने जापान को 100 मिलियन डालर की रंगीन मछलियां निर्यात की। वर्तमान में रंगीन मछलियों के सकल विश्व बाजार में 50 प्रतिशत से अधिक की भागीदारी एशिया के देशों द्वारा की जाती है। इसमें सिंगापुर (30 प्रतिशत), हांगकांग (7.6 प्रतिशत), थाइलैंड (7.0प्रतिशत), इंडोनिशिया (6.9 प्रतिशत), फिलीपींस (5.1 प्रतिशत), मलेशिया (3.3प्रतिशत) एवं जापान (2.5 प्रतिशत) प्रमुख हैं। अकेले सिंगापुर प्रतिवर्ष 76 मिलियन डालर इस उद्यम से 100 करोड़ रूपये कमा रहा है। भारतीय समुद्री उत्पाद निर्यात प्राधिकरण के अनुमानों के अनुसार भारत से 5 करोड़ रूपये मूल्य की अलंकारिक मछलियॉ वर्ष 2000–01 में जापान, सिंगापुर, चीन आदि देशों को निर्यात की गयी।

मीठे जल की प्रमुख सजावटी मछलियाँ

हमारे देश में उपलब्ध प्राकृतिक जलीय संसाधन प्रचुर विविधता से परिपूर्ण है। इनमें 100 से भी अधिक स्वदेशी मत्स्य प्रजातियां पायी जाती है। इतनी ही तरह की अभ्यागत प्रजातियां भी नियंत्रित परिवेश में प्रजनन कराई जा सकती है। सिंगापुर, श्रीलंका, मलेशिया, इंजोनेशिया और कई अफ्रीकी क्षमतावान देशों की तुलना में भारत में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन रंगीन मछलियों के उत्पादन और निर्यात की असीम संभावनाओं को दर्शाता है। रंगीन मछलियों की अनेकों प्रजातियां, जिसमें

सस्ती गप्पी से लेकर कीमती नियौन ट्रेटा, शौकीन लोगों द्वारा बहुत पसंद की जाती हैं। इस तरह की मछलियां अब छोटे–छोटे कस्बों, शहरों आदि में भी मिलने लगी है। सजावटी मछलियों के प्रजनन के लिए कोई विशेष उपकरणों अथवा सुविधाओं की आवश्यकता नहीं पड़ती है। जगह आदि का निर्धारण जरूरी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जा सकता है। इनके संवर्धन और उत्पादन के लिए मछलियों के व्यवहार, खान–पान की जरूरतों आदि का ज्ञान होना भी आवश्यक होता है। इस तरह की जानकारी एक्वैरियमों की नियंत्रित देखभाल करते–करते प्राप्त हो जाती है। संवर्धन टैंको की जलीय गुणवत्ता में तापमान, पौधे, प्रकाश आदि महत्वपूर्ण कारक हैं जो स्पॉनिंग और सही तरह के रखरखाव में सहायक होते है। अधिकतर प्रचलित प्रजातियां तीन–चार सें.मी. लंबी होती है,अतः एक 24"× 15" एक्वैरियम में भिन्न –भिन्न रंगों, आकृतियों और स्वभाव की 25–30 मछलियां रखी जा सकती हैं।

एक्वैरियम में रखी जाने वाली मछलियां मुख्यतः दो तरह का प्रजनन व्यवहार दर्शाती हैं। पहली तरह की अंडा उत्पन्न करती है जिन्हें ओवीपेरस भी कहा जाता है तथा दूसरी तरह की प्रजातियां सीधे शिशु मीनों को जन्म देती हैं जिन्हें ओवो–विवीपेरस के नाम से भी जाना जाता है। कुछ मत्स्य प्रजातियां अंडा देने के बाद उनकी हिफाजत करती हैं जैसे अंडों को छुपाकर रखना। कुछ अंडों को मुंह में रखकर सेकती हैं। कुछ प्रजातियों में बार्ब, रासबोरा, गोल्डफिश, टेट्रा, डानीओं, फाइटर और गोरामी आदि मुख्य हैं। शिशु मीनों को सीधे जन्म देने वाली मत्स्य प्रजातियों में गप्पी, प्लेटी,मोली और सोर्डटेल हैं।

बार्ब अंडा देने वाली प्रजाति है। रोजी बार्ब, टाईगर बार्ब, स्ट्राइप्ड बार्ब, अरूली बार्ब, डानीओ आदि भारतीय सजावटी मत्स्य प्रजातियां हैं, जिनका प्रजनन और पालन आसानी से किया जा सकता है। रासबोरा में ब्लैक लाईन रासबोरा, ग्लोलाइड रासबोरा, और सिजर टेल आदि मुख्य है। गोल्डफिश सबसे अधिक प्रचलित रंगीन मत्स्य प्रजाति है, जो सुनहरे रंग के लाल काले से एलबिनो और सिजर टेल आदि मुख्य है। गोल्डफिश सबसे अधिक प्रचलित रंगीन मत्स्य प्रजाति है जो सुनहरे रंग के लाल काले से एलबिनो और भिन्न–भिन्न रूप से तथा रंगों में जैसे पीछे के पंख का दो भागों में विभक्त होना, शरीर पर अंडे की जैसी आकृति, मोती की तरह शल्कों का चमकना, मोटी त्वचा वाली, बिना ऊपर वाली पंख के पारदर्शी चमकीले रंग वाली आदि में मिलती है। यह मछली 20 सेमी. तक लंबी होती है। लगभग आठ सें.मी. लम्बी गोल्ड फिश लैंगिक परिपक्वता प्राप्त कर लेती है।

छोटी–छोटी टेट्रा तीन–आठ से.मी. आकार तक की होती है। यह दक्षिणी अमेरिका से उत्पन्न हुई हैं। प्रमुख प्रजातियों में ब्लैक विन्डो, टेट्रा, फ्लेम टेट्रा, नियौन टेट्रा, लैमन टेट्रा करडिनल टेट्रा, ग्लोलाइक टेट्रा, हैड एंड टेल लाइट टेट्रा, प्रीटी टेट्रा इत्यादि हैं।

वेटा स्पैलंडंस सामान्यतः साइमिज फाइटिंग फिश अनेक रंगों जैसे हरा, लाल, नीला, एलबीनो और कभी–कभी दो–तीन रंगों के शेड्स में उपलब्ध होती है। आकर्षक रंग और सख्त प्रजाति के होने के नाते यह शौकीन लोगों को खूब भाती हैं। नर में चमकीले रंग के साथ सुंदर छितरे पंख होते हैं और यही इनकी पहचान है। यह नर मछलियों की उपस्थिति में थोड़ा हिंसक हो जाती है। इसी तरह एंजेल फिश, जो काले, मटमैले और सम्मिश्रित रंगों में मिलते हैं, बहुत लोगों द्वारा पसंद की जाती है। लंबे लहराते नीचे के पंख, दबा हुआ सिर और रौबदार चाल देखने में अत्यधिक सुंदर लगती है। गोरामी में तीन स्पॉट वाली पर्ल गोरामी, मूनलाईट गोरामी, सांप की तरह त्वचा वाली गोरामी, ड्रारफ गोरामी, जाइंटगोरामी, चाकलेट गोरामी और किसिंग गोरामी प्रमुख प्रजातियां

हैं। फाइटर और गोरामी घोसला बनाने वाली प्रजातियों में प्रमुख हैं। इनमें अतिरिक्त श्वसन अंग की उपस्थिति की वजह से यह ज्यादा कठोर होती है। अलंकारिक मछलियों के दूसरे वर्ग की मछलियां बच्चे अथवा शिशु मीनों को जन्म देने वाली है। बच्चों के विकास में लगभग चॉर सप्ताह का समय लगता है और वह मछलियों के अंदर होता है। गप्पी, ब्लैक मोली, सोर्ड टेल, प्लेटी आदि सामान्यतः एक बार में लगभग 50—60 बच्चों को जन्म देती है, परन्तु कुछ बड़ी सोर्ड टेल 100 तक नन्हीं मछलियों को जन्म देती है। इनके प्रजनकों के सही और समुचित रख—रखाव तथा नियमित प्राकृतिक और संपूरक संतुलित आहार के प्रयोग से एक मादा मछली से 100 बच्चे तक प्राप्त किये जा सकते हैं। जैसे ही बच्चे बाहर आते हैं उन्हें मादा प्रजनक मछली से अलग कर लिया जाता है। इससे मादा मछली इनका भक्षण अथवा इनको नुकसान नहीं पहॅुचा पाती है।

व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन

वर्तमान में निर्यात होने वाली मुख्यतः मीठे पानी की अलंकारिक मछलियॉ हैं। लगभग 85 प्रतिशत उत्तर—पूर्वी राज्यों की तथा शेष 15 प्रतिशत विदेशी प्रजनित प्रजातियों की है। अतिरिक्त समुद्री मछलियों का लक्ष्यद्वीप के कोरल रीफ इलाके में, अंडमान निकोबार द्वीप समूह और मनडापम इलकों में इनका प्रचुर भंडार है। आवश्यक सुविधाओं के अभाव में इनका उत्पादन नहीं हो पा रहा है जिससे निर्यात बहुत कम है। रंगीन मछलियों के निर्यात के लिए प्रमुख बाजारों में अमेरिका 41.12 प्रतिशत, जापान 21.17 प्रतिशत, ब्रिटेन 13.64 प्रतिशत,जर्मनी 8.03 प्रतिशत नेपाल, सिंगापुर, थाइलैंड, सउदी अरब, बेल्जियम, फ्रांस, इटली, नीदरलैंड़, स्विटजरजैंड़ तथा स्वीडन आदि भी प्रमुख हैं। कोलकाता निर्यात का सबसे बड़ा केन्द्र है। अभी तक कुल 350 पूर्ण रूप से और 2000 आंशिक रूप से रंगीन मछलियों का प्रजनन करने वाले कार्यकर्ता पूरे देश में इस व्यवसाय से जुड़े हैं।

बड़े शहरों में रंग—बिरंगी मछलियों का व्यवसाय

रंगीन मछलियों का प्रजनन और पालन महानगरों में और इसके इर्द—गिर्द केंद्रित है, लेकिन हाल के दिनों में आंध्र—प्रदेश, उड़ीसा, केरल, असम, बिहार और अन्य जगहों में रंगीन मछलियों के उत्पादन का कार्य किया जा रहा हैं। यह कार्य केंद्रीय संस्थानों, विश्वविद्यालयों, राज्यों के मत्स्य विभागों और अन्य विभागों के प्रशिक्षण तथा सलाह द्वारा संभव हुआ है।

कोलकाता को देश का एक्वैरियम मछलियों के प्रवेश द्वारा के रूप में जाना जाता है। यहां की प्रजननित मछलियों को पूरे देश में वितरित किया जाता है। कोलकाता में शिशु मीनों को जन्म देने वाली मछलियां, गोल्ड फिश, गोरामी आदि तरह की रंगीन मछलियों का प्रजनन किया जाता है। इसके अतिरिक्त एक्वैरियम के शौकीन लोग स्वयं भी विदेशी मछलियों को लाकर उनके प्रजनन की कोशिश करते हैं। इसके लिए कम से कम दो—चार तक की संख्या में सीमेंट टैंक बनाकर लोग आसानी से इन मछलियों को होल सेलर को बेचा जाता है जिन्हें देश के भिन्न—भिन्न भागों को भेजा जाता है। उत्पादन में ट्यूबीफिक्स और जंतु प्लवकों की प्रचुरता सकारात्मक भूमिका निभाती है, लेकिन जीवित खाद्य को देने से पूर्व उपचारित मछलियों न करने से अनेक तरह की बीमारियॉ भी देश के भिन्न—भिन्न जगहों तक पहुंच जाती हैं।

विदेशी मत्स्य प्रजातियों के अलावा कोलकाता स्वदेशी रंगीन मछलियों के निर्यात का भी प्रवेश द्वार है। उत्तर—पूर्व के प्राकृतिक जल संसाधनों से प्राप्त अनेके तरह की प्रसिद्व रंगीन मछलियों को यूरोप और अन्य देशों को निर्यात की जाती है। कुछ निर्यातक जिनका अपना फार्म है इस तरह की पकड़ी गयी मछलियों को संग्रह कर भेजने से पहले अनुकूलित करते है। व्यावसायी इनका प्रजनन भी करवाता है।

चेन्नई में स्थित रंगीन मछलियों के प्रक्षेत्रों में प्रायः शिशु मीनों को जन्म देने वाली मछलियों का प्रजनन किया जाता है। जीवित आहार, ट्यूबीफिक्स की कमी के मद्देनजर ब्लडवर्म को जीवित प्राकृतिक आहार के रूप में प्रयोग किया जाता है,जिससे मछलियां जल्दी प्रजनन करती है, कुछ ऐसे भी फार्म है जहां तरह–तरह की गोल्ड फिश का विदेशों को निर्यात किया जाता है। मीठे जल की रंगीन मछलियों के अतिरिक्त समुद्र से पकड़ी गयी मछलियों का भी विदेशी बाजारों में निर्यात किया जाता है। उच्च्य गुणवत्ता की कोई कार्प भी कुछ फार्मों में पैदा की जा रही है। तूतीकोरीन स्थित एक फार्म में अनेक रूप–रंगों की चिचलिड्स उत्पादित कर घरेलू और विदेशी बाजारों में निर्यात की जाती है। ट्यूबीफिक्स को मदुरई शहर से पकड़ कर रेल द्वारा भेजा जाता है।

मुम्बई में अनेकों जगहों पर विशेष और कीमती रंगीन मत्स्य प्रजातियों जैसे एंजेल और डिसकस फिश का प्रजनन किया जाता है। कम जगह तथा अधिक स्थानीय मांग के चलते यह कार्य किया जाता है। टेट्रा मछलियों का भी प्रजनन कार्य अपनाया जाता है, प्राकृतिक आहार की उपलब्धता न होने की वजह से ब्राइन श्रीम्प और संपूरक आहार इन मछलियों को दिया जाता है। शायद यही कारण है कि मुम्बई से प्राप्त मछलियां रोगयुक्त रहती है। मुम्बई के प्रजनन कराने वाले लोगों द्वारा सिल्वर डालर, इमपरर टेट्रा, रमिनोज और नियॉन टेट्रा तथा डिसकस स्टेन प्रजातियों का प्रजनन किया जाता है।

निर्यात और घरेलू बाजार को गति प्रदान करने के लिए कुछ सुझाव

यद्यपि देश में प्राकृतिक जलीय स्त्रोतों और प्रजाति की विविधता बहुत विशाल है, जिनका उचित दोहन नहीं किया गया हैं। निर्यात को लगभग 100 करोड़ रूपये तक प्रतिवर्ष बढ़ाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इन रंगीन प्रजातियों के बारे में विस्तृत अध्ययन करने की आवश्यकता है। इन प्रजातियों के खाने की आदतें, जैविकी आदि के बारे में भलीभांति जानकर इनको बढ़ाया जा सकता है।

- छोटे स्तर के कृषकों को उनके उत्पादन में वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक जरूरी सहायता मुहैया कराना।
- रंगीन मछलियों के रोग उपचार हेतु प्रक्षेत्र पर एक सुसज्जित प्रयोगशाला तथा अन्य उद्देश्यों के लिए चलती–फिरती गाड़ी की व्यवस्था।
- महत्वपूर्ण जगहों पर मछलियों की स्वास्थ्य जांच की सुविधा जिससे कि परिगमन हेतु उपयोग की गयी रंगीन मछलियों की स्वास्थ्य की जानकारी मिल सके।
- रंगीन या अलंकारिक मछलियों के व्यवसाय को भी कृषि का जैसा दर्जा मिलना आवश्यक प्रतीत होता है। जिससे इन किसानों को उसी तरह की छूट, बीमा आदि तरह की सुविधाएं प्राप्त हो सके।
- अलंकारिक मछलियों के बारे में जानकारी, एक्वैरियम प्रबंधन के लिए आवश्यक उपकरण, विभिन्न तरह के प्रबंधन
- तकनीकियां जैसे पोषण और रोग, बाजार की स्थिति, निर्यात क्षमता और संभावनायें, परिवहन, पैकिंग, आयातित देशों की मौसम संबंधी जानकारी, सेमीनार/ कार्यशाला, ट्रेड फेयर प्रदर्शनों आदि का आयोजन जिससे कृषक और उद्यमी दोनों को समान जानकारी उपलब्ध हो।
- संसाधन युक्त संस्थानों/प्रतिष्ठानों द्वारा आवश्यकतानुसार एक्वैरियम के विभिन्न विषयों में छोटी और लम्बी अवधि के प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करना।
- समय–समय पर एक्वैरियम व्यवसाय को बढ़ावा देने के लिए वृहद स्तर पर कार्यक्रमों का स्थानीय आवश्यकतानुसार क्रियान्वयन करना।

प्राकृतिक रूप से पकड़ी गयी रंगीन मछलियों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि

यद्यपि हमारे पास प्रचुर संसाधन उपलब्ध हैं लेकिन इनका सदुप्रयोग विवेकपूर्ण रूप से करना आवश्यक है। जिन प्रजातियों का प्रजनन अभी पूरी तरह सफल नहीं हुआ है, इनको प्राकृतिक जल संसाधनों से अत्यधिक एकत्रित करना सही नहीं है। दक्षिण–पूर्व एशिया के देशों के लिए यह एक चेतावनी है कि अलंकारिक महत्व की मत्स्य प्रजातियां विलुप्त होने के कगार पर हैं। जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ रही है, बड़े–बड़े जल क्षेत्रों का सफाया करके प्राकृतिक रूप में पाए जाने वाली मछलियों का आखेट किया जा रहा है। अतः यह आवश्यक है कि इन कीमती संसाधनों का संरक्षण किया जाए। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण रंगीन मत्स्य प्रजातियों को अंकित कर इनकी जैविकी, रहन–सहन, खान–पान की आदतें रोग और इनकी पहचान, समुचित स्वास्थ्य प्रबंधन इसके साथ–साथ एक्वैरियम निर्माण, लोगों में इसके प्रति शिक्षा तथा जनजागृति की महती आवश्यकता है। इससे आने वाले समय में रंगीन मछलियों की खेती एक सक्षम व्यवसाय के रूप स्थापित होकर अनेकों लोगों को लाभप्रद रोजगार मुहैया करा सकती है।

एक्वेरियम में पाली जाने वाली कुछ सजावटी मछलियां

गप्पी फिश

सिल्वर मोली

प्लेटि फिश

सोर्ड टेल

गोल्ड फिश

फिन टेल फिश

निआन ट्रेटा

बियूनोज ट्रेटा

सर्पी ट्रेटा

टाइगर बार्ब

जेब्रा डेनिओ

टिन फोइल बार्ब

ब्लू गोरामी

फाइटर फिश

पर्ल गोरामी

एंजेल फिश

डिस्कस फिश

फायर माउथ सिलिकिड

हमने स्कूल में जो सीखा है वह सब भूलने के बाद
जो याद रहता है, ज्ञान का निवेश सर्वोतम
भुगतान करता है

–बेंजामिन फ्रैंकलिन

जल कृषि में आणविक मार्कर

प्रमोद कुमार पाण्डेय
भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

आणविक मार्करों के आगमन से आनुवंशिक सुधार कार्यक्रमों के द्वारा जलकृषि के क्षेत्र में क्रांति आ गयी है। चूंकि मानव की बढ़ती आबादी में मछली की बहुत मांग है, इसलिए मछली की आनुवंशिक विविधता में कमी से इसका विनाश हो सकता है। आणविक मार्कर न केवल प्रजनन कार्यक्रमों में बल्कि विभिन्न मत्स्य प्रजातियों की आनुवंशिक विविधता के आधार पर संरक्षण रणनीतियों की योजना बनाने में भी काफी लाभप्रद साबित हुए हैं। इन मार्करों को उनके गुणों के आधार पर विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत किया गया है जैसे प्रमुख और कोडिनेंट मार्कर, टाइप–I एवं टाइप–II मार्कर तथा लिंक्ड और डायरेक्ट मार्कर। जलकृषि में सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले मार्करों में एलोजाइम, रिसट्रिक्सन फ्रैगमेंट लैंथ पॉलिमॉरफ़िज्म (RFLP), रैंडम एम्पलिफ़ाइड पॉलिमॉरफिक डीएनए (RAPD), एम्पलिफ़ाइड फ्रैगमेंट लैंथ पॉलिमॉरफ़िज्म (AFLP), माइक्रो सेटेलाइट, एक्सप्रैस्ड सीक्वेंस टैग (EST) और सिंगल न्यूक्लियोटाइड पॉलिमॉरफ़िज्म (SNP) सम्मिलित हैं। मत्स्य आबादी आनुवंशिकी अध्ययन में SNP व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले मार्कर हैं क्योंकि वे बहुतायत में पाए जाते हैं। माइक्रोसेटेलाइट मार्करों को व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण अनेक मत्स्य प्रजातियों में विकास वृद्धि, रोग प्रतिरोधक क्षमता आदि जैसे वांछनीय लक्षणों के लिए विकसित किया गया है।

माइक्रोसैटेलाइट्स में पॉलिमॉरफ़िज्म इन्फॉरमेसन कंटेन्ट (PIC) महत्वपूर्ण होते हैं जिसके लिए उन्हें बहुत विश्वसनीय माना जाता है। प्राकृतिक एवं हैचरी की मत्स्य आबादी की तुलना करते समय इन आणविक मार्करों का उपयोग किया जाता है, इसलिए मत्स्य संसाधनों के स्थायी प्रबंधन के लिए आणविक मार्करों का उपयोग करना अनिवार्य है।

परिचय

पॉलिमॉरफ़िज्म (बहुरूपता) कुछ अपरिहार्य उत्परिवर्तनों का परिणाम है जो सामान्य कोशिकीय विकास एवं पर्यावरणीय अंतःक्रियाओं के दौरान होते हैं। ये पॉलिमॉरफ़िज्म आबादी के भीतर आनुवंशिक विविधता लाते हैं। इन विविधताओं में आधार प्रतिस्थापन, सम्मिलन, विलोपन या व्युत्क्रम शामिल हैं। जैविक शब्दों में, मार्करों को किसी भी स्थिर परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो कि विरासत योग्य हों और जिनको उचित विधि द्वारा मापा या उनका पता लगाया जा सकता है। जीनोम में, आणविक मार्कर विशिष्ट स्थान पर रहते हैं और एक विशिष्ट जीन या किसी विशेष चरित्र की विरासत से जुड़े होते हैं। इस भूमिका के कारण, इनका व्यापक रूप से आबादी के भीतर और मध्य आनुवंशिक विविधताओं का पता लगाने के लिए उपयोग किया जाता है।

एक व्यापक आनुवंशिक विविधता किसी विशिष्ट अथवा प्रजातियों के चयन के लिए एक प्रमुख आधार है। एसे आणविक मार्करों के विकास के कारण किसी विशिष्ट, परिवार या आबादी के स्तर पर इस तरह की विविधता का पता लगाना संभव हो गया है। ये आणविक मार्कर किसी विशिष्ट के साथ–साथ आबादी की विशिष्टता का अध्ययन करने में सहायक हैं। इन आणविक दृष्टिकोणों ने लाइव स्टॉक जैसे मछलियों, मवेशियों आदि के चयन को आसान बना दिया है। आणविक मार्करों को मोटे तौर पर टाइप I और टाइप II मार्करों में वर्गीकृत किया गया है। इस अध्याय में बाद में इन मार्करों के विवरण के बारे में वर्णित किया जाएगा। विभिन्न मार्करों का उपयोग करके विविधता और विशिष्टता का विश्लेषण किया जाता है तथा यह विभिन्न आनुवंशिक सुधार कार्यक्रमों को

आयोजित करने में मदद करता है, जो F2, बैक क्रॉसिंग, आइसोजेनिक लाइनों के समीप और पुनः संयोजक अन्तः प्रजनित लाइनों का उपयोग करके किया जाता है। लक्षणों की विविध श्रेणी को ध्यान में रखते हुए कुछ चयनित विकल्पों में भ्रामक परिणाम हो सकते हैं जैसे– किसी विशेष जीन के एलील एक लक्षण के लिए फायदेमंद हो सकते हैं लेकिन दूसरों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते हैं। विभिन्न गुणों के कुछ जीन कई बार इतने करीब स्थित होते हैं कि ऐसा प्रतीत होता है कि वे एक ही स्थान से नियंत्रित होते हैं क्योंकि वे एक साथ विरासत में मिले हुए होते हैं। ऐसे युग्म विकल्पियों को जानने से चयन हेतु लाभकारी गुण वाली विशिष्ट प्रजाति की पहचान करने में मदद मिल सकती है।

लिंक्ड जीन के आधार पर, मार्करों को लिंक्ड मार्कर और अनलिंक्ड या डायरेक्ट मार्कर के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। मार्कर, जो रुचि के जीन के करीब होते हैं और एक साथ विरासत में मिले हुए होते हैं, लिंक्ड मार्कर कहलाते हैं। आबादी स्तर पर काम करने के लिए एलील और मार्कर के बीच संबंध जानने की आवश्यकता होती है। दूसरे प्रकार का मार्कर एक कार्यात्मक बहुरूपी जीन होते है जिसमें उसके विशेष गुण में भिन्नता होती है और उन्हें प्रत्यक्ष मार्कर कहा जाता है।

मार्करों का एक अन्य प्रमुख वर्गीकरण उन्हें दो समूहों में विभाजित करता है 'अर्थात कोडिनेंट मार्कर और प्रमुख मार्कर। **(ए) कोडोमिनेंट मार्करः** ये ऐसे मार्कर हैं जो समरूप और विषमयुग्मजी Loci के बीच अंतर करने में सक्षम हैं। जब जैल को वैद्युतकण संचलन के लिए रखा जाता है, तो यह प्रभावी और पीछे हटने वाले एलील्स के लिए अलग–अलग बैंड पैदा करता है और इस प्रकार एक Loci पर जीनोटाइप निर्धारित करता है। कोडिनेंट मार्कर आबादी के आनुवंशिक विश्लेषण में अधिक उपयोगी होते हैं। रिसट्रिक्सन फ्रैगमेंट लैंथ पॉलिमॉरफ़िज्म (RFLP) तथा एलोजाइम कोडिनेंट मार्कर के दो प्रमुख उदाहरण हैं। **(बी) प्रमुख मार्करः** प्रमुख मार्कर एक परिदृश्य प्रदर्शित करते हैं, जिसका विश्लेषण केवल एक विशेष आकार के टुकड़ों की उपस्थिति या अनुपस्थिति के रूप में ही किया जा सकता है। इस विषय में, एलील की आवृत्ति केवल हार्डी–वेनबर्ग संतुलन को मानकर ही प्राप्त की जा सकती है। प्रमुख मार्करों के उदाहरणों में रैंडम एम्पलिफ़ाइड पॉलिमॉरफिक डीएनए (RAPD) एवं एम्पलिफ़ाइड फ्रैगमेंट लैंथ पॉलिमॉरफ़िज्म (AFLP), सम्मिलित हैं।

एक ज्ञात कार्य करने वाले जीन को टाइप–I मार्कर माना जाता है। रिसट्रिक्सन फ्रैगमेंट लैंथ पॉलिमॉरफ़िज्म (RFLP) और एलोजाइम सबसे सामान्य प्रकार I मार्कर हैं क्योंकि RFLP ज्ञात जीन के विश्लेषण के दौरान प्राप्त किया जाता है और ज्ञात कार्य के प्रोटीन को एलोजाइम के रूप में पहचान की जाती है। इसी प्रकार, Expressed Sequence Tag (EST) को भी टाइप-I मार्कर माना जाता है क्योंकि यह एक जीन ट्रांसक्रिप्ट है। जीन स्थानांतरण, प्रमुख प्रजातियों की पहचान तथा जीनोमिक विकास के तुलनात्मक अध्ययन के लिए, टाइप–I मार्करों का अक्सर उपयोग किया जाता है। विकास के क्रम में कई जीन एसे हैं जो जीवों के एक समूह के भीतर संरक्षित रहते हैं। समान–तुलनात्मक जीनोमिक्स के माध्यम से ऐसे जीनों में विविधता और विविधता का विश्लेषण किया जा सकता है। कई प्रयोगशालाओं द्वारा अपने cDNA लाइब्रेरीं का उपयोग करके विभिन्न प्रकार की मछलियों और शंख मछलियों के लिए EST मार्कर विकसित किए गए हैं। EST और ज्ञात जीन का व्यापक रूप से विभिन्न प्रजातियों में माइक्रोसेटेलाइट मार्कर विकसित करने के लिए उपयोग किया जाता है। चूंकि ये माइक्रोसेटेलाइट कोडिंग क्षेत्रों से जुड़े होते हैं, इसलिए वे प्रजातियों और आबादी के बीच उच्च्य हस्तांतरणीयता पैदा कर सकते हैं। कॉमन कार्प, रेनबो ट्राउट और अटलांटिक सैल्मन के मामले में ऐसा विश्लेषण किया गया है।

ऐसे मार्कर जो गुमनाम जीनोमिक क्षेत्रों से विकसित किए गए हैं और उनके कार्य अज्ञात हैं, उन्हें टाइप II मार्कर के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है।

टाइप II मार्कर आमतौर पर गैर–कोडिंग होते हैं और इसलिए वह तटस्थ होते हैं। टाइप II मार्करों के सबसे आम उदाहरण माइक्रोसेटेलाइट्स, रैंडम एम्पलिफ़ाइड पॉलिमॉरफिक डीएनए (RAPD) और एम्पलिफ़ाइड फ्रैगमेंट लैंथ पॉलिमॉरफ़िज्म (AFLP) हैं। सिंगल न्यूक्लियोटाइड पॉलिमॉरफ़िज्म (SNP टाइप II श्रेणी के अंतर्गत आते हैं जब तक कि इसे व्यक्त सीक्वेंसिंग का उपयोग करके विकसित नहीं किया जाता है। इन मार्करों का आबादी के आनुवंशिक अध्ययनों में व्यापक प्रयोग हुआ है जिसमें आबादी के भीतर और आबादी के मध्य आबादी विचलन और जीन प्रवाह जैसे पैरामीटर शामिल हैं। RAPD एक प्रकार II मार्कर है जिसका व्यापक रूप से तिलपिया में पॉलिमॉरफ़िज्म की जॉच करने के लिए उपयोग किया गया है। शुद्ध प्रजातियों एवं उनके संकरण का पता लगाने के लिए डीएनए फिंगरप्रिंट विकसित करने हेतु कैटफिश में भी ऐसा ही विश्लेषण किया जाता है।

मार्करों के गुण

1. **पुर्नउत्पादन क्षमता:** प्राप्त परिणामों की गुणवत्ता को मार्कर की पुर्नउत्पादन क्षमता के रूप में दर्शाया गया है। इसे स्पष्ट करने के लिए, आइए रैंडम एम्पलिफ़ाइड पॉलिमॉरफिक डीएनए (RAPD) मार्कर को एक उदाहरण के रूप में देखें। (RAPD) के लिए प्राप्त प्राइमर लगभग 10 बीपी हैं जो काफी कम है। यह निरर्थक एनीलिंग का कारण बन सकता है। इसलिए, अधिक प्रमाणित डेटा प्राप्त करने के लिए एक उचित मानकीकृत प्रक्रिया का पालन करने की आवश्यकता है।
2. **पॉलिमॉरफिक इनफॉरमेसन कंटेन्ट (PIC):** किसी मार्कर की सूचनात्मकता के मात्रात्मक माप को PIC मान कहा जाता है। संभाव्य संभोग के बाद एक वंशावली से ज्ञानवर्धक परिणाम प्राप्त करके PIC मान प्राप्त किया जा सकता है। इस मान की गणना करते समय अक्सर यह माना जाता है कि कोई पुनर्संयोजन नहीं है, क्योंकि मार्कर स्थान जीन के बहुत करीब स्थित है।
3. **फेनोटाइपिक रूप से तटस्थ:** यदि मार्कर पर्यावरण से प्रभावित नहीं होता है तो इसे फेनोटाइपिक रूप से तटस्थ कहा जाता है। तटस्थ उत्परिवर्तन किसी भी चयनित बल के अधीन नहीं होता। इसके विपरीत, गैर–तटस्थ फेनोटाइपिक मार्करों के माध्यम से अनुकूली विविधताओं का विश्लेषण किया जाता है। आजकल, मत्स्य पालन में विविधता अध्ययन के संबन्ध में अनुकूली विविधताओ का काफी महत्व हैं।

एलोजाइम

एलोजाइम द्वारा एन्कोड (कूटबद्ध) किए गए प्रोटीन एक ज्ञात एंजाइमैटिक फंक्शन प्रदर्शित करते हैं इसलिए ये टाइप I मार्कर के तहत वर्गीकृत किए जाते हैं। llozymes प्रोटीन अथवा एंजाइमों के प्रकार होते हैं जो एक ही स्थान पर अलग–अलग एलील द्वारा कूटबद्ध होते हैं तथा आइसोजाइम के विपरीत होते हैं, साथ ही ये अलग–अलग जगह में जीन द्वारा कूटबद्ध होते हैं। जब प्रोटीन को जैल वैद्युतकण संचलन के अधीन किया जाता है, तो वे आवेश एवं आकार के अनुसार संचालित होते हैं। आनुवंशिक भिन्नता को निर्धारित करने के लिए एलील्स की सापेक्ष आवृत्तियों का उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, हौनफ्लिंग और ब्रैंडल (2000) द्वारा एलोजाइम का उपयोग करके साइप्रिनिड्स का एक विशिष्ट फाइलोजेनेटिक विश्लेषण किया गया है। मांसपेशियों और यकृत के ऊतकों को जेल वैद्युतकण संचलन के अधीन करने के पश्चात, उन्होंने जीनोटाइप से एलील आवृत्ति प्राप्त की और उन्होंने डिस्टेंस मेट्रिसेस (Nei

1972) से टैक्सा के भीतर और बीच की औसत दूरी की गणना की। उनके अध्ययन में पाया गया कि एलोजाइम फाइलोजेनेटिक विश्लेषण के लिए एक प्रभावी सहायता है। एलोजाइम की सीमाएं यह हैं कि यदि प्रोटीन के स्तर में कुछ विविधताओं को छुपाया जाता है अथवा यदि अशक्त एलील्स की उपस्थिति होती है, तो भिन्नता का पता लगाना मुश्किल हो जाता है। एलोजाइम को 1970 के दशक से मछली की आबादी की आनुवंशिकी के वर्कहॉर्स के रूप में वर्णित किया गया है और आज भी मछली की आबादी के बीच इंट्रास्पेसिफिक आनुवंशिक विविधता का विश्लेषण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

रिसट्रिक्सन फ्रैगमेंट लैंथ पॉलिमॉरफिज्म (RFLP)

इस तकनीक का आविष्कार वर्ष 1984 में एलेक जेफरीस ने वंशागत बीमारियों के बारे में अध्ययन करते हुए किया था। इन तकनीकों के माध्यम से प्राप्त डीएनए अंशों के विशिश्ट पैटर्न को वैरिएबल नंबर ऑफ टैंडेम रिपीट (VNTR) कहा जाता है। इसका विकास रिसट्रिक्ट एंजाइमों का उपयोग करके डीएनए को अत्यधिक विशिष्ट स्थलों पर काटकर किया गया है। विश्लेषण का आधार यह है कि दो विदलन स्थलों के बीच की दूरी भिन्न–भिन्न प्रजातियों के लिए परिवर्तनशील होती है। इसलिए खण्डों की लंबाई प्रजातियों में भिन्न होगी। चूंकि एक जीनोम में बड़ी संख्या में सीमित स्थल होते हैं, इसलिए कई खण्ड उत्पन्न होते हैं जिन्हें जैल के माध्यम से फैलाकर अलग किया जाता है। चूंकि इस मार्कर द्वारा हेटेरोजायोसिटी का पता लगाया जा सकता है, इसलिए इसे कोडिनेंट मार्कर के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। वुल्फ एवं सहयोगी द्वारा बतायी गयी मत्स्य प्रजातियों के बीच अंतर करने के लिए RFLP का उपयोग किया गया है (2000)।

रैंडम एम्पलिफाइड पॉलिमॉरफिक डीएनए (RAPD)

यह मार्कर पोलीमरेज चेन रिएक्शन का उपयोग करके विकसित किया गया है। पीसीआर का उपयोग करके प्रवर्धन के लिए अव्यवस्थित ढंग से निर्मित ऑलिगो– न्यूक्लियोटाइड्स का उपयोग प्राइमर के रूप में किया जाता है। इस मार्कर को उत्पन्न करने के लिए जीनोम के पूर्व ज्ञान की कोई आवश्यकता नहीं होती है। चूंकि कोडिंग और गैर–कोडिंग क्षेत्रों के बीच कोई अंतर नहीं होता है, इसलिए इस पद्धति में सेम्पलिंग अधिक अनियमित होती है जो एक बड़ा लाभ है (लिंच एवं मिलिगन 1994)। RAPD फिंगरप्रिंट मछलियों में डीएनए मार्कर विकसित करने का एक प्रभावी तरीका है। RAPD का प्रमुख दोश इसकी प्रकृति है जो हेटेरोजायोसिटी पर कोई जानकारी नहीं देती। साथ ही, कई अध्ययन इस बात का प्रमाण देते हैं कि वे बहुत कम प्रजनन क्षमता प्रदर्शित करते हैं।

हालांकि, हुआंग एवं सहयोगी द्वारा मछली की आबादी के भीतर और बीच में पॉलिमॉरफिज्म की पहचान करने में RAPD की दक्षता की सूचना दी गई है। (2005)। इसका उपयोग भौगोलिक और आनुवंशिक रूप से पृथक आबादी में अंतर करने के लिए किया जाता है (फुच्स एवं सहयोगी 1998)। यह प्रजातियों के भीतर स्थानीय रूपांतरण को सत्यापित करने में मदद करता है जो विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों के तहत आनुवंशिक स्रोत अथवा चयन के कारण हो सकता है। इस संबन्ध में RAPD अत्याधिक लाभप्रद पाया गया है।

गप्पी (शिकानो एवं तानिगुची, 2002) के संबन्ध में विभिन्न तनाव संयोजनों (डायलील और पारस्परिक क्रॉस) के हेटरोसिस को निर्धारित करने के लिए RAPD का भी उपयोग भी किया गया है।

एम्प्लीफाइड फ्रैगमेंट लैंथ पॉलिमॉरफिज्म (AFLP)

इसे सर्वप्रथम वोस एवं सहयोगी द्वारा परिभाषित गया था (1995) AFLP एक पीसीआर–आधारित तकनीक है जो कुछ हद तक एंडोन्यूक्लिएज के साथ संयोजित होती है। अब

ICAR-DCFR

तक सबसे व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले दो रिस्ट्रिक्ट एंजाइम EcoRI और MseI हैं। AFLP के लिए डिजाइन किए गए प्राइमरों में एक मुख्य सीक्वेंस, विशिष्ट सीक्वेंस एंजाइम तथा एक चयनात्मक विस्तार सम्मिलित है। चूंकि, सीक्वेंस अज्ञात होता है और ज्ञात सीक्वेंस के एडेप्टर लिगेट किए गए होते हैं। इस स्थल का उपयोग एम्लीफिकेसन उद्देश्य के लिए प्राइमरों को डिजाइन करने के लिए किया जाता है। एम्लीफाइड उत्पादों को ऑटोरैडोग्राफी के माध्यम से जैल वैद्युतकण संचलन के अधीन करने के बाद देखा जाता है। RAPD और RFLP दोनों की तकनीकों को AFLP में संयोजित किया जाता हैं जो दोनों की कमजोरियों को दूर करती है। यह मार्कर अलग–अलग उपभेदों को अलग करने में सक्षम होता है। बोटेला एवं सहयोगी द्वारा किए गए ऐसे अध्ययन का एक उदाहरण (2002) Photobacterium Damselae में अलग अलग उपभेदों के लक्षण वर्णन को दर्शाता है। चूंकि AFLP मेंडेलियन इनहेरिटेंस पैटर्न का अनुसरण करता है, इसलिए इसका व्यापक रूप से जीन मैपिंग और मार्कर–सहायता चयन में उपयोग किया जाता है। Ictalurus punctatus और Ictalurus furcatus (लियू एवं अन्य 1999) के लिए कई AFLP मार्कर विकसित किए गए हैं AFLP जीनोमिक पौलिमॉरफ़िज्म का पता लगाने के लिए अत्यंत शक्तिशाली तकनीक है। RAPD की तरह, AFLP को भी प्रमुख मार्कर माना जाता है। हालांकि, AFLP Quantapro, Key Genes, आदि जैसे सॉफ्टवेयर्स का उपयोग करके कोडिनेंट स्कोरिंग प्राप्त की जा सकती है।

इस तरह के परिणाम जैल से AFLP बैंड्स को प्रत्यक्ष रूप से हटाकर, उनकी सीक्वेसिंग करके तथा प्रत्येक बैंड के लिए एक निश्चित बिन्दू पर विशिष्ट प्राइमर डिजाइन करके प्राप्त किए जा सकते हैं।

कैलिफोर्निया में देशी और पेश किए गए ट्राउट्स की संकरण स्थिति का विश्लेषण एएफएलपी मार्कर का उपयोग करके किया गया था। ए.एफ.एल.पी. का प्रमुख लाभ इसकी उच्च्व प्रजनन क्षमता है तथा यह अधिक किफायती भी है। हालाँकि, AFLP के लिए PIC स्कोर का कम होना एक दोष है।

अनुक्रम अभिलक्षणित प्रवर्धित क्षेत्र (SCAR)

SCAR को RAPD याAFLP मार्करों से प्राप्त किया जाता है, जिसका उद्देश्य प्रमुख स्कोर को कोडिनेंट स्कोर में बदलना होता है। प्रक्रिया में सरल पीसीआर तकनीक शामिल होती है जिसके लिए प्राइमरों को आर.ए.पी.डी. या ए.एफ.एल.पी. के एम्पलीकॉन्स से प्राप्त सीक्वेंसों से डिजाइन किया होता है। इस तकनीक में आरएपीडी की कमियों अर्थात कम प्रजनन क्षमता को दूर किया जाता है। चूंकि यह बहुत अधिक सुविधाजनक एवं सरल है तथा यह कुशलता से हो सकता है अतः जल कृषि और मत्स्य पालन में इसका उपयोग किया जाता है। GIFT तिलापिया (ली एवं सहयोगी, 2010) में तनाव की पहचान के लिए इसका उपयोग किया गया है। RAPD विश्लेषण से डिजाइन किए गए प्राइमरों का उपयोग करते हुए SCAR मार्कर का उपयोग करके आबादी की आनुवंशिक विविधता का विश्लेषण किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, चियू एवं सहयोगी (2012) द्वारा हाल ही में किये गये एक अध्ययन ने सेरानिड्स के उपभेदों की पहचान की है और उनकी आबादी की आनुवंशिक विविधता का भी विश्लेषण किया है।

माइक्रोएरे तकनीक

माइक्रोएरे को एक सतह के विरूद्ध जांच के लिए डिजाइन किया गया है जिसमें आरएनए से व्युत्पन्न सीडीएनए संकरित होते हैं। ये माइक्रोएरे अस्थायी और स्थानिक पैटर्न प्रकट कर सकते हैं जिससे जीवों को उजागर किया जा सकता है। यह एक साथ कई जीन एवं उनकी विविधताओं और अभिव्यक्तियों को विश्लेषित करने की तकनीक है। मात्स्यिकी और जलीय कृषि के संबन्ध में व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली

व्यूह तकनीक उच्च घनत्व वाली व्यूह रचना है एक्सप्रेस्ड सीक्वेंस टैग (ईएसटी) के रूप में जाना जाता है।

एक्सप्रेस्ड सीक्वेंस अनुक्रम टैग (ईएसटी) (EST)

EST cDNA क्लोन से उत्पन्न होता है तथा इसका उपयोग जीनोमिक सीक्वेंस के मैपिंग और कोडिंग के लिए किया जाता है। EST जीनोम मैपिंग में सबसे उपयोगी उपकरण हैं। इसका उपयोग cDNA माइक्रोएरे विकसित करने के साथ–साथ जीन की अंतर अभिव्यक्ति का अध्ययन करने के लिए भी किया जा सकता है। EST डेटाबेस जलकृषि में जीनोमिक सूचना, लिंकेज मैपिंग और जीनोमिक मैपिंग का एक बहुत ही उपयोगी स्रोत रहा है। AFLP का उपयोग मुख्य रूप से जेबरा मछली के ऑर्थोलॉगस जीन की पहचान करने के लिए किया गया था जो मछलियों की विभिन्न प्रजातियों के अध्ययन में अत्यधिक लाभकारी सिद्ध हुए। प्राइमरों को cDNA सीक्वेंस के माध्यम से डिजाइन किया जा सकता है और पीसीआर के माध्यम से प्रवर्धन के बाद पॉलिमॉरफिज़्म को चिन्हित किया जा सकता है। इसी तरह के विश्लेषण का एक उदाहरण कैटफिश में जीन मैपिंग और मार्कर–असिस्टेड चयन (MAS) हेतु EST के विकास के संबंध में 1999 में लियू एवं सहयोगी द्वारा किया गया। जब प्रजातियों के लिए विकिरण संकर पैनल उपलब्ध होते हैं तो EST और भी अधिक उपयोगी होते हैं। एक विकिरण पैनल में हाइब्रिड कोशिका लाइन होती है। इन कोशिका लाइनों में ऐसी कोशिकाएं भी होती हैं जिनमें लाभकारी कुछ प्रजातियों से विकिरणित गुणसूत्रों के छोटे–छोटे टुकड़े होते हैं। हालांकि जलकृषि में, मत्स्य प्रजातियों के लिए इस तरह के विकिरण पैनलों का विकास दुर्लभ है, क्योंकि पहले से ही महत्वपूर्ण प्रजातियों के बैक्टीरिया कृत्रिम गुणसूत्र (बीएसी) की लाइब्रेरी मौजूद होती है जो बेहतर परिणाम प्रदान करते हैं।

माइक्रोसैटेलाइट्स और मिनीसैटेलाइट्स

माइक्रोसैटेलाइट सीक्वेंसों की एक पुर्नआवृत्ति है जो 2 से 6 बीपी तक होती है और मछली में प्रत्येक 10 केबीपी में एक बार होने वाले गुणसूत्रों पर समान रूप से वितरित होती है। चूंकि एलिलों की संख्या loci में अपेक्षाकृत अधिक है और यह पीसीआर प्रवर्धन के लिए अच्छी तरह से प्रतिक्रिया देता है इसलिए इसे जीनोम अध्ययन (विलियम्स 005) में एक बहुत अच्छा निर्माता माना जाता है। हालांकि, माइक्रोसैटेलाइट्स का उपयोग महंगा और श्रमसाध्य हो सकता है। मिनि सैटेलाइट्स में एक लम्बी पुरावृत्ति होती है और इसका डीएनए फिंगरप्रिंटिंग में उपयोग किया जाता है। फ्लैंकिंग क्षेत्रों के दृश्यों की पहचान पीसीआर प्राइमरों द्वारा की जाती है। इस पद्धति में, 1 बीपी द्वारा भी एलील विभेदन का पता लगाया जा सकता है। मछली में आनुवंशिक मानचित्रण और जनसंख्या आनुवंशिकी का अध्ययन करने के लिए माइक्रोसेटेलाइट सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला उपकरण बन गया है। माइक्रोसैटेलाइट मार्कर की उपयोगिता पूर्णतः विभिन्न प्रकार की सूचना सामग्री (पीआईसी) पर निर्भर करती है, एलिल की संख्या जितनी अधिक होगी, PIC का मान उतना ही अधिक होगा। इस प्रकार, यह एलील्स की संख्या के साथ सीधा संबंध रखता है तथा इनकी आवृत्ति का पता लगाया जाता है। कुछ साक्ष्यों से पता चलता है कि समुद्री मछलियाँ तटस्थ लोकी में दुर्बल आबादी संरचना का प्रदर्शन करती हैं और इन मछलियों में परमाणु माइक्रोसैटेलाइट loci मछली की आबादी में घटे हुए विभेदन स्तर को हल करने में लाभकारी सिद्ध हुई हैं। कई बार यह बताया गया है कि माइक्रोसेटेलाइट loci के उत्परिवर्तनीय गुणों के कारण अनुमान के आधार पर पहले से ही नकारात्मक धारणा रही है। विकास वृद्धि और रोग प्रतिरोध जैसे विभिन्न महत्वपूर्ण लक्षणों से जुड़े मार्करों को विकसित करने के लिए जल कृषि में माइक्रोसैटेलाइट का व्यापक रूप से उपयोग किया गया है। तम्बाक्वी,

कोलोसोमा मैक्रोपोमम पर एक अध्ययन ने कई माइक्रोसेटेलाइट्स की पहचान की, जिसमें जीन से जुड़े एवं अज्ञात मार्कर दोनों शामिल थे। एक कोडिनेंट मार्कर होने एवं मेंडेलियन इनहेरिटेंस पैटर्न को प्रदर्शित करने वाला होने के नाते यह मार्कर बहुत उपयोगी है।

एकल न्यूक्लियोटाइड बहुरूपता (एसएनपी) मार्कर

एकल न्यूक्लियोटाइड पॉलिमॉरफिज्म, जैसा कि नाम से पता चलता है, एक पृथक आधार के प्रतिस्थापन द्वारा बनता है। यह एक बिंदु उत्परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है जो एक विशिष्ट स्थान पर विभिन्न एलिली को जन्म देता है। इस मार्कर का PIC मान माइक्रोसैटेलाइट की तुलना में कम होता है। यह मार्कर आनुवंशिक विविधता का सबसे सटीक प्रमाण देता है। यह मत्स्य प्रजातियों के लिए सबसे व्यापक रूप मे प्रयुक्त होने वाला मार्कर है, क्योंकि ये आनुवंशिक भिन्नताओं का सबसे प्रचुर रूप हैं। SNP जीनोटाइपिंग के लिए उपयोग किए जाने वाले पारंपरिक तरीकों में लिगेशन चेन रिएक्शन (LCR), डायरेक्ट सीक्वेंसिंग, सिंगल स्ट्रैंड कन्फॉर्मेशनल पॉलीमोर्फिज्म एसे (SSCP) आदि शामिल हैं, किंतु पाइरोग्रेडिंग, मैट्रिक्स–असिस्टेड लेजर डिसोर्शन आयनाइजेशन टाइम ऑफ फ्लाइट (MALDI-TOF) मास स्पेक्ट्रोमेट्री रियल टाइम (RT) पीसीआर, आदि जैसी तकनीकों की उन्नति के साथ इस मार्कर का विकास आसान है और परिणामों की सटीक सटीकता प्रदान करता है।

माइटोकॉन्ड्रियल डीएनए

मछलियों के फाइलोजेनेटिक्स और बार–कोडिंग के अध्ययन में mtDNA की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। अपवाद स्वरूप सीप को छोड़कर, mtDNA सेलफिश एवं अन्य सभी मछलियों में मातृ पक्ष से विरासत में मिला है। इसलिए, वैज्ञानिक प्रजातियों के बीच और भीतर विकासवादी संबंधों के पुनर्निर्माण के लिए समय के साथ उत्परिवर्तन का उपयोग कर रहे हैं। टेलोस्ट मछलियों में इस mtDNA का आकार 16,000 से 19,000 बीपीएस के मध्य होता है। Cytb, COI और Cyta जीन को अधिकांशतः फाइलोजेनेटिक विश्लेषण के लिए ध्यान में रखा जाता है। एक अन्य बहुत महत्वपूर्ण क्षेत्र D-Loop है जो जनसंख्या के आनुवंशिकी विश्लेषण में अत्यधिक उपयोगिता वाला एक अति परिवर्तनशील क्षेत्र है। mtDNA का विश्लेषण अधिकांशतः प्रत्यक्ष सीक्वेंस विश्लेषण के माध्यम से किया जाता है। माइटोकॉन्ड्रियल जीनोम का गैर–मेंडेलियन वंशानुक्रम पैटर्न की अपनी एक सीमाएं है।

ट्रांसक्रिप्टोमिक्स

आनुवंशिक विविधता की व्याख्या करने के पारंपरिक तरीकों के अलावा, आबादी संरचना को समझने के लिए जीनोमिक उपकरणों का उपयोग, पर्यावरण परिवर्तन और विविधता सूचकांकों के प्रति इसकी प्रतिक्रिया, संरक्षण जीव विज्ञान में तेजी से प्रगति कर रहे हैं। आबादी के बीच जीनोमिक भिन्नता पर्यावरण के साथ आबादी की अंतःक्रियाओं को नियंत्रित करती है। इसलिए ट्रांसक्रिपटॉमिक्स का उपयोग पारंपरिक आबादी आनुवंशिकी के साथ–साथ पारंपरिक रणनीतियों में भी किया जा सकता है। एक प्रजाति के लिए, जिसके पास कोई पूर्व आणविक जानकारी नहीं है, उसे एक अथवा विशिष्ट जीनोटाइप के बीच भिन्नता की पहचान करने के लिए RNA सीक्वेंसिंग के अधीन किया जा सकता है। ट्रांसक्रिप्टोमिक्स डेटा का विश्लेषण करके विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति सहनशीलता एवं अनुकूलन क्षमता के पीछे के तंत्र को समझा जा सकता है। मूलभूत ट्रांस्क्रिप्टोमिक्स अवधारणाओं में ऊतकों का संग्रह, RNA लाइब्रेरी एवं cDNA लाइब्रेरी का निर्माण और कल्पित सीक्वेंसिंग शामिल हैं। विभेदक अभिव्यक्ति का पता चला है। यह हमें संबंधित मत्स्य प्रजातियों की पर्यावरणीय आवश्यकताओं के प्रबंधन के लिए एक बेंचमार्क प्रदान करता हैं।

एक्वाकल्चर में मार्करों का चयन और उनकी उपयोगिता

कैटफिश, तिलापिया, ट्राउट्स, कार्प्स और शेलफिश जैसी व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण मत्स्य प्रजातियों के लिए कई मार्कर विकसित किए गए हैं, जिनसे जल कृषि क्षेत्र को लाभ हुआ है और साथ ही मत्स्य आबादी के आनुवंशिकी अध्ययन और संरक्षण हेतु जीव विज्ञान के लिए एक रणनीति तैयार की गई है। जीनोम रिसर्च ऑन अटलांटिक सैल्मन प्रोजेक्ट (GRASP) जो कि एक कनाडाई सरकार की पहल है, मार्कर विकास और जीनोम मैपिंग पर जोर देती है। मत्स्य प्रजातियों की पहचान के लिए, अधिकांशतः RAPD मार्कर का उपयोग किया जाता है, क्योंकि यह सस्ता है तथा इससे प्राप्त परिणाम विश्वसनीय होते हैं। हालाँकि, आनुवंशिक विविधता विश्लेषण के लिए अधिक उन्नत दृष्टिकोणों की आवश्यकता हो सकती है। आणविक मार्करों की प्रयोज्यता का एक अन्य पहलू खाद्य श्रृंखला का पता लगाने की क्षमता है। इस क्षेत्र में, प्रसंस्कृत उत्पादों में समुद्री खाद्य प्रजातियों का पता लगाने के लिए AFLP का उपयोग किया जाता है (मालदिनी एवं सहयोगी 2006)। किसी भी प्रजनन कार्यक्रम की योजना बनाते समय या प्रजनकों का चयन करते समय प्रजातियों की संकरण स्थिति का मूल्यांकन करना बहुत महत्वपूर्ण होता है। वांछनीय गुणों में सुधार करने के लिए दो उपभेदों अथवा प्रजातियों को संकर किया जाता है। आणविक मार्करों का उपयोग न केवल जीन प्रवाह का पता लगाने के लिए किया जा सकता है बल्कि संकरण का भी पता लगाने के लिए किया जा सकता है। इस उद्देश्य के लिए जल कृषि में ज्यादातर RAPD और आइसोजाइम का उपयोग किया जाता है। इन मार्करों के प्रयोग से प्रजातियों का ट्रैक रिकार्ड रखने में मदद मिल सकती है जिससे स्टॉक को बनाए रखा जा सकता है। एक मोनोजेनिक विशेषता के लिए एक मार्कर का चयन करना आसान है क्योंकि कुछ शारीरिक प्रदर्शन और जैव रासायनिक मार्ग के आधार पर समूहों के भीतर और बीच के बदलावों का विश्लेषण किया जा सकता है। इस दृष्टिकोण के लिए प्रजातियों और लक्षणों के बारे में गहन जानकारी और ज्ञान की आवश्यकता होती है। लेकिन इस दृष्टिकोण को पॉलीजेनिक लक्षणों पर लागू नहीं किया जा सकता क्योंकि वे कई जीनों द्वारा नियंत्रित होते हैं। ऐसे मामलों में, विशेष लक्षण से जुड़े जीन और उनकी विरासत के पैटर्न का अध्ययन करने की आवश्यकता होती है। यह विधि क्वांटिटेटिव ट्रेट लोकी QTL मैपिंग और लक्षणों की अभिव्यक्ति के लिए जिम्मेदार संबंधित जीन का पता लगा सकती है। QTL मैपिंग के लिए, सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल किए जाने वाले मार्कर माइक्रोसैटेलाइट्स और ESTs. हैं। आबादी संरचना का विश्लेषण करने के बाद QTL में भिन्नता को व्यापक रूप से समझा जा सकता है। QTL की पहचान करने के लिए हाल ही में परिष्कृत तकनीकों का जन्म हुआ है। फिर भी बहुत अधिक प्राकृतिक आबादी में QTL पर एलील आवृत्तियों का विश्लेषण एक प्रश्न बना हुआ है। मार्करों के विकास का संरक्षण आनुवंशिकी के क्षेत्र में बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा है। किसी जनसंख्या में उनके वंशानुक्रम पैटर्न में भिन्नता के निर्धारण का आसानी से विश्लेषण किया जा सकता है। मत्स्य प्रजातियों की बेहतर किस्म विकसित करने के लिए विभिन्न प्रजनन कार्यक्रमों के आयोजन में मार्कर–सहायता प्राप्त चयन का व्यापक प्रयोग होता है। मार्करों के कारण प्राकृतिक एवं तालाबों की आबादी के बीच भिन्नता का ऑकलन और आबादी में अनुवांशिक बाधाओं का अध्ययन करना आसान हो गया है। मार्करों का मत्स्य पालन के क्षेत्र में व्यापक प्रयोग होता है। यह न केवल चयन और प्रजनन कार्यक्रमों के लिए है बल्कि प्रजातियों की पहचान, फाइलोजेनेटिक विश्लेषण और नियोजन संरक्षण रणनीतियों के लिए भी है। इसके आगमन से रोगों का पता लगने की और अधिक संभावना है जो मछलियों में विभिन्न प्रकार के रोगों के प्रकोप से निपटने में सहायक होगा।

भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में शीतजल मत्स्य पालन का भविष्य

प्रमोद कुमार पाण्डेय, अमित कुमार जोशी एवं नीतू शाही

भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

भारत में ताजे पानी की मछलियों में पर्वतीय मात्स्यिकी को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। पर्वतीय क्षेत्रों में जहां भोजन और शिकार की दृष्टि से शीतजल मत्स्य प्रजातियों ने अपने आप को स्थापित कर लिया है वहॉं इसका बहुत अधिक महत्व है। हमारे देश में अनेक जल संसाधन हैं, जिनमें पर्वतीय नदियॉं, नाले, प्राकृतिक झीले, तथा हिमालय एवं पश्चिमी घाट दोनों क्षेत्रो में मानव द्वारा निर्मित बॉंध आदि मुख्य हैं। इनमें बहुत अधिक मात्रा में खाद्य तथा अखाद्य, देशी तथा विदेशी दोनों प्रकार की मत्स्य प्रजातियॉं है। पर्वतीय क्षेत्र की जैविक उत्पादकता अनेक कारकों द्वारा नियन्त्रित होती है, इसलिए तराई क्षेत्रों में जैविक उत्पादकता बहुत अधिक है, जिसे 'फिश बायोमास' के रूप में प्रयोग में लाया जा सकता है। पर्वतीय क्षेत्र में विदेशी–चीनी कार्प वर्ग की मत्स्य प्रजातियां (ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प, कामन कार्प) कुछ स्थानों पर छोटे स्तर पर पाली जाती हैं। इनके साथ–साथ मैदानी भागों में क्रांतिकारी उत्पादन के लिए विख्यात भारतीय मेजर कार्प (कतला, रोहू एवं मृगल) मछलियॉं भी यहॉं की झीलों में पायी जाती है, जहॉं पर इनकी वृद्धि दर उत्साह जनक है। इनके अतिरिक्त स्थानीय सुनहरी महासीर व बर्फानी ट्राउट प्रजातियों की मछलियों के भी मत्स्य प्रक्षेत्रों में पालन पोशण के प्रयास किऐ जा रहे हैं।

भौगोलिक संरचना एवं जलवायु की विविधता, पर्वतीय क्षेत्र में अनेक सूक्ष्म आवास प्रक्षेत्रों को जन्म देती है, जिस कारण क्षेत्र में प्रचुर पादप एवं जन्तु विविधता दिखायी देती है। उपरोक्त विभिन्नता के कारण ही भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक मत्स्य प्रजतियॉं पायी जाती हैं। अभी तक हुए विभिन्न मात्स्यिकी सर्वेक्षणों एवं अनुसंधानों के आधार पर राज्य के पर्वतीय जल स्रोतों से लगभग 80 मत्स्य प्रजातियों की उपलब्धता का पता चलता है जिसमें से 70 प्रजातियॉं पूर्णतः स्थानीय एवं पर्वतीय हैं तथा शेष मैदानी भागों अथवा विदेशों से मत्स्य पालन के प्रयोजनार्थ लायी हुयी हैं।

उपयोगिता के आधार पर पर्वतीय क्षेत्र की मत्स्य प्रजातियों का वर्गीकरण

उपयोगिता के आधार पर पर्वतीय क्षेत्र की मत्स्य प्रजातियों को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है:

आखेट योग्य प्रजातियॉं

पर्वतीय क्षेत्र में उपलब्ध महासीर को विश्व भर के मत्स्य आखेटकों की प्रथम वरीयता प्राप्त है। आकर्षक रंग, बड़े–बड़े सुंदर शल्क, बड़ा सिर, विशाल आकार, विशिष्ट स्वाद, देर तक खराब न होने वाला मांस तथा आखेटकों के चारे से विशेष लगाव व फंसने के बाद चरम सीमा तक संघर्षशील प्रकृति के कारण महासीर की गणना विश्व की प्रमुख आखेट योग्य मछलियों में की जाती है। भारतीय ट्राउट भी अन्य आखेटकों की पसंदीदा प्रजाति है। ताम्र महासीर एवं गहरे रंग की महासीर आदि अन्य आखेट योग्य प्रजाति हैं।

प्रमुख भोज्य प्रजातियॉं

उपरोक्त प्रजातियां आखेट के साथ–साथ भोजन हेतु सर्वथा उपयुक्त व स्वादिष्ट मानी जाती है, इनके अतिरिक्त बर्फानी ट्राउट, छोटी कार्प व बेरिल की अच्छी मांग है।

अलंकारी मत्स्य प्रजातियॉं

पर्वतीय क्षेत्रों में विदेशी–चीनी कार्प वर्ग की मत्स्य प्रजातियॉं (ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प एवं कॉमन कार्प) के अलावा कुछ स्थानों पर छोटे आकार की बहुत आकर्षक, रंग–बिरंगी प्रजातियॉं

भी पायी जाती हैं, जिनका प्रयोग एक्वेरियम प्रजातियों के रूप में किया जा सकता है। चीतल (बोटिया अल्मोड़ी), लाल या गुलाबी बाबी (पुंटियस कोनकोनियस), टिक्टो बार्बी (पुंटियस टिक्टो) सुनहरी बार्बी (पुंटियस जेलियस) आदि प्रजातियों की एक्वेरियम मछली के रूप में बहुत मांग है।

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन का विकास

हिमालयी क्षेत्रों में मत्स्य पालन अभी प्रारम्भिक चरण में है। लेकिन विभागीय मत्स्य पालन गतिविधियों तथा प्रशासन से मिल रहे प्रोत्साहनों के कारण कुछ काश्तकार मत्स्य पालन प्रारम्भ कर चुके हैं तथा अन्य कुछ इस व्यवसाय में रूचि रखने लगे है। इन क्षेत्रों में मत्स्य पालन का विकास, प्रचार एवं प्रसार करने के लिए सूक्ष्म जलवायु आधारित मत्स्य पालन योजनाऐं लागू की जा सकती है। इसके अर्न्तगत स्थान विशेष की सूक्ष्म जलवायु के अनुरूप मत्स्य पालन किया जा सकता है। इस योजना के अर्न्तगत विभिन्न क्षेत्रों में मत्स्य पालन योग्य स्थानों को चिन्हित कर यह कार्य किया जा सकता है।

ट्राउट मछली का पालन पोषण

भारतीय उप महाद्वीप में शीतजल मात्स्यिकी सामान्यतः उत्तर में बृहद हिमालय, हिमालय जल क्षेत्र तथा दक्षिणी पठार (पश्चिमी घाट) के दक्षिणी ढलान वाले जल स्त्रोतों में बहुतायत से पायी जाती है। यद्यपि शीतजल मत्स्य शब्द का संबंध साल्मोनिडी मछलियों एवं जल पारिस्थितिकी से है जो ट्राउट मछलियों के बेहतर जीवन हेतु सामान्य आक्सीजन व तापक्रम का स्तर बनाए रखती है। प्रायः 20 डिग्री से.ग्रे. से कम तापक्रम वाली नदियों, झीलों व अन्य जल स्रोतों में रहने वाली महासीर, स्नो ट्राउट तथा अन्य सामान्य वर्ग की मछलियां भी इस परिभाषा के अन्तर्गत आती है। विभिन्न प्रकार के भौतिक रासायनिक, भू रासायनिक एवं जैविकी तत्व जैसे–जल का तापक्रम, अवमुक्त आक्सीजन, जल वेग, गदलापन, आधार तत्व, पोषण स्तर, आहार उपलब्धता आदि शीतजल की विभिन्न मत्स्य प्रजातियों के वितरण व प्रचुरता को प्रभावित करते है। भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित विभिन्न शीतजल स्रोतों में भिन्न–भिन्न व अनोखी प्रकार की मछलियॉ पायी जाती हैं, जिनमें 258 मत्स्य प्रजातियां जो कि 76 वंश से सम्बन्धित हैं, सम्पूर्ण हिमालयी व दक्षिणी पठारी क्षेत्रों में फैली हुयी है। मुख्यतः स्नो ट्राउट, महासीर, माइनर कार्प, बारील्स, मिन्न्उ, कैटफिश तथा लोचेस आदि देशी प्रजाति की तथा ट्राउट व चाइनीज कार्प विदेशी प्रजाति के अन्तर्गत आती हैं।

आधुनिक मत्स्य संवर्धन की विधाओं में रेनबो ट्राउट पालन पर्वतीय क्षेत्र के किसानों के लिए आमदनी का एक अच्छा साधन होते हुए

ट्राउट मछली

जीविकोपार्जन का एक मुख्य आधार बनता जा रहा है। लगभग 30 वर्ग मी0 के तालाब से 1.27 लाख रूपये की सालाना आमदनी के साथ पर्वतीय क्षेत्रों के मत्स्य पालको का यह एक मुख्य आकर्शण है। पर्वतीय क्षेत्र के मत्स्य पालकों की रूचि एवं ट्राउट पालन की उत्सुकता के फलस्वरूप पिछले एक दशक में हमारे देश का ट्राउट उत्पादन 147 टन से बढ़कर 842 टन तक पहुॅच गया है, जिसमें मुख्य रूप से जम्मू–कश्मीर हिमाचल प्रदेश एवं सिक्किम राज्य की भागीदारी रही है। वर्तमान में इस मछली की मॉंग को देखते हुए हिमालय के इन तीन राज्यों के साथ–साथ उत्तराखण्ड़ एवं अरूणाचल प्रदेश में भी इस मछली के उत्पादन की कई–गुना संभावनाएं हैं। अगले पॉच साल में ट्राउट का उत्पादन बढ़ाकर 10000 टन करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

महासीर मछली का पालन पोषण

सुनहरी महाशीर जिसे वैज्ञानिक रूप से टौर प्युटिटौरा (Torputitora) के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है बड़ी साइप्रिनिड (Cyprinid) है। टौर प्युटिटौरा हिमालय क्षेत्र की बहुमूल्यवान देशी मछली के रूप में स्वीकार की जाती है। मध्य हिमालय क्षेत्र की अधिकांश नदियों, धाराओं सहित आसाम, जम्मू व कश्मीर, सिक्किम, अफगानिस्तान, बंग्लादेश, चीन, बर्मा (मयन्मार), थाइलैंड, कम्बोडिया, लाओस, नेपाल, पाकिस्तान, वियतनाम, इन्डोनेशिया एवं मलेशिया से टौर की लगभग 20 विभिन्न प्रजातियों का पता लगा है। महाशीर हिमालयी देशों में कृषि सहित मात्स्यिकी विकास के लिए एक सम्भावित मत्स्य प्रजाति है। हिमालय से निकलने वाली अनेक नदियों में यह महाशीर पायी जाती है। बहुतयात में उपलब्धता के कारण इसका बहुत आर्थिक महत्व है। महाशीर की तीन उप प्रजातियों टौर मोसाल महानदीकस, टौर खुदरी मालबारीकस एवं टौर खुदरी लौंगिपिनस का भी पता लगा है। आखेटकों द्वारा चौकलेट महाशीर जिसे समान्यतः असम की बोका अथवा कतली महाशीर के रूप में भी जाना जाता है को महाशीर वर्ग में सम्मिलित किया गया है। इस मछली की नियोलियोचिल्स हैक्सागोनोलोपिज (Neolissochilus hexagonolepis) के नाम से वैज्ञानिक रूप में पहचान की गई है।

हिमालयन माहसीर

केन्द्रीय हिमालय क्षेत्र की विभिन्न जल प्रणालियों जैसेः नदियों, धाराओं, झीलों आदि में सुनहरी महाशीर की मात्स्यिकी के विकास की अपार सम्भावनाऐं है। इन मछलियों के बचाव एवं संरक्षण हेतु विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। जल स्त्रोतों का संरक्षण,मत्स्य बीज सम्वर्द्वन, कृत्रिम विधि द्वारा बीज उत्पादन, प्रक्षेत्रों मे मछलियों का पालन–पोषण आदि कुछ ऐसे विशिष्ट तौर–तरीके हैं जिनसे इन मछलियों को फिर से विकसित करके संरक्षण के साथ–साथ मत्स्य आखेट को बढावा दिया जा सकता है और समूचे हिमालय क्षेत्र के आर्थिक ढांचे को मजबूती प्रदान की जा सकती है। शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल ने महाशीर बीज पोषणशाला की स्थापना करके इस क्षेत्र में पहल की है, साथ ही महाशीर प्रजनन की मानकीकृत तकनीकियों के विकास द्वारा इसकी संख्या में वृद्वि का सफल प्रयास किया है।

कार्प मछली का पालन–पोषण

भूरी एवं रेन्बो ट्राउट के पश्चात् भारतवर्ष के पर्वतीय क्षेत्रों में पालन के उद्‌देश्य से एवं अन्य महत्वपूर्ण शीत जलीय प्रजाति कामन कार्प को आयातित किया गया। वर्ष 1939 में सर्वप्रथम कामन कार्प की उप प्रजाति मिरर कार्प (सिप्रिनस कार्पिको स्पीकुलरिस) को श्रीलंका से नीलगिरी

हिमालयन मछली

पर्वतीय क्षेत्र में लाया गया। इस उप प्रजाति को वर्ष 1947 में उत्तरांचल (तत्कालीन उत्तर प्रदेश) की भवाली (जनपद नैनीताल) स्थित मत्स्य हैचरी में संचयित किया गया। तत्पश्चात भवाली हैचरी में मिरर कार्प के प्रजनन तैयार कर प्रजनन कराया गया तथा उत्पन्न बीज को स्थानीय एवं अन्य राज्यों तक पहुंचाया गया। इस हैचरी में उत्पादित मिरर कार्प के बीज को तत्पश्चात हिमाचल प्रदेश ले जाया गया। हिमाचल प्रदेश के विलासपुर तथा कांगड़ा स्थानों में कामन कार्प बीज उत्पादन इकाईयों की स्थापना की गयी। हिमाचल प्रदेश में मिरर कार्प की उपयोगिता को देखते हुए प्रदेश में उत्पादित 500 मिरर कार्प अंगुलिकाऐं वर्ष 1956 में कश्मीर स्थित डल झील में संचयित की गयी। कश्मीर घाटी में विभिन्न जल श्रोत आपस में जुड़े हुए हैं जिस कारण मिरर कार्प इन समस्त श्रोतों एवं

कार्प मछली

झेलम नदी तक फैल गयी। हिमाचल प्रदेश से मिरर कार्प मणिपुर, मेघालय, सिक्किम तथा असम तक पहुंचायी गयी। उत्तर पूर्वी राज्यों (अरुणाचल प्रदेश व मेघालय) के पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित सीढ़ीदार खेतों में धान के साथ कामन कार्प पालन काफी समय से प्रचलन में है।

सिल्वर कार्प प्रजाति का हिमाचल प्रदेश स्थित गोविन्द सागर जलाशय में प्रवेश एवं स्थापन एक रोचक घटना के रुप में जानी जाती है। वर्ष 1971 में हिमाचल प्रदेश के देवली मत्स्य प्रक्षेत्र से 47 सिल्वर कार्प मछलियॉं सतलुज नदी की बाढ़ के पानी में बहकर गोविन्द सागर जलाशय में पहुंच गयी। यह प्रजाति धीरे–धीरे जलाशय में स्थापित हो गयी। गोविन्द सागर जलाशय में भारतीय कार्प की मात्स्यिकी का अच्छा विकास हुआ। अन्य हिमालयी जल श्रोतो में भारतीय मेजर कार्प संचयित करने का प्रमाण नैनीताल जनपद में स्थित झीलों का है। वर्ष 1977 में रोहू, कतला, एवं मृगल बीज भीमताल (86.5 हे.) में डाला गया। इस झील में इन प्रजातियों ने अच्छी शारीरिक वृद्धि की। वर्तमान समय में रेनबो ट्राउट, ब्राउन ट्राउट, ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प, कामन कार्प एवं कार्प प्रजातियाँ विभिन्न जल संसाधनों में उपलब्ध हैं।

शीतजल क्षेत्र में मत्स्य पालन हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की पहल

हमारे देश में पर्वतीय क्षेत्रों शीतजल मात्स्यिकी की महत्ता को स्वीकारते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा वर्ष 1987 में अविभाजित उत्तराखण्ड (उत्तर प्रदेश) के हल्द्वानी में राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान केन्द्र की स्थापना की जो वर्तमान में शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय के नाम से जाना जाता है। अब यह निदेशालय भीमताल (नैनीताल) में स्थित है। यह निदेशालय राष्ट्रीय स्तर पर एकमात्र ऐसी ईकाई है जहां पर शीतजल मात्स्यिकी के क्षेत्र से सम्बन्धित अनुसंधान एवं विकास पर कार्य किया जा रहा है। इस निदेशालय का मुख्य कार्य पर्वतीय क्षेत्रों में जल स्रोतों के संरक्षण एवं प्रबन्धन, मत्स्य पालन तकनीक के द्वारा अधिक उत्पादन एवं वैज्ञानिक तकनीकियों का प्रसार आदि है। इस निदेशालय ने अनुसंधान एवं विकास कार्यक्रमों के माध्यम से पर्वतीय क्षेत्रों की प्रमुख मत्स्य प्रजातियों की जैव विविधता का मूल्यांकन, विभिन्न जल प्रणालियों के मात्स्यिकी संसाधनों के आंकड़ों का संग्रहण, पर्वतीय नदियों की मत्स्य भारवहन क्षमता, सुनहरी महासीर के बीज उत्पादन हेतु जल प्रवाही पोशण शाला का निर्माण, विदेशी ट्राउट के मानकीकृत प्रजनन एवं पालन तकनीक, विदेशी ट्राउट एवं सुनहरी महासीर के लिए प्रयोगिक आहार, मध्य पर्वतीय क्षेत्रों में चाइनीज कार्प का समन्वित पालन, स्नो ट्राउट (असेला) वर्ग की विभिन्न प्रजातियों का कृत्रिम प्रजनन एवं अंगुलिकाओं का उत्पादन, स्नो ट्राउट के अण्डों के उद्‌भवन हेतु सस्ते एवं हल्के इन्क्यूबेटरों का निर्माण, ग्रामीण क्षेत्र में स्थित श्यामला ताल झील में महासीर मात्स्यिकी का विकास तथा आहार निर्माणशाला की स्थापना आदि को पूर्ण किया। यह निदेशालय उत्तराखण्ड सहित ठण्डे पानी के सभी पर्वतीय क्षेत्रों में मात्स्यिकी अनुसंधान एवं विकास के लिए प्रयासरत है। इस निदेशालय के मुख्य उद्‌देश्य निम्नवत हैं :

- शीतजल मात्स्यिकी संसाधनों का आंकलन और उनका संरक्षण तथा प्रबन्धन के लिए रूपरेखा तैयार करना

- स्वदेशी एवं विदेशी मत्स्य प्रजातियों के पालन पोषण एवं विकास के लिए उचित तकनीकियों के विकास हेतु अनुसंधान करना
- वातावरणीय परिवर्तनों का जल–जैव विविधता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना
- विभिन्न संस्थाओं, संगठनों, मत्स्य पालकों को तकनीकी का आदान–प्रदान, शिक्षण–प्रशिक्षण, परामर्श आदि का आदान–प्रदान
- शीतजल मात्स्यिकी और संसाधन प्रबन्धन हेतु अनुसंधान गतिविधियों के लिए मार्ग दर्शक इकाई के रूप में कार्य करना।

शीतजल मात्स्यिकी का भविष्य

शीतजल क्षेत्रों की उपलब्धि इन क्षेत्रों में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग से जुड़ी है। इन संसाधनों के अवैज्ञानिक दोहन से न सिर्फ पर्वतीय क्षेत्रों को खतरा उत्पन्न हुआ है अपितु मैदानी भागों को भी इससे नुकसान हुआ है। इसलिए पर्वतीय क्षेत्रों की उन्नति का कार्यक्रम तैयार करते समय इन संसाधनों के संरक्षण तथा उचित व कुशल प्रयोग पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जिससे स्थानीय जनता को आर्थिक लाभ प्राप्त हो सके। जनसंख्या दबाव के कारण पर्यावरण में परिवर्तन आया है। जैसे–झीलों में प्रदूषण से पानी की मात्रा तथा गुणवत्ता दोनों का ह्रास हुआ है जिसके फलस्वरूप स्वेदशी मछलियों को खतरा उत्पन्न हो गया है तथा कुछ प्रजातियाँ या तो लुप्त हो गयी हैं या फिर कुछ लुप्त होने के कगार पर हैं। मछली पकड़ने में अधिक यत्न करना पड़ रहा है तथा प्रकृति जल स्रोतों में मछलियों की संख्या घट गयी है। पहाड़ों तथा उसकी तलहटी में शहरीकरण तेजी से बड़ रहा है। इसके कारण भी जल–संसाधनों पर दबाव पड़ रहा है। गुणवत्ता युक्त पानी की मात्रा में कमी के कारण मत्स्य प्रक्षेत्रों की संख्या भी सीमित हो जाएगी, इसलिए प्रदूषण से होने वाले इस विनाश को रोककर मत्स्य प्रक्षेत्र को बढ़ाना आने वाले वर्शों में एक प्रमुख चुनौती भरा कार्य होगा।

इन परिस्थितियों में पर्वतीय क्षेत्रों में शीतजल मात्स्यिकी के विकास हेतु दो रास्ते हैं– संसाधनों का संरक्षण तथा महत्वपूर्ण स्वेदशी एवं विदेशी शीतजल मत्स्य प्रजातियों की पैदावार को बढ़ावा देना। शिशु मत्स्य की उचित देखभाल, हैचरी का उचित प्रबन्धन, मछलियों को उचित पोषक तत्व तथा जैव तकनीक द्वारा मत्स्य अंकुरण में उन्नति के माध्यम से ही यह संभव हो सकेगा। इस संदर्भ में निम्न कार्यक्रम सुझाए गए हैं जिन्हे समयबद्ध रूप से कार्यान्वित करने की आवश्यकता है :

- जी.आई.एस. तथा दूर संवेदी तकनीक द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों के जल संसाधनों का व्यापक पैमाने पर सर्वेक्षण होना चाहिए ताकि शीतजल मात्स्यिकी के सम्भावित संसाधनों को निर्दिष्ट किया जा सके।
- हिमालय में विद्यमान विभिन्न नदियों, धाराओं तथा झीलों आदि में शाइजोथोराक्थसीड व महासीर मत्स्य संसाधनों का आंकलन होना चाहिए जिससे उनकी संख्या में ह्रास तथा अन्य खतरों के विषय में पता चल सके।
- उनके प्राकृतिक प्रजनन क्षेत्रों के विशय में भी जानकारी प्राप्त करनी चाहिए ताकि उनके संरक्षण हेतु उन्हें 'सेन्चुरी' घोषित किया जा सके।
- इन जल संसाधनों के उन पारिस्थितिकीय घटकों की पहचान होनी चाहिए जो 'शाइजोथोराक्थसीड' तथा 'महासीर' मछलियों की संख्या में कमी के लिए उत्तरदायी है।
- पर्वतीय क्षेत्रों की झीलों तथा धाराओं में मछली पकड़ने के लिए प्रयुक्त होने वाले उचित साधनों, जाल आदि की उन्नति के

लिए अन्वेषण होना चाहिए।

- खुले पानी में मछलियों की संख्या में उत्पत्ति सम्बन्धी विभिन्नता का आंकलन होना चाहिए जिससे यदि इसमें कोई दोश आ रहे हों तो उसका पता लगाया जा सके।
- महासीर तथा दूसरी अन्य मछलियों के बीज को व्यावसायिक उत्पादन हेतु हैचरी की स्थापना उचित स्थानों पर की जानी चाहिए।
- आवश्यक पोषक आहार के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी चाहिए तथा इस विषय में शीतजल मत्स्य आहार तैयार करना चाहिए।
- मत्स्य प्रक्षेत्र प्रबन्धन तकनीक को उन्नत करना चाहिए ताकि शिशु अवस्था से किशोरावस्था तक मछलियां नियन्त्रित वातावरण में पल सके तथा उनकी प्रकृति पर निर्भरता कम सके।
- महत्वपूर्ण देशी प्रजातियों की पैदावार को बढ़ावा देने के अलावा विदेशी प्रजातियों के पालन पोषण को भी प्राथमिकता देने की आवश्यकता है।

रोग एवं पोषण

जलीय पर्यावरण का जैविक उपचार (बायोरेमेडिएशन)

अर्चना सिन्हा
भा.कृ.अनु.परि.-केन्द्रीय अन्तर्स्थली मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकता

सारांश

जलीय पर्यावरण में भारी धातुओं, पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (पीएएच) और अन्य अकार्बनिक जैसे विभिन्न प्रदूषकों का अंधाधुंध उत्र्सजन ने विश्व में चिंता पैदा कर दी है। भौतिक–रासायनिक तरीकों पर आधारित पारंपरिक इंजीनियरिंग दृष्टिकोण का पालन करते हुए, इन प्रदूषित जलीय वातावरणों का उपचार तकनीकी और आर्थिक दोनों रूप से चुनौतीपूर्ण है। माइक्रोबियल प्रक्रिया (बायोरेमेडिएशन) का उपयोग करके प्रदूषित स्थलों की सफाई प्रभावी और विश्वसनीय साबित हुई है क्योंकि यह पर्यावरण के अनुकूल है। बायोरेमेडिएशन सूक्ष्मजीवों का उपयोग करता है और प्रदूषकों की एक विस्तृत श्रृंखला वाले स्थलों के परिशोधन के लिए यह सबसे आशाजनक, अपेक्षाकृत कुशल और लागत प्रभावी तकनीक है। बायोरेमेडिएशन की प्रक्रिया को या तो एक नियंत्रित वातावरण में या फिर प्रदूषित स्थल पर किया जा सकता है। यह अनेक कारकों जैसे स्थल विशेष, लागत, प्रदूषकों के प्रकार एवं घनत्व आदि पर निर्भर करता है। इसलिए सफल बायोरेमेडिएशन तकनीक का चुनाव प्रभावी रूप से प्रदूषकों के घनत्व को कम करने हेतु महत्वपूर्ण है। यह अध्याय दूषित पारिस्थितिक तंत्रों में भारी धातुओं एवं पीएएच की विषाक्तता से जुड़ी समस्याओं और पर्यावरण–अनुकूल बायोरेमेडिएशन प्रौद्योगिकियों की समझ पर प्रकाश डालता है तथा प्रमुख बायोरेमेडिएशन तकनीकों, उनके सिद्धांतों, लाभों, सीमाओं और संभावनाओं के बारे में भी जानकारी प्रदान करता है।

परिचय

पिछले कुछ दशकों में, तेजी से औद्योगीकरण, बढ़ती हुयी मानवीय गतिविधियों एवं कृषि पद्धतियों में रसायनों के अंधाधुंध उपयोग के कारण पर्यावरण प्रदूषण बढ़ रहा है जिसके कारण समाज को बड़े पैमाने पर भारी धातुओं, पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (पीएएच) तथा अन्य अकार्बनिक प्रदूषण आदि जैसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। इन प्रदूषकों से बचने के लिए कई पारंपरिक उपाय हैं जिनकी अपनी सीमाएँ हैं। भारी धातुएँ, अन्य प्रदूषकों के साथ धीरे–धीरे संचय के कारण कम सांद्रता पर भी मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण दोनों के लिए कई खतरे पैदा कर सकती हैं, भले ही वह कम घनत्व में हों क्योंकि वे धीरे धीरे जमा होते हैं। हालांकि भारी धातुएं नष्ट नही हो सकती हैं लेकिन उन्हे या तो रासायनिक या भौतिक पुनर्वसन के माध्यम से या रेडॉक्स प्रतिक्रिया द्वारा शिफ्ट करके पर्यावरण के लिए कम विषाक्त बनाया जा सकता है। पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (पीएएच) जलीय वातावरण में सभी जगह व्याप्त हैं और ये तेल, पेट्रोलियम गैस, कोयला या लकड़ी जैसे कार्बनिक पदार्थों के अधूरे दहन या पायरोलिसिस से बनते हैं। पीएएच को कोशिका विभाजन पर उनके प्रभाव के कारण खतरनाक माना जाता है, जिससे ट्यूमर होता है और एंजाइम प्रेरण प्रक्रियाओं के माध्यम से प्रजनन दर में बदलाव होता है। संयुक्त राज्य पर्यावरण संरक्षण एजेंसी (यू.एस.ई.पी.ए.) द्वारा पीएएच को बुनियादी प्रदूषकों के रूप में अनुशंसित किया गया है और उनके कार्सिनोजेनिक, म्यूटाजेनिक और विषाक्त गुणों के कारण यह तेल–दूषित स्थलों में अध्ययन के लिए एक लक्षित घटक हैं। इसलिए पर्यावरण के अनुकूल तरीके से प्रदूषित जलीय पर्यावरण को प्रभावी ढंग से बहाल करने के लिए वैज्ञानिकों द्वारा बायोरेमेडिएशन की तकनीक विकसित की गई है। बायोरेमेडिएशन एक नवीन और

आशाजनक तकनीक है जो प्रदूषित वातावरण से विभिन्न प्रदूषकों को कम करने /हटाने के लिए है। यह प्रदूषकों के त्वरित उन्मूलन के लिए जैविक गतिविधियों का यथासंभव उपयोग करने की एक रणनीति है। हालाँकि, प्रदूषकों की प्रकृति के कारण, प्रदूषित पर्यावरण को पुनस्थापित करने का कोई एक तरीका नहीं है। पर्यावरण प्रदूषण से जुड़ी अधिकांश चुनौतियों को हल करने की कुंजी के रूप में प्रदूषित वातावरण में मौजूद विभिन्न ऑटोचथोनस सूक्ष्मजीवों की पहचान की गयी है।

बायोरेमेडिएशन का सिद्धांत

बायोरेमेडिएशन को उस प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है जिसके तहत जैविक कचरे को नियंत्रित परिस्थितियों में जैविक रूप से अपघटित किया जाता है। यह तकनीक प्रदूषकों को कम हानिकारक अथवा गैर विशाक्त पदार्थों में परिवर्तित करने के लिए उपयोग की जाती है। जिससे अंततः कार्बनिक पदार्थों का कार्बन डाइऑक्साइड, पानी, नाइट्रोजन गैस आदि में खनिजीकरण हो जाता है। यह प्रदूषकों को पर्यावरण से दूषित स्थलों को बहाल करने तथा भविष्य के प्रदूषण को रोकने के लिए उपयोग की जाने वाली एक प्रौद्योगिकी है। बायोरेमेडिएशन कई प्रकार के प्रदूषकों के नियंत्रण के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है, जिनमें कार्बनिक प्रदूषक, भारी धातुएं, और कीटनाशक शामिल हैं। बायोरेमेडिएशन का उपयोग दूषित स्थलों की सफाई के लिए, भूजल और जल निकायों की रक्षा के लिए तथा कृषि क्षेत्रों में प्रदूषण को कम करने के लिए किया जा सकता हैं।

बायोरेमेडिएशन प्रौद्योगिकी में प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले जीवाणु, कवक या पौधे का उपयोग किया जाता है जो मनुष्य और पर्यावरण के लिए हानिकारक पदार्थों को अपघटित या विषहरित कर सकते हैं। चूंकि बायोरेमेडिएशन केवल वहीं प्रभावी हो सकता है जहां पर्यावरणीय परिस्थितियां माइक्रोबियल विकास और गतिविधि की अनुमति देती हैं। इसके प्रयोग में अक्सर माइक्रोबियल विकास और गिरावट को तेज दर से आगे बढ़ने की अनुमति देने के लिए पर्यावरणीय मापदंडों में परिवर्तन होता है। यह आमतौर पर एरोबिक स्थितियों के तहत होता है लेकिन कुछ मामलों में, अवायवीय स्थितियां भी अपघटन प्रक्रियाओं की अनुमति देती हैं।

बायोरेमेडिएशन रणनीतियाँ

बायोरेमेडिएशन एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जो हानिकारक पदार्थों को कम विषाक्त या गैर–विषाक्त रूपों में तोड़ने के लिए सूक्ष्मजीवों का उपयोग करती है। बायोरेमेडिएशन तकनीक को मोटे तौर पर दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः एक्स सिटू और इन सीटू। एक्स सीटू बायोरेमेडिएशन में दूषित सामग्री को उसके मूल स्थान से हटाना और एक नियंत्रित वातावरण में उसका उपचार करना शामिल है। इस दृष्टिकोण का उपयोग अक्सर अत्यधिक दूषित मिट्टी या भूजल के लिए किया जाता है। इन सीटू बायोरेमेडिएशन में दूषित सामग्री को उसके मूल स्थान पर उपचारित करना शामिल है। यह दृष्टिकोण अक्सर एक्स सीटू बायोरेमेडिएशन से कम खर्चीला और विघटनकारी होता है, लेकिन वांछित परिणाम प्राप्त करने में अधिक समय लग सकता है।

स्व–स्थानीय बायोरेमेडिएशन (इन सीटू बायोरेमेडिएशन)

एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जो हानिकारक पदार्थों को कम विषाक्त या गैर–विषाक्त रूपों में तोड़ने के लिए सूक्ष्मजीवों का उपयोग करती है। यह दूषित मिट्टी और भूजल को साफ करने का एक किफायती और पर्यावरण अनुकूल तरीका है। इसमें सूक्ष्म जीवों एवं विघटित प्रदूषकों के बीच संपर्क होता है। यह मिट्टी की गहराई और उन प्रदूषकों के संपर्क से भी सीमित है जिन्हें प्रभावी ढंग से उपचारित किया जा सकता है। कई मामलों में, इन सीटू उपचार सतह पर होता है, जबकि कुछ मामलों में यह 30 सेमी गहराई तक होता है। सवार्धिक भूमि उपचार हैं :

(क) बायोवेंटिंग

यह माइक्रोबियल गतिविधि को उत्तेजित करने के लिए मिट्टी के माध्यम से ऑक्सीजन खींचकर दूषित मिट्टी का उपचार करने की विधि है ताकि मिट्टी में कार्बनिक संदूषकों को बायोडिग्रेड किया जा सके। यह इन–सीटू उपचार का सबसे सामान्य प्रकार है जिसमें बायोडिग्रेडेशन के लिए बैक्टीरिया को उत्तेजित करने के लिए प्रदूषित स्थलों पर कुओं के माध्यम से हवा और पोषक तत्वों की आपूर्ति शामिल रहती है। यह उपचार के लिए कम वायु प्रवाह दर का उपयोग करता है ताकि मिट्टी में कार्बनिक प्रदूषकों को बायोडिग्रेड किया जा सके। इसका उपयोग मुख्य रूप से गहरी सतह में हाइड्रोकार्बन क्षरण के लिए किया जाता है। बायोवेंटिंग तकनीक ने स्व–स्थानीय बायोरेमेडिएशन (इन सीटू बायोरेमेडिएशन) हेतु मुख्यतः पैट्रोलियम प्रदूशकों से दूशित स्थलों को बहाल करने में लोकप्रियता प्राप्त की है।

(ख) बायोस्पार्गिंग

बायोस्पार्जिंग प्रदूषकों के उपचार के लिए ऑक्सीजन और पोषक तत्वों की आपूर्ति करके स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले स्वदेशी बैक्टीरिया को उत्तेजित करने की एक विधि है। इस तकनीक में, संतृप्त क्षेत्रों में हवा इंजेक्ट की जाती है जो वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों की गति को बढ़ावा देती है। यह तकनीक संतृप्त क्षेत्र में मिश्रण को बढ़ाती है जिससे उपचार के लिए, मिट्टी और भूजल के बीच संपर्क बढ़ता है। बायोस्पाजिंग पर्याप्त प्रदर्शन के लिए काफी लचीलेपन के साथ छोटे व्यास के वायु इंजेक्शन बिंदुओं की स्थापना की अनुमति देता है। वैज्ञानिकों ने बायोस्पार्जिंग की प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया जो दो महत्वपूर्ण कारकों पर निर्भर करता है, अर्थात् मिट्टी की पारगम्यता और प्रदूषक की जैव निम्नीकरणीयता, क्योंकि यह सूक्ष्मजीवों में प्रदूषक की जैव उपलब्धता निर्धारित करती है।

(ग) जैव संवर्द्धन

इसमें दूषित स्थलों पर स्वाभाविक या बहिर्जात मूल के विभिन्न सूक्ष्मजीव सम्मिलित हो सकते हैं। इसके पीछे तर्क यह है कि स्वदेशी माइक्रोबियल आबादी प्रदूषकों की एक विस्तृत श्रृंखला को नष्ट करने में सक्षम नहीं हो सकती है। इस उपचार का उपयोग करते समय इसकी कुछ सीमाएँ हैं, जैसे–अस्वाभाविक जीव विकसित होने और कायम रहने के लिए शायद ही कभी स्वाभाविक आबादी के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। लंबे समय तक बायोडिग्रेडेबल कचरे के संपर्क में रहने वाली अधिकांश मिट्टी में स्वाभाविक सूक्ष्मजीव होते हैं। इसमें स्वस्थानी बायोरेमेडिएशन विधियों के संभावित लाभ में न्यूनतम व्यवधान, दूषित स्थलों का एक साथ उपचार, सार्वजनिक और स्थल कर्मियों का न्यूनतम जोखिम और कम लागत शामिल है।

पूर्व सीटू बायोरेमेडिएशन (एक्स सीटू बायोरेमेडिएशन)

एक्स सीटू बायोरेमेडिएशन के अर्न्तगत उपचार के लिए दूषित मिट्टी या पानी को उसके मूल स्थान से हटा दिया जाता है। इस दृष्टिकोण का उपयोग अक्सर तब किया जाता है जब दूषितीकरण इतना गंभीर होता है कि इसे जगह में इलाज नहीं किया जा सकता है। एक्स सीटू बायोरेमेडिएशन को मोटे तौर पर ठोसीय एवं द्रवीय बायोरेमेडिएशन प्रणाली में वर्गीकृत किया गया है।

(क) ठोसीय उपचार प्रणाली

इस प्रणाली का उपयोग मुख्य रूप से जैविक कचरे (पत्तियां, खाद और कृषि अपशिष्ट) तथा समस्याग्रस्त कचरे (घरेलू औद्योगिक अपशिष्ट एवं सीवेज कीचड़्नगर पालिका का ठोस अपशिष्ट) के लिए किया जाता है। उपचार प्रक्रियाओं में भूमि खेती, खाद बनाना, बायोपाइल्स और हाइड्रोपोनिक्स शामिल हैं।

(ख) द्रवीय उपचार प्रणाली

घोल चरण उपचार एक प्रकार का एक्स सीटू बायोरेमेडिएशन है जिसमें दूषित मिट्टी या पानी का तरल अवस्था में उपचार किया जाता है। इस दृष्टिकोण का उपयोग अक्सर तब किया जाता है जब दूषितीकरण इतना गंभीर या व्यापक होता है कि इसे जगह में इलाज नहीं किया जा सकता है (इन सीटू)। घोल चरण उपचार विशेष रूप से भारी धातुओं, कार्बनिक संदूषकों और पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन के उपचार के लिए प्रभावी है। इसमें 10–30 ठोसीय पदार्थ होता है।

(ग) लैंड फार्मिंग

यह एक सरल बायोरेमेडिएशन तकनीक है क्योंकि इस प्रक्रिया के लिए कम लागत और कम उपकरणों की आवश्यकता होती है। इस तकनीक का उद्देश्य स्वाभाविक सूक्ष्मजीवों को उत्तेजित करना और एरोबिक बायोडिग्रेडेशन को सुविधाजनक बनाना है। इस तकनीक में प्रदूषित मिट्टी पानी की खुदाई की जाती है और उसे तैयार कर फैलाया जाता है तथा समय–समय पर तब तक जुताई की जाती है जब तक कि वांछित प्रदूषक नष्ट नहीं हो जाते। इस उपचार में गहराई महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि यह सतही रूप से 10–35 सेमी मिट्टी तक सीमित होती है। इस तकनीक में रखरखाव की लागत को कम करने की क्षमता है। यह तकनीक कार्बनिक यौगिकों, पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन और भारी धातुओं सहित विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों के उपचार के लिए प्रभावी है।

(ग) खाद

यह एक ऐसी तकनीक है जिसमें दूषित मिट्टी को गैर–खतरनाक कार्बनिक पदार्थों जैसे पुआल, घास या मक्के के भुट्टे या खाद के साथ मिलाया जाता है। इससे सूक्ष्मजीवों को आवश्यक हवा और पानी पहुंचाना आसान हो जाता है। इन कार्बनिक संशोधनों की उपस्थिति बायोरेमेडिएशन के लिए स्वाभाविक सूक्ष्मजीवों को बढ़ाती है। खाद बनाने में उच्च तापमान और नमी का स्तर भी बायोडिग्रेडेशन के लिए एक आदर्श वातावरण बनाता है। विद्वानों ने बताया है कि दो शाकनाशी बेन्थियोकार्ब (S–4–क्लोरोबेंजिल डायथाइल–थियोकार्बामेट और MCPA (4–क्लोरो–2–मिथाइल फेनोक्सीएसेटिक एसिड) को मिलाने से खाद सामग्री के क्षरण में सुधार होता है।

(घ) बायोपाइल्स

यह एक ऐसी तकनीक है जिसमें प्रदूषित मिट्टी को जमीन से बाहर निकालना होता है। इसके बाद पोषक तत्वों में संशोधन और वातन किया जाता है जो बायोरेमेडिएशन के लिए माइक्रोबियल गतिविधियों को बढ़ाता है। इस तकनीक को बायोसेल्स, बायोहीप्स, बायोमाउंड्स और कम्पोस्ट पाइल्स के रूप में भी जाना जाता है तथा इसका उपयोग मुख्य रूप से दूषित वातावरण से पेट्रोलियम प्रदूषकों को बायोरेमेडियेट करने के लिए किया जाता है। यह तकनीक एरोबिक और एनारोबिक सूक्ष्मजीवों को जैव निम्नीकरण के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करती है। विद्वानों ने रचनात्मक विशेषताओं के कारण इस तकनीक को बहुत उपयोगी माना है, जिसमें पोषक तत्वों, तापमान और वातन को पर्याप्त रूप से नियंत्रित करने पर लागतप्रभावी और उच्च बायोडिग्रेडेशन दर शामिल है। उन्होने मिट्टी और रेतीली मिट्टी सहित विभिन्न प्रकार की मिट्टी के नमूनों के बायोरेमेडिएशन के लिए बायोपाइल्स की व्यवहार्यता का मूल्यांकन भी किया है।

(ड) बायोरिएक्टर

बायोरिएक्टर बायोरेमेडिएशन की एक्स सीटू विधि है जिसमें विभिन्न जैविक प्रतिक्रियाओं के बाद कच्चे माल को विशिष्ट उत्पादों में परिवर्तित किया जाता है। आमतौर पर इनका प्रयोग दूषित पानी या मिटटी के उपचार के लिए किया जाता है। इसमें बाजार अर्थव्यवस्था और व्यय के आधार पर विभिन्न परिचालन मोड शामिल होते हैं जिनमें विभिन्न ऑपरेटिंग मोड जैसे बैच, फेड–बैच,

सीक्वेंसिंग बैच, निरंतर और मल्टीस्टेज विधियां होती हैं। बायोरिएक्टर बायोडिग्रेडेशन की प्राकृतिक प्रक्रिया को बढ़ावा देते हैं जिससे रासायनिक उपचार विधियों पर निर्भरता कम हो जाती हैं। प्रदूषित मिट्टी (शुष्क पदार्थ या घोल) के पानी को बायोरिएक्टर में डाला जा सकता है और मिश्रण से लक्षित प्रदूषकों के क्षरण की दर बढ़ जाती है। बायोरिएक्टर के कई लाभ हैं जैसे नियंत्रित बायोप्रोसेस पैरामीटर (तापमान, पीएच, उत्तेजना और वातन दर, सब्सट्रेट और इनोकुलम सांद्रता)। ये पैरामीटर बायोडिग्रेडेशन प्रक्रिया को अनूकूलित करने और प्रदूषक हटाने की उच्च दर प्राप्त करने में मदद करता है। विद्वानों ने बायोरिएक्टर डिजाइन की लचीली प्रकृति का मूल्यांकन किया है जो अजैविक नुकसान को कम करते हुए अधिकतम जैविक क्षरण की अनुमति देता है।

बायोरिमेडिएशन को प्रभावित करने वाले कारक

बायोरेमेडिएशन एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जो सूक्ष्मजीवों का उपयोग करके पर्यावरण से प्रदूषकों को हटाने का कार्य करती है। यह दूषित स्थलों की सफाई के लिए एक आशाजनक तकनीक है, किन्तु उन कारकों को समझना महत्वपूर्ण है जो इसकी सफलता को प्रभावित कर सकते हैं। इन तकनीकों को बहुआयामी और विषम वातावरण जैसे विभिन्न प्रकार की मिट्टी एवं पानी के स्रोत तथा वायुमंडल जैसे बहु–चरणीय एवं विषम वातावरण के रूप में परिभाषित करना चाहिए। बायोरेमेडिएशन की प्रभावकारिता विभिन्न कारकों से प्रभावित होती है जिनमें प्रदूषकों की रासायनिक प्रकृति एवं सांद्रता, पर्यावरण की विशेषताओं और सूक्ष्मजीवों के लिए प्रदूषकों की उपलब्धता सम्मिलित है। विद्वानों ने उन विभिन्न कारकों को भी रेखांकित किया, जिनमें वैज्ञानिक, गैर–वैज्ञानिक और नियामक शामिल हैं, जो जैव पुनर्ग्रहण प्रौद्योगिकियों के उपयोग को सीमित करते हैं।

भारी धातुओं का बायोरिमेडिएशन

भारी धातुओं का प्रदूषण एक गंभीर पर्यावरणीय समस्या है जो मानव स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव डाल सकती है। मानवजनित गतिविधियों और औद्योगिक अपशिष्टों के कारण भारी धातु का प्रदूषण जलीय पर्यावरण के लिए बहुत अधिक खतरा पैदा कर रहा है। विभिन्न स्रोतों जैसे मेटलार्जिकल ओवन, रेडियोन्यूक्लाइड, सीवेज कीचड़–अपशिष्ट जल (औद्योगिक, नगरपालिका और घरेलू स्रोत) से निकलने वाले भारी धातुओं के कारण तथा तेजी से बढ़ती जनसंख्या के कारण पर्यावरण को गंभीर नुकसान हुआ है। ये भारी धातुएँ पर्यावरण में जमा हो सकती हैं और कई स्वास्थ्य समस्याएं पैदा कर सकती हैं, जिनमें कैंसर, तंत्रिका क्षति और प्रजनन समस्याएं शामिल हैं। बायोरेमेडिएशन एक ऐसी प्रक्रिया है जो दूषित स्थलों की सफाई के लिए सूक्ष्मजीवों का उपयोग करती है। सूक्ष्मजीवों को पर्यावरण से भारी धातुओं को हटाने या बदलने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

भारी धातुएं अन्य प्रदूषकों के साथ मिलकर अपनी विषाक्तता, गैर–बायोडिग्रेडेबिलिटी और जैवसंचय के कारण मानव स्वास्थ्य के लिए कई स्वास्थ्य संबन्धी खतरे पैदा कर सकती हैं। भारी धातुएँ जैसे कैडमियम (Cd (II)), सीसा (Pb (II)), तांबा (Cu (II)) और क्रोमियम जो आमतौर पर दूषित मिट्टी में अंशों में मौजूद होते हैं लेकिन इनका स्थायी अस्तित्व बना रहता है। प्रदूषित जलीय पारिस्थितिक तंत्र में धातुएँ मानव स्वास्थ्य को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकती हैं। प्रदूषित वातावरण से धातुओं को हटाने के लिए विभिन्न भौतिक एवं रासायनिक पद्धतियों–रासायनिक अवक्षेपण, विद्युत रसायन उपचार, निस्पंदन, आयन विनिमय, मेम्बरेन प्रौद्योगिकी, ऑक्सीकरण, रिवर्स ऑस्मोसिस तथा वाष्पीकरण का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। हालाँकि, इनमें से अधिकांश प्रौद्योगिकियाँ उपचार प्रक्रिया में महंगी, कम कुशल, गहन श्रमशील अथवा गैर–

चयनात्मक प्रतीत होती हैं। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि, बायोरेमेडिएशन जैसी अधिक व्यापक रूप से लागू और पर्यावरण अनुकूल तकनीकों का विकास और प्रयोग बहुत आवश्यक है। यह एक पारिस्थितिक रूप से सुदृढ़ और अत्याधुनिक तकनीक है जो विषाक्त प्रदूषकों को पूरी तरह से खत्म करने के लिए प्राकृतिक जैविक प्रक्रियाओं को नियोजित करती है।

पर्यावरण में भारी धातु के स्रोत

भारी धातुएँ पर्यावरण में प्राकृतिक रूप से मूल सामग्री के प्रसंस्करण और मानवजनित स्रोतों के माध्यम से भी उत्पन्न हो सकती हैं। सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक स्रोत खनिजों का अपक्षय, कटाव और ज्वालामुखीय गतिविधियाँ हैं, जबकि मानवजनित स्रोत विभिन्न मानवीय गतिविधियों पर निर्भर करते हैं। पोजेनिक स्रोत और उनके संभावित प्रभाव का उल्लेख किया गया है।

भारी धातुओं के विभिन्न स्रोत और मानव पर इसका संभावित प्रभाव

भारी धातुएं	मानवजनित स्रोत	संभावित प्रभाव
जिंक	उद्योगों से निकलने वाला अपशिष्ट इलेक्ट्रोप्लेटिंग, का निर्माण बैटरी, गैल्वनीकरण, और धातुकर्म उद्योग धातु प्रसंस्करण, चमड़ा कमानाय क्रोम चढ़ानाय धातुकर्मय लकड़ी परिरक्षकीय बॉयलर और अलग खाना पकाने की प्रणाली संक्षारक रोधी के रूप में	चक्कर आना, थकान आदि।
कॉपर	जानवर की खाद औद्योगिक कारखानों से निर्वहन, जैसे कि पेंट फैक्ट्री, और इसका निपटान किया जाता है इलेक्ट्रॉनिक और इलेक्ट्रिकल कारखाने भूस्खलन से मुक्ति, खान स्थल, जीवाष्म ईंधन का दहन, और घरेलू अपशिष्ट जल इसे कणों द्वारा छोड़ा जा सकता है ज्वालामुखी, धूल और जंगल की आग वायुमंडल या उसमें घुले हुए यौगिक पानी	मस्तिष्क और गुर्दे की क्षति, जिसके परिणामस्वरूप लीवर सिरोसिस होता है और क्रोनिक एनीमिया, पेट और आंतों में जलन होती है।
कैडिमियम	बैटरियों, मिश्र धातुओं का उत्पादन, रंगद्रव्य, उर्वरक, कीटनाशक, वेल्डिंग, खुदाई, जीवाश्म का दहन, ईंधन और नगरपालिका अपशिष्ट, इलेक्ट्रॉनिक और कैडमियम–प्लेटेड कचरे का पुनर्चक्रण	उत्परिवर्ती, अंतःस्रावीय विघटनकारी, फेफड़ों को नुकसान और नाजुक हड्डियाँ, जैविक प्रणालियों में कैल्शियम विनियमन को प्रभावित करती हैं
आर्सेनिक	कोयला दहन, कीटनाशक सूत्रीकरण, गलानाय लकड़ी परिरक्षक, धातु शोधन, अमीबिक पेचिश और सिफलिस के इलाज के लिए दवाएं–दवाएं, परजीवी रोगों के उपचार के लिए पशु चिकित्सा औषधियाँ	आवश्यक सेलुलर प्रक्रियाओं को प्रभावित करता है, जैसे कि ऑक्सीडेटिव फास्फारिलीकरण और एटीपी संश्लेषण

भारी धातुएं	मानवजनित स्रोत	संभावित प्रभाव
मर्करी	क्लोर–एल्काली पौधे, थर्मल पावर पौधे, फ्लोरोसेंट लैंप, अस्पताल के अपशिष्ट (क्षतिग्रस्त थर्मामीटर, बैरोमीटर, रक्त दाब मापी)	ऑटोइम्यून रोग, अवसाद, उनींदापन, थकान, बालों का झड़ना, अनिद्रा, याददाश्त की हानि बेचैनी अशांति की दृष्टि, कंपकंपी, गुस्सा आना, मस्तिष्क, फेफड़े और गुर्दे की क्षति
क्रोमियम	खनन, औद्योगिक शीतलक, क्रोमियम लवण विनिर्माण, चमड़े की टैनिंग	नाक में छाले, नाक बहना, सांस फूलना अस्थमा, खांसी जैसी समस्याएँ, सांस की तकलीफ, या घरघराहट और बाल का झड़ना

विभिन्न मानवजनित स्रोतों और उनके संभावित प्रभाव का उल्लेख उपरोक्त तालिका में किया गया है।

भारी धातुओं का माइक्रोबियल बायोरेमेडिएशन

सूक्ष्मजीव सर्वव्यापी हैं तथा ये जलीय वातावरण में भारी धातुओं के जैव–रासायनिक परिवर्तन में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भारी धातुओं और संबंधित रोगाणुओं की परस्पर क्रिया के कई लाभकारी और हानिकारक परिणाम होते हैं। जलीय वातावरण में पीएच, नमी, तापमान, आयनिक संरचना, ह्यूमिक यौगिक एवं अन्य जैविक जीव जैसे कई बाह्य कारक भी भारी धातुओं के परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जलीय वातावरण में भारी धातुओं का परिवर्तन उपरोक्त कई कारकों के कारण होता है। धातुओं का बायोरेमेडिएशन मोबिलाइजेशन अथवा स्थिरीकरण प्रक्रियाओं द्वारा किया जा सकता है जिसे केलेशन, ऑक्सीकरण–कमी, पीएच परिवर्तन, बायोसोर्षन, बायोकैम्बुलेशन, स्थिरीकरण, बायोमेथिलेशन या कार्बनिक धातु में रेडियोन्यूक्लाइड परिवर्तन आदि तंत्रों के द्वारा पूरा किया जा सकता है। भारी धातु बायोरेमेडिएशन का कई विद्वानों द्वारा व्यापक रूप से अध्ययन किया गया। सबसे आम भारी धातुएँ जो मिट्टी और पानी को प्रदूषित करती हैं वे हैं As, Pb, Hg और CrA जलीय पर्यावरण में, आर्सेनिक अधिकतर दो रूपों में पाया जाता है: आर्सेनेट ($As5^{+}$) तथा आर्सेनाइट ($As3^{+}$)। आर्सेनिक जलीय वातावरण को दूषित करने वाली सबसे आम भारी धातुओं में से एक है। सूक्ष्मजीव आर्सेनिक को अधिक विशाक्त आर्सेनेट ($As3^{+}$) रूप से कम विषाक्त आर्सेनिक ($As5^{+}$) रूप में परिवर्तित करके इसका निवारण कर सकते हैं। कुछ सूक्ष्मजीव जो आर्सेनिक को जैवरूपांतरित कर सकते हैं, उनमे Cinetobacter sp., Brevundimonas sp., Pseudomonas sp., Rhizobium sp.,Aeromonas sp. और Penicillium canescens सम्मिलित हैं। जलीय वातावरण में एक अन्य आम भारी धातु का महत्वपूर्ण प्रदूषक सीसा है। सीसे का बायोरेमेडिएशन विभिन्न माइक्रोबियल उपभेदों और कंसोर्टिया के कारण होता है। सूक्ष्मजीव सीसा को स्थिर करके इसका निवारण कर सकते हैं, जिससे यह खाद्य श्रृंखला में प्रवेश नहीं कर पाता है। कुछ सूक्ष्मजीव जो सीसा को स्थिर कर सकते हैं, उनमें spergillus niger,A. terrus, A. versicolor, N. crass, P. canescens P. chrysogenum P. decumbens, P. simplicissimum और Saccharomyces cerevisiae सम्मिलित हैं। पारा एक विषाक्त भारी धातु है जो मानव स्वास्थ्य पर कई हानिकारक प्रभाव डाल सकता है। पारा का सबसे विषाक्त रूप मिथाइल–पारा है, जो सूक्ष्मजीवों द्वारा निर्मित होता है। कुछ सूक्ष्मजीव जो पारा को बदल सकते हैं, उनमें P. canescens, Rhizopus arrhizus, Shewanella oneidensis, Geobacter sulfurreducens और G-metallireducens शामिल हैं। क्रोमियम एक भारी धातु है जो पर्यावरण में विभिन्न ऑक्सीकरण अवस्थाओं में मौजूद है। क्रोमियम की सबसे स्थिर

अवस्था Cr(0) है, इसके बाद Cr(VI) है, जो सबसे विषाक्त रूप है। सूक्ष्मजीव क्रोमियम को Cr(VI) से Cr(III) में कम करके इसका निवारण कर सकते हैं। कुछ सूक्ष्मजीव जो क्रोमियम को जैवरूपांतरित कर सकते हैं, उनमें Pseudomonas putida, Bacillus subtilis और Staphylococcus aureus शामिल हैं। जलीय वातावरण में भारी धातुओं का परिवर्तन एक जटिल प्रक्रिया है जो भारी धातु के प्रकार, धातु की सांद्रता, अन्य प्रदूषकों की उपस्थिति एवं पानी के पीएच स्तर सहित कई कारकों से प्रभावित होती है। सूक्ष्मजीव इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि वे भारी धातुओं को गतिशील या स्थिर करते हैं, जिससे उनकी विषाक्तता कम हो सकती है और वे अन्य जीवों के लिए कम उपलब्ध हो सकते हैं। CrO^3, Cr का सबसे विषैला रूप है जिसमें उच्च ऑक्सीकरण क्षमता होती है। CrO^3 की उच्च घुलनशीलता और गतिशीलता के कारण, यह जीवित जीवों में कोशिका झिल्ली को प्रभावित करता है। विभिन्न तंत्रों का उपयोग करके क्रोमियम को कई माइक्रोबियल प्रजातियों द्वारा बायोरेमेडिएट किया जा सकता है। पैन्टोइया एसपी., बैसिलस सर्कुलन्स, बी. मेगाटेरियम, बी. कोगलैन्स, जोग्लोआ रामिगेरा, स्ट्रेप्टोमाइसेस नौरेसी, एरोमोनास कैविया, स्यूडोमोनास एसपी. और स्टैफिलोकोकस जाइलोसस प्रमुख क्रोमियम बायोरेमेडियेटर हैं।

भारी धातु हटाने के लिए उपयोग किए जाने वाले GEMs के उदाहरण

आनुवंशिक रूप से परिस्कृत जीव (GEMs) सूक्ष्म जीव है जिन्हे भारी धातुओं को हटाने के लिए निर्मित किया जाता है ताकि वे उन विशिष्ट लक्षणों को प्राप्त कर सकें जो उन्हें दूषित वातावरण से भारी धातुओं को प्रभावी ढंग से हटाने और स्थिर करने में सक्षम बना सकें। इस प्रकार के जीव मुख्यतः पुनः संयोजक डी.एन.ए. तकनीक का उपयोग करके बनाए जाते हैं तथा उन्हे विभिन्न प्रकार की भारी धातुओं जिनमें आर्सेनिक, सीसा एवं पारा सम्मिलित है, को हटाने के लिए कई परिस्कृत जीव (GEMs) विकसित किए गए हैं, जिनमें शामिल हैं: आर्सेनिक हटाने के लिए ई. कोलाई स्टेन, स्फिंगोमोनस डेसिकैबिलिस और बी. इड्रीन्सिस स्ट्रेनसीसा हटाने के लिए बैसिलस सबटिलिस बीआर151; स्टैफिलोकोकस ऑरियस Rn4220; एक्रोमोबैक्टर एसपी– I022; एसिडिथियोबैसिलस फेरोऑक्सीडन्स स्ट्रेन; डनोकोकस जिओथर्मालिस ई. कोलाई जेएम 109 ई. कोलाई एमसी 1061 ; पारा (Hg) हटाने के लिएस्यूडोमोनास डोमोनास के और स्यूडोमोनास एसपी। भारी धातुओं के उपचार के लिए GEMs का उपयोग पारंपरिक तरीकों का एक आशाजनक विकल्प है, क्योंकि यह एक अधिक लागत प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल तरीका है। इसके अतिरिक्त, GEMs की चयनात्मक प्रकृति अन्य भौतिक–रासायनिक विधियों की तुलना में कम स्वास्थ्य खतरे पैदा करती है।

पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन का बायोरेमेडिएशन

पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (पीएएच) लिपोफिलिक प्रदूषकों का समूह है जो जलीय वातावरण में व्यापक रूप से फैले हुए हैं। मानव और जलीय जीवों पर उनके संभावित खतरों के कारण इसने पर्यावरणीय चिंताओं को जगा दिया है। पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (पीएएच), समुद्र में शिपिंग गतिविधियों से पेट्रोलियम के रिसाव, औद्योगिक निर्वहन और बरसाती जल से नालियों में पानी भरने एवं शहरी अपवाह के कारण वायुमंडलीय गिरावट के माध्यम से निकट समुद्री तट में प्रवेश प्राप्त करते हैं और संभावित स्वास्थ्य जोखिम पैदा करने के लिए पहचाने गए हैं, क्योंकि वे रासायनिक रूप से स्थिर होते हैं और उनमें विभिन्न प्रकार के क्षरण के प्रति उच्च प्रतिरोध होता है तथा जीवित जीवों के लिए उच्च विषाक्तता होती है। पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (पीएएच) से प्रदूषण एक खतरा है जो तलछट में रहने वाले जलीय जीवों विशेष रूप से मानवजनित स्रोतों के करीब के क्षेत्रों के लिए बहुत चिंता का विषय है। पॉलीसाइक्लिक

एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (पीएएच) पानी में कम घुलनशीलता और हाइड्रोफोबिक प्रकृति के कारण, जलीय वातावरण में तेजी से कार्बनिक तथा अकार्बनिक कणों के साथ अलग हो जाता है और बाद में जलीय वातावरण में विघटित हो जाता है। भारत में, तट के किनारे स्थित रिफाइनरियों से परिवहन और आकस्मिक निर्वहन के कारण कई घटनाएं हुई हैं। 1970 से 2011 के दौरान, भारतीय जलक्षेत्र में लगभग 79 बड़ी और छोटी दुर्घटनाएँ हुईं, जिससे पर्यावरण में बड़ी मात्रा में तेल फैल गया था। पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (PAHs) कच्चे तेल के प्रमुख घटक हैं, जो इसकी संरचना का 50–98: हिस्सा बनाते हैं। (PAHs) विषाक्त हैं और पर्यावरण के लिए एक महत्वपूर्ण खतरा हैं, विशेष रूप से जलीय तलछट में। सूक्ष्मजीव, जो स्वाभाविक रूप से जलीय वातावरण में मौजूद होते हैं, बायोरिमेडिएशन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। जलीय तलछट से (PAHs) को हटाने और समाप्त करने के लिए बायोरिमेडिएशन एक आशाजनक तकनीक है। यह प्रक्रिया सूक्ष्मजीवों की (PAHs) का उपयोग करने पर निर्भर करती है। बायोरिमेडिएशन पारंपरिक (PAHs) हटाने के तरीकों पर कई फायदे प्रदान करता है, जिनमें पर्यावरण अनुकूलता, लागत–प्रभावशीलता और विशिष्टता शामिल हैं।

हाइड्रोकार्बन–उपयोग करने वाले सूक्ष्मजीवों का वितरण

सूक्ष्मजीवों को प्राकृतिक PAHs प्रंदूषकों का प्रमुख विघटितकर्ता माना जाता है और ये बायोरेमेडिएशन के लिए व्यावहारिक रुप से महत्वपूर्ण हैं। हाइड्रोकार्बन–अपघटित करने वाले बैक्टीरिया और कवक जलीय वातावरण में प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। बैक्टीरिया सूक्ष्मजीवों का उपयोग करने वाले सर्वोत्तम वर्णित हाइड्रोकार्बन हैं। पीएएच को नष्ट करने वाले प्रदूषकों की संख्या को कम करके जलीय पर्यावरण के संरक्षण के लिए यह प्रक्रिया बहुत महत्वपूर्ण है। उनकी सर्वव्यापकता और व्यापक एंजाइमी क्षमता उन्हें बायोरिमेडिएशन के लिए मूल्यवान बनाती है। कुछ विद्वानों ने बैसिलस एसपी से संबंधित पांच अलग–अलग फेनेंथ्रीन डिग्रेडिंग बैक्टीरिया को अलग किया और पाया कि PAHs के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया में मीठे पानी, समुद्री और मिट्टी के बायोटा में सूक्ष्मजीवों का उपयोग करने वाले हाइड्रोकार्बन की संख्या में वृद्धि हुई। उन्होने जलीय पारिस्थितिक तंत्र (10^4 से 10^6 cells g^{-1} sediments) में पीएएच डिग्रेडर की उच्च संख्या की सूचना दी तथा बताया कि ऐसे स्वदेशी माइक्रोबियल समुदाय में पीएएच यौगिकों को डिग्रेड करने की काफी क्षमता थी। उनके अनुसार इसके अलावा पीएएच यौगिकों में वृद्धि के साथ पीएएच डिग्रेडर की संख्या भी बढ़ाई जा सकती है। कुछ अन्य विद्वानों ने विभिन्न पीएएच दूषित स्थलों से 14 जीवाणु उपभेदों को अलग किया और 16S rRNA पूर्ण जीन सीक्वेंस अध्ययन का उपयोग करके उन्हें प्रजातियों के स्तर पर पहचाना। अलग–अलग 14 आइसोलेट्स में से पांच की पहचान एक्रोमोबैक्टर जाइलोसॉक्सिडन्स, रोडोकोकस रैटिस्लाविएन्सिस, माइक्रोबैक्टीरियम पैराऑक्सिडन्स और स्यूडोमोनस पुतिडा और बैसिलस एसपी के तीन सदस्यों के रूप में की गई। इन्हें पीएएच डिग्रेडर के रूप में भी पहचाना गया। इसके अतिरिक्त बायोरेमेडिएशन के रूप में पीएएच दूषित जलीय वातावरण से स्यूडोमोनाज, माइक्रोबैक्टीरियम और पैराकोकस को अलग किया गया।

बायोरेमेडिएशन से लाभ एवं हानि

सफल बायोरेमेडिएशन के लिए, उचित पर्यावरणीय कारकों के साथ सही समय पर सही स्थान पर सही प्रकार के सूक्ष्मजीवों का होना आवश्यक है। सही सूक्ष्मजीव बैक्टीरिया या कवक हो सकते हैं जिनकी शारीरिक या चयापचय प्रतिक्रियाएं बायोडिग्रेडेशन प्रक्रिया को पूरा कर सकती हैं। लैण्ड फीलिंग अथवा भस्मीकरण जैसी पारंपरिक तकनीकों की तुलना में बायोरेमेडिएशन प्रक्रिया के कई फायदे हैं। बायोरेमेडिएशन तकनीक के लिए कम समय की आवश्यकता होती है और इसे प्राकृतिक प्रक्रिया में परिवर्तन किए बिना स्थल पर ही किया जा सकता है। यह

तकनीक पर्यावरण–अनुकूल और टिकाऊ है क्योंकि इसमें प्रदूषकों के क्षरण के लिए किसी भी रसायन का उपयोग नहीं किया जाता है। यह प्रदूषकों के पूर्ण रूप से नष्ट करने में मदद करता है, जिसमें कई खतरनाक यौगिकों को हानिरहित यौगिकों में बदला जा सकता है। बायोरेमेडिएशन के अनेक नुकसान भी हैं क्योंकि सभी प्रदूषक, विशेष रूप से रेडियो न्यूक्लाइड एवं कुछ क्लोरीनयुक्त यौगिक बायोडिग्रेडेशन की प्रक्रिया के लिए उत्तरदायी नहीं हो सकते हैं। कुछ मामलों में, प्रदूषकों का माइक्रोबियल चयापचय विषाक्त चयापचयों का उत्पादन कर सकता है। यह एक वैज्ञानिक रूप से गहन प्रक्रिया है जिसे स्थल की विशिष्ट स्थितियों के अनुरूप बनाया जाना चाहिए ताकि किसी स्थल विशेष की सफाई से पूर्व उसके उपचार की क्षमता का अध्ययन किया जा सके।

बायोरेमेडिएशन की सीमा

बायोरेमेडिएशन प्रक्रिया केवल उन यौगिकों तक सीमित है जो बायोडिग्रेडेबल हैं। सभी यौगिक तेजी से और पूर्ण बायोडिग्रेडेशन के लिए अतिसंवेदनशील नहीं होते हैं। बायोरेमेडिएशन के कुछ उत्पाद मूल यौगिकों की तुलना में अधिक विषैले और लगातार बने रहने वाले हो सकते हैं। बायोरेमीडिया में शामिल जैविक प्रक्रियाएं बहुत विशिष्ट हैं और इसे प्रयोगशाला से भूमि तक विस्तारित नहीं किया जा सकता है। कभी–कभी प्रदूषकों के क्षरण में बायोरेमेडिएशन की प्रक्रिया में काफी समय लग जाता है। प्रदूषित वातावरण से प्रदूषकों के क्षरण के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं जैसे कि पसंदीदा सब्सट्रेट की कमी, पोषक तत्वों की कमी, ऑक्सीकरण और विभिन्न सूक्ष्मजीवों की आबादी की कमी। माइक्रोबियल परिवर्तन का प्रकार इस पर निर्भर करता है कि यौगिक प्राथमिक, द्वितीयक या सह–चयापचय सब्सट्रेट के रूप में कार्य करते हैं या नहीं। बायोरेमेडिएशन की प्रक्रिया में, विभिन्न खाद्य श्रृंखलाओं के बीच बायोमैग्निफिकेशन और बायोट्रांसफॉर्मेशन की संभावना हमेशा बनी रहती है। जलीय प्रदूषण के बेहतर प्रबंधन के लिए विभिन्न स्वदेशी और आनुवंशिक रूप से संशोधित जीवों पर निरंतर अनुसंधान की आवश्यकता है। इसलिए, जलीय प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए बायोरेमेडिएशन को अभी भी विकासशील तकनीक माना जाता है।

निष्कर्ष

भारी धातु और पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (पीएएच) प्रदूषण विभिन्न मानवजनित और प्राकृतिक स्रोतों से होता है। उनकी खतरनाक प्रकृति के कारण, उन्हें जैविक एजेंटों को नियोजित करके बायोरेमेडिएशन जैसी लागत प्रभावी और पर्यावरण–अनुकूल तकनीकों के साथ पर्यावरण से हटाये जाने की आवश्यकता है। बायोरेमेडिएशन प्रकृति में होने वाली बायोडिग्रेडेशन प्रक्रियाओं को बढ़ाकर जलीय पर्यावरण की सफाई के लिए एक पर्यावरण–अनुकूल और टिकाऊ तकनीक है। बायोरेमेडिएशन की प्रक्रिया में विशिष्ट प्रदूषकों के विषहरण को प्राप्त करने के लिए स्वदेशी सूक्ष्मजीवों का रणनीतिक उपयोग शामिल हो सकता है। प्रदूषित पर्यावरण के प्रबंधन के लिए भारी धातुओं और पीएएच विषहरण के लिए बायोरेमेडिएशन तकनीकों को सफलतापूर्वक नियोजित किया जा सकता है। संक्षेप में, बायोरेमेडिएशन भारी धातुओं और PAHs के प्रदूषण को कम करने और एक स्वच्छ और स्वस्थ पर्यावरण बनाने में एक आशाजनक तकनीक हैं।

रेन्बो ट्राउट की बीमारियाँ

सुरेश चन्द्रा, परवेज़ अहमद एवं राजा आदिल हुसैन
भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

पर्वतीयी अंचलों में मत्स्य पालन व्यवसाय प्रोटीन युक्त खाद्य की सरल उपलब्धता सुनिश्चित करने के साथ–साथ जल संरक्षण में भी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पानी का कम तापमान एवं मछलियों की धीमी बढ़वार शीतजल मछली पालन की प्रमुख विशेशताएं हैं। हाल के दिनों में पालन गतिविधियों के सघनीकरण के फलस्वरूप अनेक समस्यायें प्रायः देखी जाती हैं इसके पीछे मुख्यतः उपस्थित रोगाणु प्रदूशित जल के वातावरण जनित तनाव एवं मछलियों की संवेदनशीलता पर निर्भर करता है। शीतजल मछली पालन में एक अभ्यागत मत्स्य प्रजाति अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान देती है। इसका सामान्य नाम रेनबो ट्राउट तथा वैज्ञानिक नाम ओंकोरिकस माइकिस (*Oncorhynchus mykiss*) है। सालमानिडी वर्ग की यह रेनबो ट्राउट मूलतः उत्तर अटलांटिक एवं उत्तर पैसिफिक की है। यह शीतजल प्रजाति भारत में 19वी सदी के प्रारम्भ में स्पोर्ट गतिविधियों के लिये लायी गयी। शरीर के बीच में इन्द्रधनुषी रंग दिखाई देता है। इसी के चलते इसे रेनबो ट्राउट के नाम से जाना जाता है। उच्च आक्सीजन युक्त बहता हुआ साफ जल जिसका तापमान 0–21°C तक रहता हो, में यह प्रजाती पाली जा सकती है। यह मछली मांसाहारी प्रकृति की है। अतः दिये जाने वाले आहार में प्रोटीन की 40–45 प्रतिशत तक मात्रा दी जाती है। इसकी बढ़वार सामान्य रूप में पहले वर्श में 200–300 ग्राम तक द्वितीय वर्ष 500–600 ग्राम तक तथा तृतीय वर्ष में 1000 ग्राम तक हो जाती है। नर दूसरे साल में परिपक्वता प्राप्त कर लेता है। जबकि मादा मछली तीन साल के बाद ही अण्डे देती है। अण्डे 3–5 मिमी आकार एवं 40–60 मिग्रा वजन तक के पीलापन लिए होते हैं। एक मादा मछली से सामान्यतः लगभग 1500-.2000 के हिसाब से अण्डे प्राप्त किये जा सकते हैं। निशेचित अण्डों से हैचरी में लार्वी निकलने के लिये कुल 310–370 डिग्री डेज तापमान की जरूरत होती है। सामान्यतः चम्पावत केन्द्र की हैचरी में 4–12°C पानी के तापमान के बीच हैचिंग में 35–48 दिन तक लग जाते हैं। चम्पावत की उत्तराखण्ड की परिस्थितियों में जहां पानी का वर्श भर तापमान 2–23°C के बीच देखा जाता है वहॉ इसका प्रजनन काल दिसम्बर – फरवरी तक होता है। इस दौरान अण्डे समान आकार एवं पीलापन लिए होते है। थोड़ा सा उदर में दबाव देने से अण्ड़े बाहर निकल जाते है।

1. ऑख की बीमारी

ऑख की बीमारी मुख्य रूप से बडें आकार की मछलियों में देखी गयी। प्रभावित मछलियों की ऑखों में शुरुवात में हल्की एक लाल लाइन की तरह दिखती है। धीरे–धीरे पूरी ऑख सफेद हो जाती है और एक सफेद परत से ढ़क जाती है। पूरी ऑख का बाहर निकलना, ऑख के लेंन्स का सिकुड़ना, मछलियों का कमजोर दिखना, रंग अधिक काला हो जाना, पूरी तरह से मछलियों का अंधा हो जाना और अन्त में मछलियों की मृत्यु हो जाती है। छोटी 1–2 साल की रेनबो ट्राउट में यह बीमारी बहुत कम देखी गयी। ऐसा पाया गया है कि अधिक संक्रमण की अवस्था में लगभग 35–60 प्रतिशत तक ट्राउट मछलियों की आबादी रेसवे में प्रभावित हो गयी। अंधेपन की वजह से मछलियाँ दिया हुआ खाद्य ठीक तरह से ग्रहण नहीं कर पाती हैं और धीरे–धीरे कमजोर होकर मरने लगती हैं। कमजोर अंधी मछलियों को बड़े जलीय पक्षी भी आसानी से अपना ग्रास बना लेते है। संक्रमित ट्राउट की मृत्यु दर 30 से 40 प्रतिशत तक देखी गयी है। गर्मियों में इसके प्रभाव से ज्यादा मृत्युदर देखी गयी। जबकि

जाड़ो में इन प्रभावित मछलियों की हानि बहुत कम रिकार्ड की गयी। चम्पावत प्रक्षेत्र पर विभिन्न उम्र की ट्राउट मछलियों पर कियें गये अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि प्रभावित तीन वर्श के मादा ट्राउट प्रजनकों/ ब्रूडर में शारीरिक वजन की औसत गिरावट लगभग 30 से 44 प्रतिशत तक एवं नर में यह गिरावट 43 से 55 प्रतिशत तक पायी गयी है। जहॉ स्वस्थ्य तीन वर्ष की मछलियों का औसत वजन 611 ग्राम था एवं अण्ड उत्पादन दर 0.159 ग्राम v.Ms@xzke मछली के वजन के बराबर थी, जबकि ऑख की बीमारी से ग्रस्त तीन वर्श की मादा ट्राउट का औसत वजन लगभग 426 ग्राम एवं अण्ड उत्पादन दर 0.108 ग्राम अण्डे/ग्राम मछली के वजन के बराबर दर्ज किया गया। 4 वर्ष की सामान्य मादा मछलियों का औसत वजन 967 था, जबकि ऑख संक्रमित मादा प्रजनकों का औसत वजन 631 ग्राम दर्ज किया गया। इस प्रकार संक्रमित मछलियों में यह गिरावट लगभग 34 प्रतिशत जबकि अण्ड उत्पादन दर में 31 प्रतिशत तक की कमी देखी गयी। प्रभावित मादा मछलियों से प्राप्त अण्डों का आकार छोटा, एंव हैचरी में निषेचन दर एंव उत्तरजीविता भी अपेक्षाकृत कम पायी गयी। इस तरह यह इंगित करता है कि रेनबों ट्राउट मछलियों में ऑख का संक्रमण आर्थिक रूप से भी अत्यन्त नुकसानदायक है। ऑख संक्रमित मछलियों के बाजार भाव में भी कमी देखने को मिली। यद्यपि लम्बाई में विशेष गिरावट नही देखी गयी, परन्तु वजन में उल्लेखनीय गिरावट देखी जाती है।

आँख की बीमारी पर किये गये शोध कार्यो से यह ज्ञात होता है कि इसमें डाईजनिक ट्रिंमोटोड, डिप्लोस्टोमियम स्पैथिकम अथवा वैक्टिरिया में फ्लेवोवैक्टिरियम, विसिला या आवश्यक खाद्यों तत्वो की कमी या अत्यधिक यूवी रैडिएसन आदि से उत्पन्न होता है। इन समस्त कारकों एवं चम्पावत प्रक्षेत्र के स्थानीय परिवेश को दृष्टिगत रखते हुये ऑख की बीमारी पर शोध कार्य किया जा रहा है।

2. मुँह की लाल बीमारी

जब पालन रेसवे के पानी का तापमान 15°C से अधिक हो जाता है और यह लम्बी अवधि तक कायम रहे, तब इस बीमारी का प्रकोप रेनबो ट्राउट मछलियों में देखा गया। प्रक्षेत्र पर मई माह की शुरूवात में 2–3 दिन के अंतराल में 1–2 मछलियां मरी पायी गयी, लेकिन धीरे–धीरे इनकी संख्या बढ़ने लगी। मरी हुयी मछलियों का विस्तृत निरीक्षण करने से ज्ञात हुआ कि नीचे और ऊपर के जबडों और मुँह के अन्दर लालिमा लिये हुये सतही घाव पाये गये। गलफड़ो के ऊपर भी लाल एंव गम्भीर अवस्था में गलफडें सड़े हुये दिखायी दिये। कुछ मरी हुयी मछलियों के पश्च भाग में मलद्वार के पास बड़े–बड़े घाव पैदा हो गये, निरन्तर ट्राउट मछलियों की मृत्यु रेसवे में पायी गयी। वर्ष 2022 के मई से अगस्त के अन्तिम सप्ताह तक बहुत अधिक ट्राउट मरी हुयी पायी गयी। सभी तरह के संक्रमणों में इस रोग द्वारा लगभग 6 से 49 प्रतिशत ट्राउट मछलियों की हानि दर्ज की गई। अतः ऐसा कहा जा सकता है कि यह एक अत्यन्त घातक बीमारी हैं रेसवे के नियमित सफाई, सही जल आपूर्ति एंव बीमारी की दवा में दवा का प्रयोग लाभदायक होता है। वर्ष 2022 में चम्पावत प्रक्षेत्र पर कुल 126 मरी हुयी ट्राउट मछली में इस तरह के शारीरिक लक्षण दर्ज किये गये। अन्य जगहों पर किये गयें शोध कार्यो से ज्ञात होता है कि यह संक्रमण मुख्यतः यारसिनिया वैक्टिरिया द्वारा होता है। जिसका अधिकतम फैलाव 15–18°C के बीच होता है प्रस्तुत अध्ययन में भी इसी तरह के तापमान में यह सक्रंमण पैदा हुआ। गर्मियों के महिनों में पानी की उपलब्धता लगभग एक चौथाई से भी कम तक ही प्राप्त होती है। इसके साथ वातावरणीय तापमान भी बढ़ता है। जिनके चलते इस संक्रमण का फैलाव अधिक होता है। ऐसा पाया गया है कि वैक्टिरिया आतों में कुछ महिनों तक बिना बीमारी के लक्षण पैदा किये रह सकता है ट्राउट रेसवे में स्थापित होते ही बैक्टीरिया की संख्या बढ़ती है और लाल मुँह की बीमारी के लक्षण पैदा होते है। चम्पावत प्रक्षेत्र में क्लोरोटैट्रासाइक्लीन

70मि0ग्रा/किग्रा मछलियों को 7 दिन तक खाने से इस बीमारी पर पूर्ण नियंत्रण पाया गया। इसके साथ ही सितम्बर माह में पानी के तापमान में गिरावट के कारण भी इस पर नियंत्रण पाया जा सका। सितम्बर माह के बाद इस बीमारी का प्रकोप नही देखा गया।

3. सफेद दाग की बीमारी

यह रेनबो ट्राउट के फ्राई एवं अंगुलिकाओं की एक प्रमुख बीमारी है। मुख्यतः छोटी मछलियॉं (जीरा तथा अंगुलिकायें) इस रोग से अधिक संक्रमित होती हैं। चम्पावत प्रक्षेत्र पर यह बीमारी अगस्त– सितम्बर माह में अधिक पायी गयी। इन नर्सरीयों में 0.96 ग्राम/45 मिमि – 4.40 ग्राम/70मिमि की फ्राई 90 से 145 प्रतिवर्ग मीटर की संख्या में पाली जाती है। प्रतिदिन लगभग 8–10 ट्राउट फ्राई मरी हुयी पायी गयी। संक्रमित मछलियों के शरीर तथा गलफड़ों के ऊपर छोटे–छोटे सफेद धब्बे जैसे दिखाई दिए। बेचैनी, तालाब के किनारो की तरफ मछलियों का आना, शरीर को किसी चीज पर रगड़ना आदि प्रमुख लक्षण देखे गये। इसे खुजली की बीमारी के नाम से भी जाना जाता है। माईक्रोस्कोप मे देखने पर एक्थोपिथिरियस मल्टीफिलिस नामक परजीवी की उपस्थिति पायी गयी। इनमें सी आकार का केंन्द्रक साफ दिखाई देता है। यह एक प्रोटोजोआ परजीवी है, जो इस बीमारी का मुख्य कारण है। शीतजल मछलियों विशेषकर जीरे एवं अंगुलिकाओं का यह एक प्रमुख रोग है। बीमार मछलियों की त्वचा एवं पंखों के उपर 0.5–1.0 मिमि. आकार के सफेद दाने जैसी अत्यन्त छोटी–छोटी ग्रन्थियाँ दिखाई पड़ती हैं। इनकी आबादी वृद्धि बहुत तेजी से होती है। यह 12 से 18 घंटे की अवधि में 1,000 तक नये परजीवियों को जन्म देता जो पूरे तालाब में परपोशी की तलाश में घूमते रहते हैं, और मौका मिलते ही मछली के शरीर पर चिपक कर लाल रक्त कणिकाओं को खाते हैं। इनके संक्रमण से मछलियों में रक्त एंव हीमोग्लोबिन की कमी हो जाती है। जिससे शरीर की श्वांस लेने की शक्ति भी कम हो जाती है। मछली की त्वचा एवं रक्त कोशिकाओं को खाकर ये परिपक्वता प्राप्त कर लेते हैं तथा सफेद दागनुमा ग्रन्थियों से बाहर निकल जाते हैं। मछलियों को 2–3 नमक के घोल में 2–3 मिनट तक डुबाकर तालाब में छोड़ना काफी लाभप्रद पाया गया। यह क्रिया यदि एक सप्ताह तक की जाय तो इन परजीवियों से छुटकारा पाया जा सकता है। जलीय तापमान के बदलाव से भी इनके नियन्त्रण में मदद मिलती है।

4. ट्राइकोडिना/चिलोडिनिला द्वारा संक्रमण

गर्मियों में यह संक्रमण ट्राउट मछलियों में अधिक देखा जाता है। जब उनकी शारीरिक क्रियायें पानी की गुणवत्ता गिरावट एवं तापमान वृद्धि शिथिल पड़ जाती है। यह भी जीरों, अंगुलिकाओं एंव जुवैनाइल में अधिक पायी गयी। ये सामान्यतः त्वचा, पंखों एवं गलफड़ों के ऊपर में रहते हैं। गलफड़ों का लाल दिखाई देना, छोटे–छोटे धब्बे दिखाई देना आदि सामान्य लक्षण हैं। बीमार मछलियों में खुजली होने लगती हैं जिससे मछलियाँ शरीर को रगड़ने की कोशिश करती हैं। शरीर का रंग सामान्य से ज्यादा काला हो जाता है। शरीर का म्यूकस (ललसा द्रव्य) भी अधिक मात्रा में निकलता है। बीमार मछलियों का झुण्ड, सतह एवं किनारों पर अधिकतर आते रहते हैं। ट्राइकोडिना एंव चिलोडिनिला भी प्रोटोजोआ परजीवी है, इसकी कई प्रजातियाँ पायी जाती हैं जिनकी पहचान सूक्ष्मदर्शी यंत्र द्वारा आसानी से की जा सकती है। अधिक कार्बनिक पदार्थो का जमा होना, जलीय वातावरण के दूषण से उत्पन्न तनाव, बहुत अधिक संख्या में मछली का संचयन, अल्पाहार इत्यादि इसके प्रमुख कारण पाये गये हैं। गर्मियों के महीनों में अधिक तापमान एवं जल की कमी से ट्राउट मछलियों में इनका संक्रमण बहुत अधिक देखा गया। ये परजीवी शरीर के जीवद्रव्य को चरते हैं। उचित प्रबंधन कार्यो द्वारा इनके संक्रमण को प्रभावी रूप से कम किया जा सकता है। फैन्गल हाइफी खराब अण्डों के ऊपर

उत्पन्न हो जाते है, जो फिर अन्य स्वस्थ्य अण्डों को नुकसान पहुॅचाने की क्षमता रखते है। अध्ययन में पाया गया कि आने वाले पानी के तापमान मे अधिक गिरावट एवं बढ़ना इस तरह के संक्रमण के फैलाव मे सहायक होते है। आईड–ओवा बनने के बाद यदि अण्डे ठीक तरह से फैलाये नही गये तो क्लोगिक हो जाती है। एक दो सफेद अण्डों पर 5 से 9 स्वस्थ्य अण्डें चिपक जाते है। खराब अण्डें हैचिंग ट्रे मे रहने पर कवक फैलाव अधिक होता है।

5. रेनबो ट्राउट की वातावरण तनाव जनित स्वास्थ्य समस्यायें

वातावरणीय तनाव जनित संक्रमण द्वारा सभी उम्र की ट्राउट मछलियों की कम पानी की उपलब्धता एवं अधिक तापमान के चलते गर्मी के महिनों में भारी संख्या में मृत्यु,, इण्डोर रियरिंग में पोस्ट लारवल संक्रमण, प्रजनन तनाव जनित संक्रमण, गर्मी की शुरूआत में पक्षियों द्वारा उत्पन्न घाव, बिना चयनित अत्याधिक खाद्य ग्रहण करने की आदत से मछलियों की मृत्यु,, बिना स्ट्रिप की हुई मादा मछलियों का पोस्ट प्रजनन महिनों में संक्रमण, प्रजनन पूर्व उछलने की आदत से ट्राउट की मृत्यु, आदि प्रमुख रूप से पाये गयें। अधिकतर रोंगों की उत्पत्ति जलीय गुणवत्ता में गिरावट के कारण होती है। शीतजल मत्स्य प्रजातियां के पालन पोषण में विशेषकर रेनबो ट्राउट मछली में पानी के तापमान एंव साफ जल का विशेष महत्व हैं। माह अप्रैल से जून तक इस तरह की समस्यायें अत्याधिक देखी गयी। तुलनात्मक रूप से 50 से 150 ग्राम तक की छोटी जुवैनाइल ट्राउट में 400 से 500 ग्राम की बड़ी से अधिक वजन वाली ट्राउट की अपेक्षा अधिक मृत्युदर पायी गयी। इससे यह प्रतीत होता है कि तनाव का प्रभाव छोटी आकार एवं उम्र की मछलियों में अधिक होता है। अधिक लम्बें समय तक रेशवे के पानी का तापमान 21°C से अधिक रहना, पानी का रेसवे में बहाव, ऑक्सीजन की कमी आदि कारणों से मृत्युदर 2 वर्ष वाली ट्राउट में यह 40 से 60 प्रतिशत दर्ज की गयी। शरीर का रंग काला पड़ना, सुबह के समय सतह पर आना, गलफडों एंव शरीर के ऊपर ट्राईकोडिना आदि एंव ट्रिमाटोड परजीवी का संक्रमण देखा गया। तापमान की कमी एवं सामान्य जल आपूर्ति बहाल होने पर इस तरह के संक्रमण घटने लगते हैं और कुछ दिनों में बची हुई मछलियां सामान्य व्यवहार करने लगती है। पिछले 2–3 सालों के अप्रैल, मई, जून तीन महीनों का तापमान के आकड़ों को देखने से ज्ञात होता है कि ट्राउट रेसवे में जलीय तापमान 23.24°C तक पहुॅच जाता है जो रेनबो ट्राउट मछलियों की सामान्य शारीरिक क्रियाओं के लिए बाधक बनते है। बड़ी रेनबो ट्राउट यद्यपि 13 से 15°C तापमान में ज्यादा वृद्धि प्राप्त करती है। किंतु यह तापमान हैचरी एवं नवजात लार्वी के लिए उपयुक्त नही होता है। हैचरी में लगभग 12.13°C से अधिक तापमान पर पोस्ट लार्वी में अधिक मृत्यु पायी गयी। ऑक्सीजन की कमी से मछली सतह पर आ जाती है। काफी बेचैनी वाले लक्षण मछलियों में प्रकट होते हैं। शरीर में ऑक्सीकृत खून की सप्लाई असमान्य हो जाती है जिससे मछलियाँ मरनी शुरू होती हैं। सामान्यतः मत्स्य पालन टैंकों एवं तालाबों में ऑक्सीजन की कमी एवं कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा आवश्यकता से अधिक होने पर ट्राउट मछलियॉ अधिक प्रभावित होती हैं।

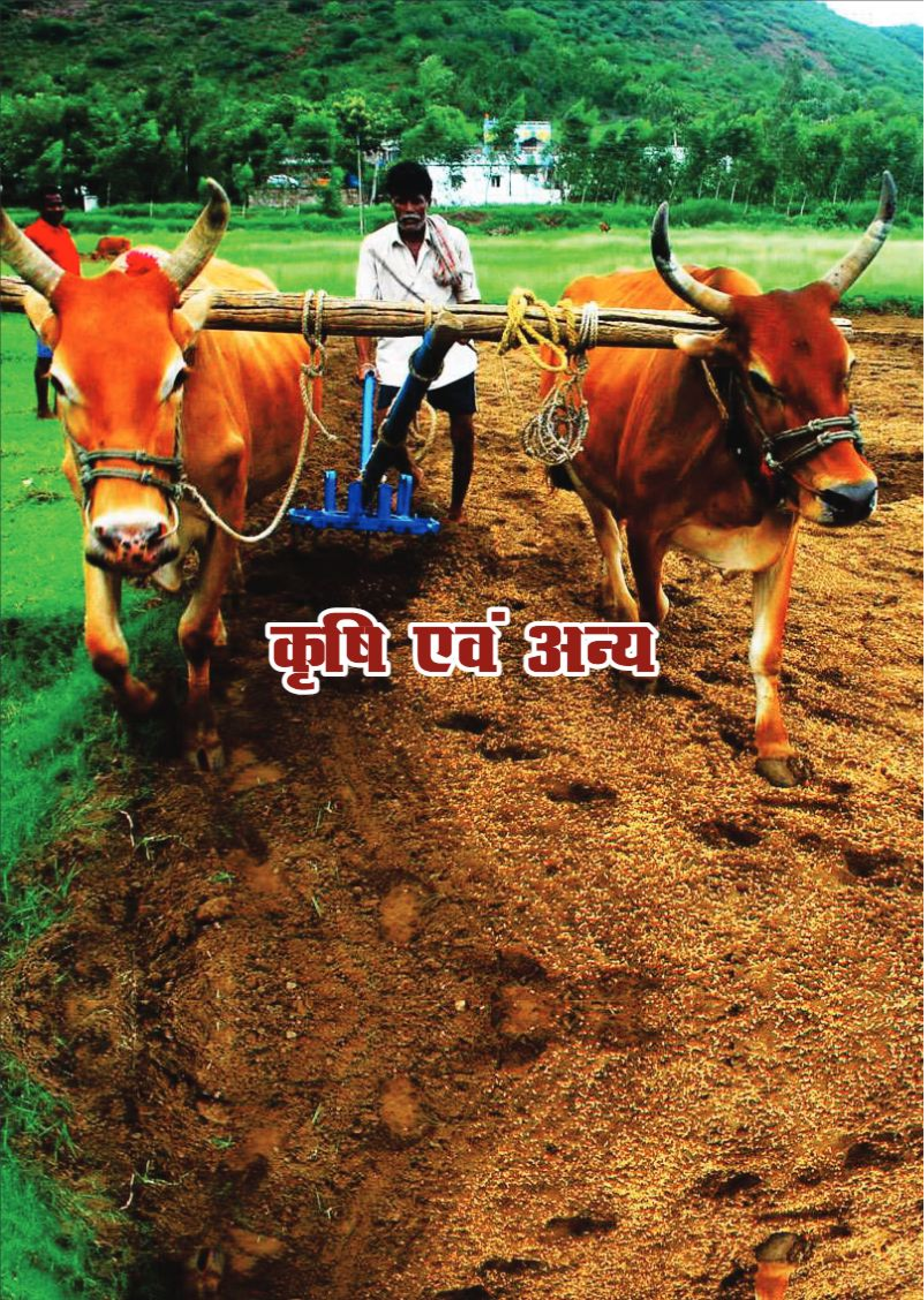

कृषि एवं अन्य

फसलोत्पादन में जैव उर्वरकों का योगदान

संजय कुमार एवं विद्यापति चौधरी
मृदा विज्ञान विभाग, स्नातकोत्तर कृषि महाविद्यालय,
डा० राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा (समस्तीपुर)

आजकल कृषि में जैव उर्वरकों का प्रयोग समय की मांग है। इसके प्रयोग से न केवल फसल का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है बल्कि, मिट्टी को अनुपजाऊ और बंजर होने से भी बचाया जा सकता है। साथ ही, रासायनिक खादों का कम प्रयोग कर देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने में अपना योगदान दे सकते हैं।

फसलों के लिए आवश्यक मुख्य पोषक तत्वों जैसे–नेत्रजन, फास्फेट एवं पोटाश में से पौधे केवल नेत्रजन को ही सबसे ज्यादा अवशोषित करते हैं और शेष पोषक तत्व या तो पानी के साथ बह जाते हैं या डिनाईट्रीफिकेशन के द्वारा वायुमंडल में मिल जाते हैं या मिट्टी में ही अस्थायी रूप से बंधक के रूप में स्थित रहते हैं। वर्तमान परिस्थितियों में नेत्रजनधारी उर्वरकों के साथ–साथ नेत्रजन के वैकल्पिक स्रोतों का उपयोग न केवल आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण है बल्कि मिट्टी की उपज क्षमता को भी टिकाऊ रखने के लिए आवश्यक है। ऐसी स्थिति में जैव उर्वरक का प्रयोग ही एक मात्र विकल्प हो सकता है।

"जैव उर्वरक ऐसे जीवित सूक्ष्मजीवों से निर्मित पदार्थ होते हैं जिनमें सूक्ष्मजीव होते हैं जिससे मिट्टी में डालने पर इसकी उर्वरता बढ़ाते हैं और पौधों के चहुँमुखी विकास में सहायक होते हैं। जैसे–राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, नील हरित शैवाल, एजोस्पिरिलियम, फास्फोबैक्टिरिया, माइकोराइजा और एजोला।

जैव उर्वरकों की विवरण

1. राइजोबियम

इस जैव उर्वरक का प्रयोग मुख्य रूप से दलहनी एवं तेलहनी फसलें जैसे–मूँग, मसूर, अरहर, चना, मटर, सोयाबीन, मूँगफली आदि में किया जाता है (अलग–अलग दलहनी एवं तेलहनी फसलों के लिए अलग–अलग प्रकार के राइजोबियम के पैकेट होते हैं) जो मिट्टी में पौधों के साथ सहजीवी के रूप में रहकर पौधे को नेत्रजन की आपूर्ति करता है। जब किसान फसलों के बीजो के साथ उपयुक्त राइजोबियम को मिलाकर बुवाई करते है तो ये जीवाणु जड़ों में प्रवेश कर जड़ों पर छोटी–छोटी गांठ बना लेते हैं और प्राकृतिक नेत्रजन को वायूमंडल से ग्रहण कर उसे पोषक तत्वों में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इसके प्रयोग से 15–40 प्रतिशत तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

2. एजोटोबैक्टर

इस प्रकार के जैव उर्वरक का प्रयोग गैर–दलहनी फसलों में जैसे–धान्य फसलें, सब्जियाँ, गन्ना आदि में किया जाता है। इसके जीवाणु मिट्टी एवं जड़ों की सतह में स्वतंत्र रूप से रहते हुए वायुमंडलीय नेत्रजन को पोषक तत्वों में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध कराता है। इसीलिए इसे असहजीवी सूक्ष्मजीवाणु भी कहते हैं। इसके प्रयोग से फसलों की पैदावार में 10–20 प्रतिशत तक वृद्धि होती है।

3. फास्फोरस विलियक जीवाणु

इस जैव उर्वरक की जीवाणु मिट्टी में मौजूद अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील अवस्था में पौधों को उपलब्ध कराता है। इस जैव उर्वरकों का प्रयोग सभी फसलों में किया जा सकता है।

4. नील हरित शैवाल

यह एक सस्ती एवं सुलभ जैव– उर्वरक है जो अपनी विशेष गुणों के कारण हवा में उपस्थित नेत्रजन को ग्रहण कर मिट्टी में 20–25 किलोग्राम प्रति हेक्टर की दर से नेत्रजन उपलब्ध कराता है। धान में इस जैव उर्वरक का 12.5

किलोग्राम मात्रा रोपाई के एक सप्ताह बाद प्रयोग करना चाहिए। किन्तु इसके प्रयोग के समय खेत में कुछ दिनों तक 3–4 इंच पानी भरा रहना चाहिए। यदि धान के खेत में किसी खरपतवार नाशी का प्रयोग किया गया है तो इस जैव उर्वरक का प्रयोग खरपतवारनाशी के प्रयोग के 3–4 दिन बाद करना चाहिए।

5. एजोस्पिरिलियम जैव उर्वरक

इस जीवाणुओं को भी असहजीवी जीवाणु कहते हैं। इसका एजोबैक्टर और एजोस्पिरिलियम जीवाणु का मिश्रित उत्पाद है। इसका प्रयोग सभी प्रकार के गैर दलहनी फसल में किया जा सकता है। ये जीवाणु अधिकाधिक अम्लीय मिट्टी में भी भली प्रकार काम कर सकता है।

6. मइकोराइजा

यह फफँदीवर्ग का सूक्ष्मजीव है जो पौधों की जड़ों से सहजीवी संबंध बनाकर मिट्टी में उपस्थित रहता है और मिट्टी में स्थिर फास्फेट को ग्रहण कर पौधों को उपलब्ध करता है। साथ ही, पौधों को अधिक अम्लीयता, क्षारीयता जैसी प्रतिकुल स्थिति से लड़ने की क्षमता प्रदान करने के अलावा कीटरोधी व रोगरोधी भी बनाता है। इसका प्रयोग भी सभी फसलों में किया जा सकता है।

7. एजोला

यह एक तैरने वाला जल फर्न है जिसमें 35 प्रतिशत नेत्रजन एवं अन्य कार्बनिक पदार्थ होते हैं। इसके प्रयोग से मिट्टी की उर्वराशक्ति बढती है। यदि नमी की उचित व्यवस्था हो तो इसका प्रयोग धान की रोपाई से एक महीने पहले ही कर देना चाहिए ताकि धान की रोपाई के समय तक यह पूरे खेत में फैल जाए जिससे मिट्टी में दबा कर हरी खाद बनाया जा सके। यह प्रतिदिन नेत्रजन स्थिरीकरण कर फसल के पौधों को लाभ पहुंचाता है।

जैव उर्वरकों के प्रयोग की विधियाँ

1. बीजोपचार

सबसे पहले 100 ग्राम गुड़ को एक लीटर पानी में घोलकर इसे 25–30 मिनट तक उबालकर ठंढ़ा कर लेते हैं। फिर जीवाणु उर्वरक के एक पैकेट (200 ग्राम) को ठंढ़े किए हुए गुड़ के घोल में अच्छी तरह से मिला देते हैं। इस घोल से एक एकड़ में बोये जाने वाले बीज की मात्रा को हाथों से मिलाकर छाया में सुखा लेते हैं और इसके तुरंत बाद बीज की बुवाई कर देते हैं।

2. मिट्टी उपचार

इसके लिए जैव उर्वरक की 4–5 किलोग्राम मात्रा को 50 किलोग्राम कम्पोस्ट में मिलाकर बुवाई के समय या बुवाई के एक दिन पहले एक हेक्टर खेत में छिडक कर मिट्टी में जुताई कर मिला देते हैं।

3. पौधों की जड़ उपचार

धान तथा सब्जी वाली फसलों के पौधों की जड़ों को उपचारित करने के लिए एक बर्तन में 6–7 लीटर पानी लेकर उसमें एक किलोग्राम जैव उर्वरक मिला लेते हैं। इसके बाद नर्सरी से पौधों को उखाड़कर और जड़ों की मिट्टी को साफ करने के बाद 50–100 पौधों का एक बंडल बांध लेते हैं और इसे उपरोक्त घोल में 10 मिनट तक डूबा कर छोड़ देते हैं। इसके बाद यथाशीध्र पौधों की रोपाई कर देते हैं।

4. कन्द उपचार

आलू, अदरक, हल्दी, ओल, गन्ना आदि फसलों में जैव उर्वरक के प्रयोग के लिए कन्दों को उपचारित किया जाता है। इसके लिए एक किलो जैव उर्वरक को 25–30 लीटर पानी में घोल लेते हैं और इसमें कन्दों की 10 मिनट तक डुबाकर रखने के बाद बुवाई कर देते हैं।

5. खड़ी फसल में उपचार

खड़ी फसल में जैव उर्वरक प्रयोग के लिए पहले निम्नलिखित मिश्रण तैयार करने हैं :

- कम्पोस्ट– 50 किलोग्राम
- राइजोबियम–1.5 – 2.0 किलोग्राम
- एजोटोबैक्टर– 0.5 किलोग्राम
- पी.एस.बी.– 0.3 किलोग्राम

उपरोक्त जैव उर्वरकों के 50 किलोग्राम कम्पोस्ट में अच्छी तरह मिला कर मिश्रित खाद तैयार कर लेते हैं। अब खड़ी फसल की दो पंक्तियों के बीच में ग्रवर चलाकर उपरोक्त मिश्रण को मिट्टी में मिला देते हैं। इस विधि से जैविक खाद की उपयोग क्षमता बढ़ जाती है।

जैव उर्वरक के प्रयोग से लाभ

1. इनके प्रयोग से फसलों की उपज में औसतन 10–20 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी होती है।
2. इनके प्रयोग से बीजों का अंकुरण जल्दी होता है और कल्लों की संख्या में भी बढ़ोत्तरी होती है।
3. फसलों के रासायनिक खादों की कुल आवश्यकता, विशेष रूप से नेत्रजन एवं फास्फोरस का 20–25 प्रतिशत तक पूरा करते हैं।
4. मिट्टी की उपज क्षमता में वृद्धि होती है।
5. मिट्टी में हयूमस की बढ़ोतरी होती है जिससे रासायनिक खादों की उपलब्धता बढ़ती है।
6. मिट्टी की भौतिक एवं रासायनिक संरचना में सुधार होता है।
7. फसलों की अच्छी उपज के अलावा गन्ने में सुक्रोज, मक्का एवं आलू में स्टार्च एवं तेलहनी फसलों में तेल की मात्रा में वृद्धि होती है।
8. रासायनिक खादों की खपत में कमी होती है जिससे उत्पादन लागत में बचत होती है।
9. फसलों में कीट एवं रोग का प्रकोप कम होता है।
10. भूमि की जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है।
11. जैव उर्वरकों के प्रयोग का लाभ अगली फसल को भी मिलता है।
12. पौधों की बढ़वार एवं जड़ों का विकास अच्छी होती है।

जैव उर्वरक के प्रयोग में सावधानियाँ

1. जैव उर्वरक का प्रयोग छायादार एवं सूखे स्थान पर करनी चाहिए।
2. इसका चुनाव फसल के अनुसार ही करनी चाहिए।
3. इसकी उचित मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिए।
4. इसकी खरीदारी के समय जैव–उर्वरक का नाम, बनाने की तारीख एवं फसल का नाम आदि को ध्यान से देख लेनी चाहिए।
5. इसका प्रयोग, इसकी समाप्ति की तिथि के बाद में नहीं करनी चाहिए।
6. उपचारित बीजों को छाया में सुखाने के तुरंत बाद बुवाई कर देनी चाहिए।
7. जैव उर्वरक के साथ–साथ यदि, बीजों को कवकनाशी या कीटनाशी से उपचारित करना हो तो कवकनाशी–कीटनाशी–राइजोबियम के क्रम का अनुसरण करनी चाहिए और जैव उर्वरक की दूगुनी मात्रा का प्रयोग करनी चाहिए। ऐसा अनुसरण नहीं करने पर जैव उर्वरक निष्प्रभावी हो जाएगा।
8. कल्चर के पैकेट को 30° सेन्टीग्रेड से कम तापमान पर भण्डारित करनी चाहिए तथा सूर्य की तेज धूप से बचाना चाहिए।

कुक्कुट पालन में ग्रामीण महिलाओं की भूमिका

दिव्या, चन्द्र देव, राजनरायण, जगवीर सिंह त्यागी, संदीप सरन एवं एम0 पी0 सागर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद -केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली

ifjp;

20वीं पशुधन जनगणना से पता चलता है कि बैकयार्ड पॉल्ट्री फार्मिंग में प्रथम जनगणना से लेकर 2020 की पशुधन जनगणना तक लगभग 46 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। आजकल व्यसायिक कुक्कुट पालन के साथ बैकयार्ड पॉल्ट्री फार्मिंग भी लोकप्रिय हो रही है। बैकयार्ड पॉल्ट्री फार्मिंग में ग्रामीण किसान भाई कम से कम लागत लगा कर अच्छे प्रोटीन स्त्रोत (अण्ड़ा और मांस) प्राप्त करते हैं। जिससे उनका परिवार कुपोषण दूर होगा, स्वयं का रोजगार प्राप्त कर सकेगें एवं घर कि महिलायें अण्डों को बेच कर परिवार की आय बढ़ाने में सहायक बनेंगीं। बैकयार्ड मुर्गी पालन ग्रामीण गरीब लोगों के बीच अर्थिक और पोषण संबन्धी स्थिती में सुधार के लिए एक प्रभावी उपकरण है। बैकयार्ड मुर्गी पालन में ग्रामीण महिलायें बहुत कम दानों के साथ रसोई के बचे खाने, बची हुई हरी सब्जियाँ और हरी सब्जियाँ, और हरी घास खिलाकर मुर्गी पालन कर सकतीं हैं।

cSd;kMZ iksYVªh QkfeZax

बैकयार्ड मुर्गी पालन क्या होता है इसमें खासकर हमारे ग्रामीण परिवार की महिलायें घर के पिछवाड़े या कोई अन्य ऐसी जगह जहाँ पर 15–20 मुर्गीयों को रख सके का चुनाव करतीं हैं

और इन्हें मौसम के अनुकूल, जंगली जानवरों से इनकी रक्षा के लिए एक आवास का निर्माण कर देती हैं। दिन के समय इन्हें चारा तलाश करने के लिए छोड़ दिया जाता है। यह मुर्गियाँ अपने चारे में रसोई से बचा रात का खाना, अनाज, कीड़े, इत्यादि खाकर अपना पेट भर लेती हैं, रात में इनके आवास में स्वच्छ और साफ पानी रखकर बन्द कर दिया जाता है।

efgyk l'kfDrdj.k vkSj iks"k.k lqj{kk esa cSd;kMZ iksYVªh QkfeZax dh Hkkxhnkjh

यदि बैकयार्ड पौल्ट्री फार्मिग में महिलाओं के पोषण और सशक्तिकरण की भागीदारी की बात की जाये तो उसे निम्न प्रकार देखा जा सकता है:

- बैकयार्ड पॉल्ट्री फार्मिंग ग्रामीण परिवार की महिलाओं को सशक्त और आत्मनिर्भर बनाता है क्योंकि इससे महिलायें अपनी आय स्वयं कर सकती हैं और पुरूषों पर अपनी अर्थिक निर्भरता को कम कर सकतीं हैं।
- ग्रामीण परिवार की महिलाओं में देखा जाये तो व्यापार करने की क्षमता कम विकसित होती है यदि वह बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग करतीं हैं तो ग्रामीण परिवार की महिलाओं में उद्यमशीलता का विकास होगा।
- बैकयार्ड पॉल्ट्री फार्मिंग से हमारे परिवार की गर्भवती महिलाओं एवं बच्चों में होने वाले कुपोषण को रोकने में मद्द मिलती है, साथ ही साथ एक स्थिर आय का स्त्रोत भी प्राप्त होता है।
- घरेलू मुर्गी पालन से मिलने वाली मुर्गी खाद में जैविक नाइट्रजोन, फास्फोरस और पोटेशियम का एक समूह होता है इसे खेतों मे डालकर खेतों की उपजाऊ क्षमता को बढ़ा सकते हैं।

cd ;kMZ eqxhZ ikyu ls gksus okys ykHk

- बैकयार्ड मुर्गी पालन में शुरूआत में कम निवेश करके अधिक लाभ कमाया जा सकता है।
- यह ग्रामीण क्षेत्रो में छोटे खाता धारक (सीमांत किसानों) को रोजगार देने का आसान उपाय है।
- जब घरेलू मुर्गी पालन की तुलना किसी ऐसे गहन तकनीकी वाले मुर्गी पालन से की जाती है तो पाया गया है कि गहन तकनीकी वाले मुर्गी पालन की तुलना में घरेलू मुर्गी पालन (घूमने–फिरने वाली मुर्गियों) के अण्ड़े और मांस में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा कम पायी जाती है और बाजार भाव अच्छा मिलता है।

cd ;kMZ iksYVªh QkfeZx ¼?kjsyw eqxhZ ikyu½ mUur n'kh uLys

बैकयार्ड पॉल्ट्री फार्मिंग में देशी नस्लों को शामिल किया जाता है क्योंकि यह नस्लें वातावरण के अनुसार अपने आप को ढाल लेतीं हैं। लेकिन शुरूआती देशी नस्लों की उत्पादन क्षमता कम और लम्बी समय अवधि होने के कारण भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, राज्य कृषि विश्वविद्यालय और निजी कंपनियां बेहतर घरेलू मुर्गी पालन की अच्छी उत्पादन क्षमता और कम समय अवधि की देशीं नस्लों पर लगातार काम कर रहीं हैं। अब तैयार नस्लों की उच्च उत्पादन क्षमता है। जिसमें 10 से 14 सप्ताह में वजन 1 किलोग्राम और अंडों की संख्या प्रतिवर्ष 140 से 160 है। बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग में मुख्य रूप से जो देशी नस्लें हैं उनमें वनराजा, कैरीश्यामा, कैरी उपकारी, कैरी हितकारी, ग्रामप्रिया, कैरी गोल्ड इत्यादि जो कि देशी नस्लों के साथ प्रौद्योगिक नस्लों के संकरण से तैयार की गयीं हैं।

यह उन्नत नस्लें बैकयार्ड पॉल्ट्री फार्मिंग के लिए अधिक लाभ अर्जित करने वाली नस्लें है यह

कैरी गोल्ड	आईसीएआर–केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली
उपकारी	आईसीएआर–केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली
कैरी श्यामा	आईसीएआर–केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली
हितकारी	आईसीएआर–केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली
वनराजा	आईसीएआर–आईसीएआर–कुक्कुट अनुसंधान निदेशालय, हैदराबाद
ग्रामप्रिया	आईसीएआर–कुक्कुट अनुसंधान निदेशालय, हैदराबाद

देशी नस्लों की तरह ही दिखतीं हैं इनकी विशेषतायें निम्न हैं:

- इनकी जीवित रहने की सम्भावना अधिक होती है।
- यह स्वयं को मौसम के अनुकूल ढाल सकतीं हैं।
- इनके अण्ड़ों का आकार बड़ा होता है।
- इनकी रोग–प्रतिरोधक क्षमता अधिक होती है।
- इनके मांस ओर अंडो का स्वाद बिल्कुल देशी मुर्गीयों की तरह ही होता है।

cd ;kMZ eqxhZ ikyu ls vk;

बैकयार्ड मुर्गी पालन ग्रामीण महिलाओं की आय का एक स्तोत्र तो है ही इसके साथ ही साथ उनके परिवार के बच्चों एवं वयस्कों में कुपोषण को भी दूर करने का एक उपाय है। तथ्यों के अनुसार देखा जाये तो यदि एक परिवार बैकयार्ड मुर्गी पालन की पद्धति के अनुसार 20–25 मुर्गीयों (20 मादा और 5 नर) को पालते है तो उनमें से 18 से 20 सप्ताह के बाद यदि 18 मुर्गियाँ अण्ड़े देने लग जाती हैं तो प्रति दिन 13 अण्ड़े आने लग जायेगें। जिनका बाजार भाव प्रति अण्ड़ा 10 रूपये है तो एक दिन की आय 130 रूपये

होती है। जोकि सप्ताह की आय 910 रूपये होगी। इसके अलावा मांस भी पर्याप्त मात्रा में मिल जाता है।

बैकयार्ड मुर्गी पालन में रूची लेकर ग्राम उमरू खूर्द, नौगवां ठग्गू, और कुमराह, ब्लॉक खटीमा जिला उधम सिंह में कमलेश राना ने 4500रू, सावित्री देवी ने 5000रू, बसंती देवी ने 4200रू, रमिता ने 4300रू, चन्द्रकली ने 5500रू, और मुन्नी देवी 5200रू प्रति माह के हिसाब से अपनी आय की। इनके अलावा अन्य महिलायें हैं जो लगभग 2000रू प्रति माह अण्ड़े और मांस के उत्पादन से लाभ प्राप्त कर अपने परिवार की आय को बढ़ाने सहयोग कर रहीं हैं।

fu"d"k

यदि बैकयार्ड पॉल्ट्री फार्मिंग के परिणाम पर नजर डालें तो यह कहा जा सकता है यह एक कम संसाधनों वाला ग्रामीण परिवार खासकर ग्रामीण गरीब महिलाओं के पोषण एवं उनकी आर्थिक जरूरतों को पूरा करने वाला एक उपकरण है। यदि ग्रामीण गरीब परिवार की महिलाओं को इसके प्रति प्रोत्साहित किया जाये और इसके लाभ को बताया जाये तो हम उन्हें एक अच्छा कम लागत वाला घरेलू व्यवसाय दे सकेंगे।

प्रतिभा जोशी, गिरिजेश सिंह महरा, [1]रेनू जेठी एवं गीतांजलि जोशी
भा.कृ.अनु.परि.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012
[1]भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

कृषि ने अधिकांश औद्योगिक और विकसित देशों में औद्योगीकरण के लिए पहली प्रेरणा प्रदान की है। यह भारतीय अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कृषि 70% से अधिक ग्रामीण परिवारों को आजीविका प्रदान करती है। साथ ही, सभी अर्थव्यवस्थाओं में इसकी एक आवश्यक भूमिका है। यह खाद्य और गैर–खाद्य दोनों आवश्यकताओं को पूरा करके कुछ बुनियादी मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करता है। पिछले कुछ वर्षो के दौरान, भारतीय कृषि ने तीव्र गति से विकास किया है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका को मापने के लिए, आर्थिक विकास पर इसके प्रभाव को देखना महत्वपूर्ण है। भारत विश्व में सबसे तेजी से आगे बढ़ती अर्थव्यवस्था है। आर्थिक विकास की दृष्टि से भारत में कृषि–आधारित उद्योगों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कृषि–आधारित उद्योग–धंधों में कपास उद्योग, गुड़ व खांडसारी, फल व सब्जियों–आधारित, आलू–आधारित कृषि उद्योग, सोयाबीन–आधारित, तिलहन–आधारित, जूट–आधारित व खाद्य संवर्धन–आधारित आदि प्रमुख उद्योग हैं। पिछले कुछ वर्षों में दूसरे उद्योगों की भांति कृषि–आधारित उद्योगों में भी काफी सुधार हुआ है। हाल ही में कृषि–आधारित उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए अनेक सरकारी योजनाओं की शुरुआत की गई, जिनमें प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन, स्टार्टअप आदि प्रमुख हैं। साथ ही, कृषि आधारित उद्योगों हेतु नई–नई प्रौद्योगिकियां, तकनीकियां एवं उन्नत मशीनें विकसित की गई हैं। परिणाम स्वरूप ग्रामीण युवाओं व किसानों को स्वरोजगार के साथ–साथ आय बढ़ाने और उन्हें आर्थिक व सामाजिक सुरक्षा देने में मदद मिली है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अनुमान के अनुसार, खाद्यान्नों की मांग वर्ष 2030 में 345 मिलियन टन हो जाएगी जिसके लिये देश को अपना उत्पादन हर वर्ष 5.5 मिलियन टन बढ़ाना होगा। साथ ही कई अन्य चुनौतियाँ जैसे घटती हुए उपजाऊ कृषि भूमि, कम होते हुए रोजगार तथा निवेश एवं बाजार के जोखिमों ने कृषि क्षेत्र में कार्यरत युवाओं के समक्ष कृषि को लाभकारी बनाने में बड़ी चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं। ऐसे में हमें उन मानव संसाधनों की आवश्यकता है जो नवोन्मेषी हों एवं प्रौद्योगिकी का इस लाभ उठा सकें, जिससे कृषि में उत्पादन, उत्पादकता और दक्षता के साथ साथ कौशल विकास एवं आय सृजन में भी वृद्धि हो सके। कृषि मे उद्यम एवं कृषि स्टार्टअप विकास इन चुनतियों का उचित समाधान बन सकता है। भारत कृषि प्रधान देश होने के साथ साथ वैश्विक स्तर पर सबसे अधिक युवाओं वाला देश भी है। कृषि क्षेत्र में भारत ने आजादी के बाद एक लंबा एवं संघर्ष भरा सफर तय किया है। हरित क्रांति तथा कृषि वैज्ञानिको के अनुसंधान तथा प्रसार ने भारत को न सिर्फ खाद्यान में वरन दुग्ध उत्पादन में भी विश्व के शिखर में खड़ा कर दिया और आज भारत फल एवं सब्जियों में, दूध, मसाले एवं जूट में वैश्विक स्तर सबसे बड़ा उत्पादक है। धान एवं गेहूँ में भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक एवं वैश्विक स्तर पर भारत 80 प्रतिशत से अधिक फसलों का सबसे बड़े उत्पादकों में से एकहै। गत हरित क्रांति रणनीति द्वारा भारत में कृषि क्षेत्र के विकास के लिए कृषि उत्पादन बढ़ाने और देश की खाद्य सुरक्षा में सुधार लाने पर जोर दिया गया था। हरित क्रांति ने विश्व पटल पर भारत को अन्न पर्याप्त देश बना दिया है। लेकिन जहाँ एक तरफ हमने विश्व में अपने आप को कृषि उत्पादन में साबित किया है वही दूसरी ओर बड़ती हुए आबादी, घटती हुए उपजाऊ कृषि भूमि, कम होते हुए रोजगार तथा निवेश एवं बाजार के जोखिमों ने कृषि क्षेत्र में कार्यरत

युवाओं के समक्ष कृषि को लाभकारी बनाने में बड़ी चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं। कृषि मे कौशल विकास इन चुनतियों का उचित समाधान बन सकता हैं किन्तु वर्तमान परिपेक्ष में कृषि क्षेत्र में युवाओं का कौशल विकास करना अपने आप में एक बड़ी चुनौती है, इसलिये आज समय की मांग खाद्य सुरक्षा में सुधार के साथ–साथ अधिक आय अर्जित कर किसान को आत्मनिर्भर बनाना भी है।

vkRefuHkZj Hkkjr

'आत्मनिर्भर भारत', भारत को एक आत्मनिर्भर राष्ट्र बनाने सम्बन्धी एक दृष्टि (विजन) है। इसका पहली बार सार्वजनिक उल्लेख भारत के प्रधानमंत्री ने 12 मई 2020 को किया था जब वे कोरोना–वाइरस विश्वमारी सम्बन्धी एक आर्थिक पैकेज की घोषणा कर रहे थे। आत्मनिर्भर भारत अभियान के पाँच स्तम्भ निम्नलिखित हैं–

%1½ vFkZ;oLFkk% एक ऐसी अर्थव्यवस्था जो छोटे–छोटे परिवर्तन (इंक्रिमेंटल चेंज) नहीं, बल्कि ऊँची छलांग (क्वांटम जंप) लाए।

%2½ cqfu;knh <kapk% एक ऐसा बुनियादी ढांचा, जो आधुनिक भारत की पहचान बने। विदेशी कंपनियों को आकर्षित कर सके।

%3½ ç.kkyh | kfxdh% एक ऐसा सिस्टम, जिसमें आधुनिक तकनीक को अपनाने और समाज में डिजिटल तकनीक का उपयोग बढ़ाना शामिल है।

%4½ tulkf[;dh %MseksxzkQh%% भारत की जीवन्त जनसांख्यिकी हमारी ताकत है, आत्मनिर्भर भारत के लिए ऊर्जा का स्रोत है।

%5½ ekax% भारत के पास बड़ा घरेलू बाजार और मांग है, उसे पूरी क्षमता से इस्तेमाल किए जाने की जरूरत है।

भारतीय स्टार्ट–अप पारिस्थितिकीय प्रणाली ने पिछले कुछ वर्षों में अभूतपूर्व विकास का प्रदर्शन किया है, और अब भारत वैश्विक रूप से स्थापित किए जाने वाले स्टार्ट–अप की संख्या के संदर्भ में सर्वोच्चत तीन देशों में से एक देश के रूप में उभरा है। तथापि, सभी देशों के स्टार्ट–अप पारिस्थितिकी प्रणाली के सैक्टरवार ब्रेक–अप से यह पता चलता है कि कृषि क्षेत्र की ओर विभिन्न स्टेकहोल्डकरों, विशेष रूप से निवेशकों, का ध्यान कम जाता रहा है। इसके मुख्य कारण उच्चतर जोखिम, जलवायु जोखिम, कृषि भूमि का उच्च मात्रा में विखण्डीकरण, आंकड़ो की कमी, सप्लाई श्रृंखला में पारदर्शिता की कमी आदि हैं। तथापि, भारतीय कृषि में एक मुख्य बदलाव देखा गया है जिससे पता चलता है कि किसानों की विचारधारा में अब परिवर्तन होने लगा है और ऐसा सरकार की उद्यमशीलता विकास को प्रोत्साहित करने और स्टार्ट–अप को सहायता प्रदान करने की नीति में परिवर्तन के कारण संभव हुआ है। केन्द्र सरकार द्वारा गैर नीतिगत उपायों जैसे कि राष्ट्रीय बौद्धिक संपदा अधिकार (आई.पी.आर. नीति 2016) और स्टार्ट–अप इंडिया (2016) की शुरूआत करने से संगठनों में अनुसंधान और विकास में नवप्रर्वतनों के एक कल्वर का निर्माण हुआ है जो उद्योग–शिक्षाविदों के बीच सहभागिताओं को प्रोत्साहित करते हैं। इसके साथ–साथ, इन पहलों से प्रक्रियाएं और हैंड होल्डिंग सरल हुई हैंय निधियों की सहायता प्राप्त हुई हैं और प्रौद्योगिकियों को कृषि व्यवसाय में रूपांतरित करने में बढ़ावा देने के लिए की जाने वाली पहलों को भी प्रोत्साहित किया जा रहा है।

इसलिए, पिछले कुछ वर्षों में अनेक शिक्षित युवा, जिनके पास नए विचार हैं, काम करने का जोश है, कृषि को उसके पारंपरिक रूप से ऊपर उठाकर हाईटैक व्यवसाय मॉडलों और नई प्रकार की प्रौद्योगिकियों की शुरूआत करने की ओर आकर्षित हुए हैं। ये उद्यमी और स्टार्ट–अप कृषि मूल्य श्रृंखला में लुप्त हो चुके सम्पर्क उपलब्ध करा सकते हैं और किसानों और ग्राहकों दोनों को उत्पादों, प्रौद्योगिकियों और सेवाओं की त्वरित और दक्ष डिलीवरी कर सकते हैं। खाद्य और कृषि क्षेत्र में आई.सी.टी.–एप से फार्म ओटोमेशन, स्मार्ट पोल्ट्री और डेयरी उद्योगों से स्मार्ट कृषि की ओर तथा संरक्षित कृषि से नवोन्मेषी खाद्य प्रसंस्करण और पैकेजिंग की ओर प्रौद्योगिकी प्रेरित स्टार्ट–अप उभर रहे हैं। नई प्रौद्योगिकियों के साथ नए स्टार्ट–अप बनाने के अलावा, यह उतना ही महत्वपूर्ण है कि हमारे देश में बहुत बड़ी संख्या में छोटे पैमाने के किसान

उसी रूप में उद्यमी बन सकें जैसी कि वे खेती करते हैं। तथापि, इन किसानों के लिए यह चुनौती है और इसके लिए उन्हें प्रसार कार्यकर्ताओं और अन्य संस्थानों की सहायता की आवश्यकता है। उन्हें एक बेहतर और अधिक दक्ष और लाभप्रद रास्ते बताए जाने चाहिए जिससे कि वे अपने खेतों से अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकें।

कृषि मे उद्यम एवं कृषि स्टार्टअप्स

भारत दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा स्टार्टअप प्रणाली है जिसमें लगभग 12–15% की निरंतर वार्षिक वृद्धि होती है। भारत में 2018 तक लगभग 50,000 स्टार्टअप थे तथा वर्ष 2019 में 1300 नए स्टार्टअप का जन्म हुआ (www-startupindia-gov-in)। कृषि में स्टार्टअप अभी अपने शुरुवाती दौर में है। कृषि प्रौद्योगिकी स्टार्ट–अप, कृषि मूल्य श्रृंखला (वैल्यू चौन) में एक ऐसा सार्थक समाधान है जो उत्पाद, सेवा या एप्लिकेशन के रूप में हो सकता है। 16 जनवरी 2016 को प्रारंभ की गई स्टार्टअप इंडिया पहल ने उद्यमियों को सहायता देने, मजबूत स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण और भारत में नौकरी तलाशने वालों की जगह नौकरी सर्जक देश में बदलने के उद्देश्य से कई कार्यक्रम आरंभ किए गए। यह कार्यक्रम स्टार्टअप इंडिया की समर्पित टीम द्वारा प्रबंधित किया जाता है, जो उद्योग नीति और संवर्धन विभाग (डी.पी.आई.आई.टी.) को रिपोर्ट करता हैं। राष्ट्रीय स्तर पर, वर्ष 2013 से 2017 तक कुल 366 कृषि–आधारित स्टार्ट–अप शुरू हुए हैं, जिन्हे भारत सरकार की उद्यम विकास हेतु योजनाओं जैसे स्टार्ट अप इंडिया, अटल इनोवेशन मिशन, न्यूजेन इनोवेशन तथा उद्यमता विकास केंद्र, लघु कृषक एग्री बिसनेस संघ और एस्पायर योजना द्वारा प्रचारित वेंचर कैपिटल फाइनेंस असिस्टेंस (वी.सी.ए.) योजना से सहयोग मिला है तथा इन स्टार्ट–अप को भारत सरकार ने अपनी विभिन्न रिपोर्ट्स में शामिल किया है, इनमें से 50% से अधिक स्टार्ट–अप वर्ष 2015 और 2016 में शुरू हुए हैं। कुल मिलाकर वर्ष 2018 तक भारत में सभी क्षेत्र के स्टार्टअप के 350 बिलियन अमरीकी डालर राजस्व में से एग्रीटेक स्टार्ट–अप का संयुक्त राजस्व मात्र 100 मिलियन अमरीकी डालर आँका गया (फेडरेशन ऑफ इंडियन चौंबर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री, 2018)। तालिका:1 कृषि–आधारित स्टार्ट–अप की संख्या में वार्षिक वृद्धि एवं राज्यों द्वारा वित्तपोषण को दर्शाती है।

तालिका: 1

कृषि–आधारित स्टार्ट–अप की संख्या में वार्षिक वृद्धि एवं राज्यों द्वारा वित्तपोषण

—f"k&vk/kkfjr LVkV.&vi		jkT; LVkV.&vi		
o"k	संख्या	राज्य	कृषि स्टार्ट–अप की संख्या (प्रतिशत)	कृषि स्टार्ट–अप की में वित्त पोषण (प्रतिशत)
2013	43	कर्नाटक	27	67
2014	59	महाराष्ट्र	22	7
2015	117	हरियाणा	9	–
2016	109	दिल्ली–एनसी.आर.	9	11
2017	38	तमिलनाडु	7	–
2018 एवं 2019	84	तेलंगाना	–	7
कुल	450	गुजरात	–	
योग		अन्य	11	8

(श्रोत: ''भारत में एग्रीटेक–2018 में उभरते रुझान, NASSCOM, 2018 एवं ''भारत में एग्रीटेक–2019 में उभरते रुझान, NASSCOM, 2019)

विगत 10 वर्षों में कृषि स्टार्ट–अप का विकासदेश में पांच केन्द्रित क्षेत्रों में जैसे आपूर्ति श्रृंखला, बुनियादी ढांचा विकास, वित्त समाधान, फार्म डेटा विश्लेषण और सूचना मंच में हुआ है। आपूर्ति श्रृंखला स्टार्ट–अप में मुख्यतः ई–वितरण, ई–मार्केटप्लेस और कई लिंकिंग प्लेटफॉर्म में काम करने वाले शामिल हैं। बुनियादी ढांचा विकास में बड़े पैमाने पर अनेक प्रौद्योगिकियों जैसे कृषि प्रबंधन समाधान, ड्रिप सिंचाई, मृदा रहित नर्सरी उत्पादन व पौध संवर्धन, हाइड्रोपोनिक्स आदि शामिल हैं। वित्त से संबंधित समाधान में भुगतान, राजस्व बंटवारा और नवोन्मेषी वित्त प्रणाली शामिल हैं। फार्म डेटा एनालिटिक्स में फार्म मैपिंग, फील्ड ऑपरेशंस और रिमोट सेंसिंग शामिल हैं तथा सूचना मंच कृषि प्रसार, विपणन एवं व्यवसाय से जुड़े हैं। किसानों को कृषि उद्यमियों के रूप में उभरने में बाधा डालने वाले मुद्दों और चुनौतियों की पहचान करना अत्यंत आवश्यक है। कुछ साल पहले से, सरकार विभिन्न प्रकार की सहायता प्रदान करने में सहयोग करने के लिए संघीय और राज्य दोनों सरकारों से विभिन्न संस्थानों को नियुक्त करने का प्रयास कर रही है। कृषि–व्यवसाय–उद्यमिता की वृद्धि के लिए यहां कुछ समर्थन संरचनाएं तैयार की गई हैं।

आर०के०वी०वाई०: रफ्तार एग्री बिजनेस इनक्यूबेटर (आर–एबीआई)

कुल 24 आर–एबीआई और 5 नॉलेज पार्टनर्स (केपी) कृषि व्यवसाय उद्यमिता की जरूरतों को पूरा कर रहे हैं, जिसका उद्देश्य ए) योग्य इनक्यूबेट्स को समय पर सहायता सुनिश्चित करना, बी) सक्षम बनाना है और न्यूनतम व्यवहार्य उत्पाद (एम.वी.पी.) को विपणन योग्य चरण में अनुवाद करने और उत्पाद और व्यवसाय को बढ़ाने के लिए सहायता, सी) नवीन समाधानों / प्रक्रियाओं / उत्पादों सेवाएँ / व्यवसाय मॉडल आदि को बढ़ाने के लिए के आधार पर उनके दृष्टिकोण या न्यूनतम व्यवहार्य उत्पाद (एमवीपी) में तेजी से प्रयोग और संशोधन के लिए एक मंच प्रदान करना। आईसीएआर–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (आईएआरआई) के तहत कुल 14 आर–एबीआई इनक्यूबेटियों को उनके उत्पादों/सेवाओं/व्यावसायिक प्लेटफार्मों आदि को बाजार में लॉन्च करने और उन्हें अपने संचालन को बढ़ाने के साथ–साथ व्यवसाय हासिल करने में मदद करने के लिए काम कर रहे हैं।

एग्री इंडिया हैकथॉन

एग्री इंडिया हैकथॉन संवाद बनाने और नए दृष्टिकोण और अत्याधुनिक अनुसंधान और ज्ञान के साथ कृषि में नवाचारों में तेजी लाने के लिए सबसे बड़ी आभासी सभा है। एग्री इंडिया हैकाथॉन भविष्य के कृषि विकास के लिए एक रोडमैप प्रदान करने के लिए 5 परस्पर जुड़े क्षेत्रों में कार्य करने में सक्षम है। विभिन्न फोकस क्षेत्रों से 24 सर्वश्रेष्ठ नवाचारों को प्रत्येक को 1,00,000 रुपये के नकद पुरस्कार से सम्मानित किया जाएगा। इसके अलावा, जीतने वाले नवाचारों को स्वतंत्र आर०ए०बी०आई० द्वारा मूल्यांकन के अधीन, 24 आर०ए०बी०आई० में से किसी एक में क्रमशः 5 लाख और 25 लाख की ऊष्मायन सहायता, प्री–सीड और सीड–स्टेज फंडिंग के लिए विशेष प्राथमिकता मिलेगी। इसके अलावा जीतने वाले नवाचारों को फील्ड ट्रायल का अवसर मिलेगा और हमारे संस्थानों के नेटवर्क से प्रौद्योगिकी सत्यापन तक पहुंच भी मिलेगी।

;ŒihŒtŒ,Œ

प्रौद्योगिकी सत्यापन और बैकस्टॉपिंग, पायलट अवसर और संस्थागत नेटवर्क, अत्याधुनिक बुनियादी ढांचे तक पहुंच, उद्योग जगत के नेताओं से बिजनेस मेंटरिंग और बाजार लिंकेज और निवेशकों के जुड़ाव के अवसर के साथ 25 लाख तक की अनुदान सहायता। पूसा कृषि, आई.सी.ए.आर.–आई.ए.आर.आई. द्वारा एक विशेष पहल ऊष्मायन कार्यक्रम, कृषि के भविष्य को बदलने के लिए प्रारंभिक चरण के नवप्रवर्तकों और उद्यमियों का पोषण। उपजा एमवीपी

(न्यूनतम व्यवहार्य उत्पाद) चरण में नवीन समाधानों के साथ स्टार्टअप्स को प्रौद्योगिकी सत्यापन, सलाह और मार्गदर्शन, पायलट अवसर, बाजार में समर्थन और उद्योग लिंकेज प्रदान करता है।

एराइज प्रौद्योगिकी सत्यापन और बैकस्टॉपिंग, पायलट अवसर, उद्योग जगत के नेताओं से बिजनेस मेंटरिंग और मार्केट लिंकेज और इन्वेस्टर्स कनेक्ट के अवसर के साथ 5 लाख तक की अनुदान सहायता Arise का इरादा प्रारंभिक चरण के विचारों और स्टार्टअप को स्थायी व्यवसायों में विकसित करने और विकसित करने का है। यह कार्यक्रम कृषि पारिस्थितिकी तंत्र में प्रभावशाली समाधान बनाने की दृष्टि से व्यवसाय और प्रौद्योगिकी सत्यापन, मजबूत सलाह और सलाह, बाजार लिंकेज और कनेक्शन तक पहुंच प्रदान करता है।

कृषि में स्टार्टअप्स एवं उद्यम विकास

157.35 मिलियन हेक्टेयर के साथ, भारत दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी कृषि भूमि वाला देश है। विश्व की सभी 15 प्रमुख जलवायु भारत में मौजूद हैं तथा दुनिया के 60 में से 46 प्रकार की मिट्टी भी भारत में उपलब्ध है। धान एवं गेहूँ में भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक एवं वैश्विक स्तर पर भारत 80 प्रतिशत से अधिक फसलों का सबसे बड़े उत्पादकों में से एक है। भारत ट्रैक्टर, हार्वेस्टर और टिलर जैसे कृषि उपकरण के सबसे बड़े निर्माताओं में से एक है। विश्व स्तर पर कुल ट्रैक्टर उत्पादन का लगभग एक–तिहाई हिस्सा भारत का है। यह सब बातें भारत में स्टार्टअप्स एवं उद्यम विकास हेतु असीम संभावनाएँ प्रस्तुत करती हैं इसलिये परंपरागत कृषि के साथ साथ अन्य उद्यम स्रोतों को पहचानना तथा उनमें किसानों का कौशल विकास करवाना होगा, कुछ प्रमुख उद्यम तथा नवोन्मेषी गतिविधियां निम्नलिखित हैं जिनमें स्टार्टअप्स हेतु असीम संभावनाएँ हैं :

(I) foi.ku

किसानों को अपने उत्पादों का सीधा विपणन करना आवश्यक है तथा अपने उत्पादन की अच्छी कीमत कहाँ मिलेगी उसका सर्वे कर अपने उत्पादों को उन बाजारों तक भेजने की व्यवस्था खुद करनी चाहिए। इस मॉडल से बिचौलियों की भागीदारी समाप्त हो जाती है तथा उपभोक्ता के प्रत्येक रुपये का अधिकांश हिस्सा किसान के हक में जाता है।

(ii) lL;kÙkj çca/ku rFkk eiY;o/kZu

भारत में लगभग 7 प्रतिशत भाग का ही कृषि उत्पाद में मूल्य संवर्धन किया जाता है, कटाई उपरान्त उचित प्रबंधन न होने के कारण फलों एवं सब्जियों का 25–40 प्रतिशत एवं अनाजों का 10–30 प्रतिशत भाग नष्ट हो जाता है। किसान और उद्यमी सरल, कम लागत वाली अभिनव प्रसंस्करण तकनीकें अपनाकर अपनी स्वयं की प्रसंस्करण इकाइयां स्थापित कर सकते हैं जिनसे न केवल सस्योत्तर हानियों में कमी आएगी बल्कि उत्पादकों को अच्छा लाभ मिलेगा तथा प्रसंस्करणकर्ताओं/उद्यमियों को भी बेहतर आमदनी होगी। अपने उत्पादों की ग्रेडिंग, पैकजिंग एवं प्रसस्करण कर किसान उससे अधिक से अधिक आमदनी प्राप्त कर सकते हैं तथा स्वरोजगार को भी बढ़ावा दे सकते हैं। अपना ब्रांड बनाकर एक अपना बाजार स्थापित कर विश्वसनीयता बनाई जा सकती है जिसका अधिकतम लाभ उत्पादक किसान, किसान समूह/उत्पादक समूह एवं उपभोक्ता सभी को होगा।

(iii) lxfBr mRiknu

उत्पादन की मात्रा के आधार पर ही उसका विपणन निर्धारित होता है। अतः कुछ किसान संगठित होकर एक ही तरह की फसल/फल/फूल/ सब्जियों की खेती करेंगे तो उसे दूर भेजने में परिवहन खर्च में कमी आएगी तथा दूरस्थ बाजारों में मिलने वाली अच्छी कीमतों का लाभ उठाया जा सकेगा। इसमें भारत सरकार द्वारा 2016 में स्थापित 'ई–नाम' पोर्टल का सहयोग कारगर हो सकता है जो भारत की मंडियों को डिजिटली जोड़ता है।

(iv) mRikn fo'k"k ij dfUær jguk

किसी एक उत्पाद पर केन्द्रित रहने का अर्थ है उससे संबंधित ज्ञान अर्जन, उत्पादन, मूल्य सवंर्धन आदि में महारथ हासिल होना। इसका फायदा समय के साथ मिलता है। साथ ही अन्य उत्पादकों की तुलना में पहले होने की वजह से बाजार में भी अच्छी पकड़ रहती है, जिससे बाजार में अपना ब्रांड स्थापित करके उसका फायदा उठाने में मदद मिलती है।

(v) lefdr –f"k ç.kkyh

एक विशेष उत्पाद के अतिरिक्त किसान अन्य कृषि उत्पादों पर भी ध्यान देंगे तो आय में संमृद्धि होगी और जोखिम प्रबंधन भी होगा। फसल प्रणाली की सघनता को बढ़ाकर भी प्रति इकाई उत्पादकता/ आमदनी को बढ़ाया जा सकता है। आज ग्रामीण युवाओं को खेती की ओर आकृष्ट करना और उन्हें इसमें बनाए रखना राष्ट्र के समक्ष एक बड़ी चुनौती है। ऐसे परिदृश्य में समेकित कृषि प्रणालियां (आई०एफ०एस०) आशा की एक ऐसी किरण दिखाई देती हैं जिनमें किसानों की आय बढ़ाने व रोजगार सृजित करने, खेती में होने वाले जोखिमों को कम करने व संसाधन उपयोग की दक्षता बढ़ाने की बहुत क्षमता है। सम्बद्ध गतिविधियों को एकीकृत करने से प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, खनिज और विटामिनों से समृद्ध पोषक भोजन की उपलब्धता में वृद्धि होगी। समेकित फार्मिंग से पर्यावरण की सुरक्षा भी होगी क्योंकि इसके माध्यम से पशुओं की गतिविधियों जैसे सूकर पालन, कुक्कुट पालन, बकरी पालन और डेरी आदि से जो अवशिष्ट पदार्थ प्राप्त होता है उसका प्रभावी रूप से पुनश्चक्रण करना संभव हो पाता है।

(vi) ckxokuh Qlyk dh lijf{kr [krh

बागवानी फसलों की संरक्षित खेती से परंपरागत कृषि उत्पादन प्रणाली के स्थान पर विविधीकरण करना कई कारणों से एक बेहतर विकल्प है। सुरक्षित दशाओं में फसलोत्पादन से मुख्य तथा बेमौसम में सब्जियों, पुष्पों तथा फलों की उत्पादन क्षमता व गुणवत्ता बढ़ाने में बहुत सफलता मिलती है और इससे विविध प्रकार की कृषि जलवायु संबंधी परिस्थितियों में जल तथा पोषक तत्वों का सर्वोच्च संरक्षण प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रौद्योगिकी से निकट भविष्य में कृषि के क्षेत्र में बहुत अपेक्षायें हैं क्योंकि इसका उपयोग उच्च मूल्य वाली सब्जी की फसलें जैसे टमाटर, चेरी टमाटर, रंगीन शिमला मिर्च, अनिषेकजनित खीरा, कर्तित फूलों जैसे गुलदाउदी, लिलियम आदि के पुष्प, स्ट्राबेरी, अंगूर आदि को उगाने के लिए लाभदायक ढंग से किया जा सकता है।

(vii) ch t mRiknu

भारत में खेती से होने वाली आय को बढ़ाने में केन्द्रीय भूमिका निभाने वाले प्रमुख घटकों में से एक घटक उच्च गुणवत्ता वाले बीजों व रोपण सामग्री का उपयोग है। अतः नयी एवं उन्नत प्रजातियों के बीज उत्पादन से विभिन्न कृषि पारिस्थितिकियों में पैदावार को बढ़ाया जा सकता है। केवल गुणवत्तापूर्ण बीज का उपयोग करके ही फसल उत्पादकता 15–25 प्रतिशत बढ़ाई जा सकती है। उत्पादकता बढ़ाने के लिए बीज उच्च गुणवत्ता वाला होना चाहिए जिसमें अनुकूल खेती की परिस्थितियों के अंतर्गत अधिकतम अंकुरण होना चाहिए।

(viii) mUur Qly rduhdi

भारत में अनाजों, दलहनी फसलों, तिलहन, कदन्न आजीविका एवं खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के प्रमुख आयाम है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान विभिन्न फसलों की प्रजातियां उन्नत करने में कई वर्षो से निरंतर कार्यरत है। संस्थान बासमती चावल, गेहूं, सरसों, अरहर, मसूर दालों की उच्च उत्पादकता वाली कई किस्म को बनाने में अग्रणी भूमिका निभा चुका है। इस तरह से यह किसानों की आय में वृद्धि एवं उनके सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों को सुधारने में निरंतर कार्यरत है।

(ix) e/keD[kh ikyu

विशेष रूप से भूमिहीन युवाओं के लिए

रोजगार सृजन की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण व्यवसाय के रूप में उभरा है। यह उद्यम मधुमक्खियों की 20 कालोनियों से आरंभ किया जा सकता है और प्रति कालोनी की लागत 5000 रुपये आती है। यहां इस्तेमाल होने वाले अन्य उपकरण हैं शहद निकालने की युक्ति, छत्ता से संबंधित औजार, बिना ढक्कन की ट्रे और चाकू जो आसानी से उपलब्ध हैं और सस्ते भी हैं। मधुमक्खी पालन एक विकेंद्रीकृत, वन्य तथा ग्रामीण कृषि आधारित उद्योग है जिसके लिए बहुत कम कच्चे माल की जरूरत होती है। इससे शहद के रूप में बहुमूल्य पोषण भी उपलब्ध होता है। इसके अलावा इस व्यवसाय में मधुमक्खियों से शहद के अलावा मधुमक्खी मोम, प्रोपोलिस, पराग, रॉयल जैली, रानी मक्खियों की वंशावली, पैकेज मधुमक्खियां जैसे बहुमूल्य उत्पाद प्राप्त होते हैं। फसल परागण के लिए मधुमक्खी कालोनियों को किराए पर देने से भारत में कृषि के विविधीकरण के क्षेत्र में एक नया आयाम उपलब्ध हो सकता है। मधुमक्खी पालन में अन्य गौण उद्योग विकसित करने की भी बहुत क्षमता है लेकिन अभी तक इन क्षमताओं का उचित रूप से उपयोग नहीं किया जा सका है। यदि ऐसा हो सके तो ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे और आमदनी भी बढ़ेगी।

(x) okf.kfT;d Lrj ij [kEch dh [krh

खुम्बियां ऐसे ताजे कवक हैं जो पूर्णतः शाकाहारी आहार हैं। ये बहुत स्वादिष्ट और पोषक होती हैं। कुछ खुम्बियां खाद्य हैं, जबकि अन्य विषैली भी हैं। अब तक खुम्बी के 1600 प्रकार ज्ञात हैं जिनमें से लगभग 100 को विश्वभर में भोजन के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। किसी भी फार्मिंग प्रणाली के विविधीकरण से टिकाऊपन आता है। खुम्बी ऐसे घटक हैं जिनसे न केवल विविधीकरण होता है बल्कि गुणवत्तापूर्ण खाद्य, स्वास्थ्य तथा पर्यावरण से संबंधित मुद्दों को हल करने में भी सहायता मिलती है। यह एक ऐसा प्रमुख क्षेत्र है जो प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, कृषि उद्योग अपशिष्ट सहित कृषि अपशिष्टों के पुनष्चक्रण द्वारा उत्पादन को बढ़ाने की क्षमता रखता है। खुम्बी उगाने के लिए ऐसे अपशिष्टों का उपयोग करने से आमदनी में वृद्धि होती है तथा इससे उच्च स्तर का टिकाऊपन भी आता है। खुम्बी की खेती स्थानीय अर्थव्यवस्था को सहारा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है क्योंकि इससे खाद्य सुरक्षा, पोषण और औषधी के क्षेत्र में पर्याप्त योगदान होता है, अतिरिक्त रोजगार और आय सृजित होती है और ऐसा स्थानीय, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर के व्यापार द्वारा होता है, इसके अलावा इससे प्रसंस्करण उद्यमों के लिए अधिक अवसर प्राप्त होते हैं। इसे छोटे और सीमांत किसानों द्वारा आसानी से अपनाया जा सकता है क्योंकि इसके लिए बहुत कम भूमि की आवश्यकता होती है।

(xi) Mjh ikyu

दूध उत्पादन भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देता है। परंपरागत खेती के साथ इसे अपनाने वालों के लिए डेरी पालन प्राकृतिक आपदाओं के विरुद्ध एक प्रकार से बीमा का कार्य करती हैं और इसके साथ ही खाद्य सुरक्षा व पोषणिक पुनश्चक्रण में भी सहायता पहुंचाती हैं। यदि डेरी पालकों का डेरी से संबन्धित क्रिया विधियों, सामग्री और इसके साथ–साथ डेरी पशुओं से उपयुक्ततम उत्पादन में कौशल विकास किया जाए तो डेरी उद्यम से होने वाले लाभ में बहुत वृद्धि की जा सकती है। इसके लिए दूध व दूध से निर्मित पदार्थों के उचित विपणन की भी आवश्यकता होगी।

(xii) lwvj ikyu

विभिन्न पशुधन प्रजातियों में से सूअर मांस उत्पादन के लिए सबसे सक्षम स्रोत हैं तथा ब्रायलर के पश्चात् ये एक अन्य महत्वपूर्ण कारगर आहार परिवर्तक हैं लेकिन वर्तमान में वाणिज्यिक स्तर पर सूअर पालन के मामले में भारत में सामाजिक परिदृश्य में बहुत परिवर्तन हुआ है। अब प्रत्येक व्यक्ति सूअर पालन के आर्थिक महत्व के बारे में सचेत है। मांस उत्पादन के लिए सूअर

पालन लोगों के लिए एक सर्वश्रेष्ठ और लाभदायक व्यापार सिद्ध हो सकता है। सूअरों की अनेक उच्च मांस देने वाली नस्लें हैं और इस उद्यम के लिए कम मात्रा में आरंभिक निवेश की जरुरत होती है, लाभ तेजी से मिलता है और इस पशु का महत्व बढ़ने के कारण इसके अन्य उपयोग भी हो सकते हैं जैसे सूअर के मल से खाद बनाना। सूअर एक उच्च गति से जनन करने वाला पशु है जिसके एक प्रसव में 10–12 शूकर शिशु जन्मते हैं जो न्यूनतम निवेश में भी तेजी से वृद्धि प्राप्त करते हैं। आवास तथा उपकरणों, उचित आहार और रोग नियंत्रण के ठोस कार्यक्रमों पर बहुत कम निवेश करते हुए कोई भी सूअर पालक अपने समय और श्रम का इस गौण व्यवसाय में लाभदायक उपयोग कर सकता है। सूअर पालन छोटे और भूमिहीन किसानों तथा खेतिहर महिलाओं के लिए एक उपयुक्त विकल्प सिद्ध हो सकता है और इसे रोजगार में लगे लोगों द्वारा भी अतिरिक्त आमदनी प्राप्त करने के लिए अंशकालिक व्यवसाय के रूप में अपनाया जा सकता है।

(xiii) d|Dd|V ikyu

कुक्कुट पालन भारत में कृषि क्षेत्र का सबसे तेजी से वृद्धि करने वाला व्यवसाय है जिसकी वृद्धि दर प्रति वर्ष लगभग 8 प्रतिशत है। भारत में कुक्कुट पालन क्षेत्र में संरचना और परिचालन की दृष्टि से अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ है और अब यह मात्र घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन की क्रिया से बढ़कर चार दशकों की अवधि में एक प्रमुख वाणिज्यिक कृषि आधारित उद्योग बन गया है। नई प्रौद्योगिकियों के उन्नयन, रूपांतरण तथा अनुप्रयोग के निरंतर प्रयासों से कुक्कुट तथा अन्य सम्बद्ध क्षेत्रों में कई गुनी तथा अनेक आयामी वृद्धि का मार्ग प्रशस्त हुआ है। यह विकास न केवल आकार में हुआ है बल्कि उत्पादकता आधुनिकीकरण और गुणवत्ता के मामले में हुआ है। अधिक अंडे देने वाली मुर्गियों (310–340 अंडे) तथा मांस हेतु कुक्कुटों (2.4–2.6 कि.ग्रा.–6 सप्ताह की आयु तक) की किस्मों के विकास के साथ–साथ इनके पोषण, आवास, प्रबंध तथा रोग नियंत्रण की मानकीकृत विधियों के पैकेज के विकास के कारण अंडों (4–6 प्रतिशत प्रतिवर्ष) तथा मांस उत्पादन (8–10 प्रतिशत/वर्ष) के मामले में भारत में पिछले 40 वर्षों के दौरान उल्लेखनीय वृद्धि दरें देखने को मिली हैं। इसका यह तात्पर्य है कि भारतीय कुक्कुट बाजार में इस व्यवसाय के अपार अवसर हैं। इसके अतिरिक्त मछ्ली पालन, केंचुआ खाद उत्पादन, सब्जियों की खेती आदि आयामों से किसानों की आमदनी बढ़ाने व स्वरोजगार उत्पन्न करने की दिशा में सार्थक प्रयास किया जा सकता है।

(xiv) eNyh ikyu

भारत में मछली पालन एक अत्यंत महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि है तथा यह विभिन्न संसाधनों व क्षमताओं के कारण काफी फलफूल रही है। आजादी के बाद हमारे देश में कृषि के साथ–साथ मात्स्यिकी को भी एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में पहचाना गया। इसे आमदनी तथा रोजगार सृजित करने की एक सशक्त युक्ति माना गया है क्योंकि इससे अनेक गौण उद्योग फलते–फूलते हैं तथा यह विदेशी मुद्रा कमाने का एक साधन होने के अतिरिक्त सस्ते और पोषक तत्वों से भरपूर भोजन का भी एक महत्वपूर्ण स्रोत है। मछली पालक उन किसानों व युवाओं के लिए वरदान सिद्ध हो सकता है जिनके पास या जिनके गांवों में प्राकृतिक तालाब उपलब्ध हैं। बड़े पैमाने पर मात्स्यिकी के विस्तार तथा यंत्रीकृत पोतों के परिचालन से कुल वार्षिक मछली उत्पादन में बहुत वृद्धि हुई है और इसके परिणामस्वरूप देश की सामान्य अर्थव्यवस्था में भी काफी योगदान हुआ है।

(xv) d¡p|, dh [kkn dk mRiknu

केंचुए की खाद एक जैविक खाद (जैव उर्वरक) है जो केंचुओं द्वारा जैविक अपशिष्ट सामग्री, पादप अपशिष्टों का आहार ग्रहण करके उत्पन्न की जाती है। यह खाद गंधहीन, स्वच्छ

जैविक सामग्री है जिसमें पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश तथा कई सूक्ष्म पोषक तत्व होते हैं जो पादप वृद्धि के लिए बहुत जरूरी हैं। केंचुए की खाद को जैविक खेती के लिए पोषक तत्वों के स्रोत के रूप में अधिक पसंद किया जाता है। यह पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल, विशाल पदार्थों से रहित सामग्री है जिसे सड़ाने के लिए बहुत कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है और यह एक पुनश्चक्रित जैविक उत्पाद है। केंचुए की खाद बनाना पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल प्रौद्योगिकी है व आय सृजन का उत्तम विकल्प है।

(xvi)—f"k okfudh

कृषि वानिकी एक प्रभावी भूमि उपयोग प्रणाली है जिसका भोजन, पौषणिक तथा पर्यावरणीय सुरक्षा में अमूल्य योगदान है। आहार, ईंधन, चारा, रेशा, औषधि तथा इमारती लकड़ी के रूप में इसके विविध उपयोगों के साथ इसे अपनाकर छोटी जोत के किसान अपनी भूमिका सर्वश्रेष्ठ ढंग से उपयोग कर सकते हैं। इसके अलावा कृषि वानिकी में किसानों को रोजगार तथा अतिरिक्त आय देने की भी बहुत क्षमता है। वास्तव में कृषि वानिकी कृषि को समुत्थानशील बनाने में भी सहायक है क्योंकि इससे जलवायु परिवर्तन के खतरे से प्रभावी रूप से निपटा जा सकता है। वास्तविकता यह है कि जोत का आकार धीरे–धीरे कम हो रहा है, अतः खेती के साथ–साथ वृक्ष उगाकर संभवतः हम फार्म उत्पादकता को उपयुक्ततम बना सकते हैं तथा छोटी जोत वाले किसानों, भूमिहीन मजदूरों और खेतिहर महिलाओं के आजीविका के अवसरों को बढ़ा सकते हैं क्योंकि इसके द्वारा उन्हें आमदनी के अवसर मिलते हैं तथा उनकी आय में भी वृद्धि होती है।

(xvii) —f"k&i ;Vu

कृषि पर्यटन को 'उस पर्यटन के रूप में परिभाषित किया गया है जिसमें पर्यटन के अनुभव के साथ–साथ कृषि से संबंधित कार्यों से उत्पादों की जानकारी देते हुए कृषि तथा ग्रामीण स्थितियों से पर्यटकों को परिचित कराया जाता है और किसानों द्वारा उन्हें व्यापक प्रकार की सुविधाएं तथा सेवाएं प्रदान की जाती है' या इसे 'उद्यमशील किसानों के लिए आय सृजन की एक अभिनव गतिविधि' के रूप में भी परिभाषित किया गया है। कृषि पर्यटन ग्रामीण पर्यटन का ही एक स्वरूप है जिसमें पर्यटकों को फार्म पर कार्य करते हुए ग्रामीण परिवेश के बारे में शिक्षित किया जाता है व उनका मनोरंजन किया जाता है। भारत में कृषि पर्यटन की बहुत संभावना और क्षमता है तथा विदेशी और घरेलू पर्यटकों की संख्या निरंतर बढ़ने से इस नए फार्म विविधीकरण के लिए अवसर सृजित हो रहे हैं तथा किसानों व अन्य भागीदारों को आमदनी का अतिरिक्त स्रोत भी उपलब्ध हो रहा है। कोई भी वह किसान जिसके पास कम से कम दो हैक्टर भूमि, फार्म हाउस, जल संसाधन है और जो पर्यटकों के मनोरंजन में रूचि रखता हो, कृषि पर्यटन का व्यवसाय शुरू कर सकता है। व्यक्तिगत किसानों के अलावा कृषि सहकारी समितियां, गैर–सरकारी या स्वयं सेवी संगठन भी यह व्यवसाय आरंभ कर सकते हैं। यहां तक कि ग्राम पंचायतें भी ग्रामवासियों तथा किसानों की सहायता से अपने अधिकार क्षेत्रों में इस प्रकार के केन्द्रों की शुरूआत कर सकती हैं।

गैर–कृषि क्षेत्र में रोजगार की कमी और इनपुट की बढ़ती लागत और विभिन्न अन्य कारकों के कारण बढ़ती ऋण ग्रस्तता ने छोटे और सीमांत किसानों के अस्तित्व को मुश्किल बना दिया है इसलिये विस्तार सेवाओं को सीमांत और छोटे किसानों की जरूरतों को पूरा करने हेतु पुनर्निर्मित किया जाना चाहिए। आज कृषि आय में वृद्धि की दर त्वरित करने की आवश्यकता है जो कृषि क्षेत्र के विभिन्न उद्यमों में किसानों के कौशल विकास से संभव है इसलिये परंपरागत कृषि के साथ साथ अन्य उद्यम श्रोतोंको पहचानना तथा उनमें किसानों का कौशल विकास करवाना होगा, कुछ प्रमुख उद्यम तथा नवेंमेषी गतिविधियां निम्नलिखित हैं :

ICAR-DCFR

(I) foi.ku

किसानों को अपने उत्पादों का सीधा विपणन करना आवश्यक है तथा अपने उत्पादन की अच्छी कीमत कहाँ मिलेगी उसका सर्वे कर अपने उत्पादों को उन बाजारों तक भेजने की व्यवस्था खुद करनी चाहिए। इस मॉडल से बिचौलियों की भागीदारी समाप्त हो जाती है तथा उपभोक्ता के प्रत्येक रुपये का अधिकांश हिस्सा किसान के हक में जाता है।

(ii) elY; lio/ku

अपने उत्पादों की ग्रेडिंग, पैकजिंग एवं प्रसस्कण कर किसान उससे अधिक से अधिक आमदनी प्राप्त कर सकते हैं तथा स्वरोजगार को भी बढ़ावा दे सकते हैं। अपना ब्रांड बनाकर एक अपना बाजार स्थापित कर विश्वसनीयता बनाई जा सकती है जिसका अधिकतम लाभ उत्पादक किसान, किसान समूह/उत्पदक समूह एवं उपभोक्ता सभी को होगा।

(iii) lxfBr mRiknu

उत्पादन की मात्रा के आधार पर ही उसका विपणन निर्धारित होता है। अतः कुछ किसान संगठित होकर एक ही तरह की फसलध्फलध फूल/ सब्जियों की खेती करेंगे तो उसे दूर भेजने में परिवहन खर्च में कमी आएगी तथा दूरस्थ बाजारों में मिलने वाली अच्छी कीमतों का लाभ उठाया जा सकेगा। इसमें भारत सरकार द्वारा 2016 में स्थापित 'ई–नाम' पोर्टल का सहयोग कारगर हो सकता है जो भारत की मंडियों को डिजिटली जोड़ता है।

(iv) mRikn fo'k"k ij dfUær jguk

किसी एक उत्पाद पर केन्द्रित रहने का अर्थ है उससे संबंधित ज्ञान अर्जन, उत्पादन, मूल्य सवर्धन आदि में महारथ हासिल होना। इसका फायदा समय के साथ मिलता है। साथ ही अन्य उत्पादकों की तुलना में पहले होने की वजह से बाजार में भी अच्छी पकड़ रहती है, जिससे बाजार में अपना ब्रांड स्थापित करके उसका फायदा उठाने में मदद मिलती है।

(v) lefdr —f"k ç.kkyh

एक विशेष उत्पाद के अतिरिक्त किसान अन्य कृषि उत्पादों पर भी ध्यान देंगे तो आय में संमृद्धि होगी और जोखिम प्रबंधन भी होगा। फसल प्रणाली की सघनता को बढ़ाकर भी प्रति इकाई उत्पादकता/आमदनी को बढ़ाया जा सकता है। नियमित आमदनी के लिए धान्य फसलों के साथ–साथ डेयरी, मुर्गीपालन, सब्जियों की खेती, फल उत्पादन, मछली पालन आदि को भी अपनाना आवश्यक है।

(ii) ckxokuh Qlyksa dh lqjf{kr [ksrh

बागवानी फसलों की सुरक्षित खेती से परंपरागत कृषि उत्पादन प्रणाली के स्थान पर विविधीकरण का एक बेहतर विकल्प उपलब्ध होता है। सुरक्षित दशाओं में फसलोत्पादन से मुख्य तथा बेमौसम में सब्जियों, पुष्पों तथा कुछ फल फसलों की उत्पादन क्षमता व गुणवत्ता बढ़ाने में बहुत सफलता मिलती हैक्योंकि इसका उपयोग उच्च मूल्य वाली सब्जी की फसलें जैसे टमाटर, चेरी टमाटर, रंगीन शिमला मिर्च, अनिषेकजनित खीरा, कर्तित फूलों जैसे गुलदाउदी, लिलियम आदि के पुष्प, स्ट्राबेरी, अंगूर आदि को उगाने के लिए लाभदायक ढंग से किया जा सकता है। इस प्रकार, सब्जियों की बेमौसम खेती करने से आमदनी को बढ़ाया जा सकता है।

dk'ky fodkl gsrq Hkkjr ljdkj dh igy

भारत सरकार ने कृषि सहित विभिन्न क्षेत्रों में कौशल विकास हेतु कई योजनाएँ आरंभ की हैंजो किसानों को आत्मनिर्भर बनाने हेतु अपार संभावनाओं को जन्म देती हैं, जिनमें से प्रमुख योजनाएँ निम्नलिखित हैं

(i) Qly dVkbZ ds ckn Qly dh gkfu jksdus ds fy, oS;fDrd@lkeqnkf;d ...

(i) Qly dVkbZ dk ckn Qly dh gkfu jkdus dk fy, o;jgkmflx vkj dkYM pu ei fuo'k

पर्याप्त भण्डारण और कोल्ड स्टोरेज सुविधाओं के अभाव में किसानों द्वारा उत्पादित खाद्यान का बडा हिस्सा खराब हो जाता है। कुल

उत्पादन का लगभग 28.30 फीसदी खेत स्तर पर ही बर्बाद हो रहा है। खराब होने वाली बागवानी फसलों के लिए कुशल परिवहन के लिए मोबाइल कोल्ड स्टोरेज की जरूरत है और संभावित क्षेत्र में शीत श्रृंखला अनुसंधान और विकास पर ध्यान देने की आवश्यकता है। कोल्ड चेन की योजना, मूल्य संवर्धन और संरक्षण बुनियादी ढांचा का उद्देश्य बागवानी और गैर–बागवानी उपज के बाद फसल नुकसान को कम करना और उनके उत्पादन के लिए किसानों को लाभप्रद मूल्य प्रदान करना मुख्य कारक है। इस योजना के अंतर्गत एकीकृत शीत शृंखला और संरक्षण बुनियादी ढांचा, उद्यमियों, सहकारी समितियों, स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी), किसान निर्माता संगठन (एफपीओ), गैर सरकारी संगठनों, केंद्रीय / राज्य सार्वजनिक उपक्रमों आदि द्वारा स्थापित किया जा सकता है।

(ii) ç/kkuea=h dkS'ky fodkl ;kstuk ¼ih-,e-ds-oh-okbZ-½

वर्ष 2015 में मंजूर की गई प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (पी.एम.के.वी.वाई.) युवाओं के कौशल प्रशिक्षण के लिए एक प्रमुख योजना है। इसके तहत पाठ्यक्रमों में सुधार, बेहतर शिक्षण और प्रशिक्षित शिक्षकों पर विशेष जोर दिया गया है। प्रशिक्षण में अन्य पहलुओं के साथ व्युवहार कुशलता और व्यरवहार में परिवर्तन भी शामिल है। नवगठित कौशल विकास और उद्यम मंत्रालय के अंतर्गत राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एन.एस.डी.सी.) के माध्यम से इस कार्यक्रम को क्रियान्वित कर रहा है। इसके तहत 24 लाख युवाओं को प्रशिक्षण के दायरे में लाया जाएगा है। कौशल प्रशिक्षण नेशनल स्किसल क्वाटलिफिकेशन फ्रेमवर्क (एन.एस.क्यू.एफ.) और उद्योग द्वारा तय मानदंडों पर आधारित होगा।

(v) Hkkjrh; —f"k dkS'ky ifj"kn

भारतीय कृषि कौशल परिषद का निर्माण वर्ष 2013 में कृषि तथा कृषि से संबन्धित क्षेत्रों में कौशल एवं उद्यमिता विकास हेतु किया गया। देश में खेती–बाड़ी के साथ पशुपालन, बागवानी, डेरी,मुर्गी पालन, मछली पालन, वानिकी, रेशम कीट पालन, कुक्कुट पालन, बत्तख पालन जैसे कृषि संबन्धित क्षेत्रों में भारतीय कृषि कौशल परिषद किसानों का कौशल विकास कर रहा है। भारतीय कृषि कौशल परिषद, देश भर में 956 प्रशिक्षण संस्थाओं, 685 उद्योग साथियों के साथ मिलकर अभी तक 9,55,900 प्रशिक्षणार्थीओं को कृषि में कौशल विकास हेतु प्रशिक्षण दे चुका है।

(vi) Hkkjr esa fuekZ.k ¼esd bu bafM;k½

इस योजना को दिनांक 25 सितम्बर, 2014 को प्रारंभ किया गया था ताकि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ साथ घरेलू कम्पनियों को भी अपने उत्पादों का निर्माण करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। इस पहल के पीछे मुख्य लक्ष्य अर्थव्यवस्था के 25 क्षेत्र में रोजगार उत्पन्न करना और कौशल संवर्धन करना था। इस पहल का उद्देश्य उच्च गुणवत्ता मानक बनाये रखना और पर्यावरण पर प्रभाव को न्यूनतम करना भी है। इस पहल के अंतर्गत भारत में पूंजीगत एवं प्रौद्योगिकीय निवेश को आकर्षित करने की प्रयास है।

(v) ^LVkVZ&vi bafM;k* igy

इसका प्रयोजन भारतीय युवाओं के बीच उद्यमशीलता को प्रोत्साहित करना है। 'स्टार्ट–अप इंडियाः स्टैण्ड अप इंडिया' द्वारा उद्यमशीलता को बढ़ाने और रोजगार उत्पन्न करने में स्टार्ट–अप के लिए वित्तीय सहायता को बढ़ावा दिया जाता है और अन्य प्रोत्साहन दिए जाते हैं। इस पहल के अंतर्गत 1.25 लाख बैंक शाखाओं द्वारा विभिन्न उद्योगों के साथ साथ दलित अथवा आदिवासी उद्यमी और महिला उद्यमिओं को भी बढ़ावा दिया जा रहा है।

स्टार्टअप एवं उद्यम विकास हेतु भारत सरकार की पहलः भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद में पारंपरिक रूप से प्रौद्योगिकी विकास और प्रसार में मुख्य बल खाद्य और पौषणिक सुरक्षा उपलब्धी कराने के उद्देश्य से फसल, पशु और फार्म उत्पादकता को बढ़ाने पर दिया जाता रहा है। इस प्रकार विकसित की गई

प्रौद्योगिकियों ने खाद्यान्न, बागवानी फसलों, दूध, मात्स्यिकी और अंडों के उत्पादन को बढ़ाने में महत्वकपूर्ण रूप से योगदान दिया है। तथापि, कृषि के बढ़ रहे वैश्वीकरण के कारण, अब अनुसंधान और विकास की प्राथमिकताओं का कृषि उत्पालदों के मूल्ये संवर्धन और कृषि वैविधीकरण को बढ़ाने की ओर पुनः अभिविन्याउस किया जाना चाहिए, और इसके द्वारा ही वास्तोविक समानता और आजीविका सुरक्षा उपलब्ध कराई जा सकेगी। कृषि–आधारित उद्योगों हेतु पूंजी व्यवस्था करने व संसाधन जुटाने में सरकार द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं द्वारा अलग–अलग तरीके से सहारा दिया जा रहा है। कृषि– आधारित उद्योगों से बड़े उद्योगों की अपेक्षा प्रति इकाई पूंजी द्वारा अधिक लाभ तो कमाया ही जा सकता है। साथ ही, यह उद्योग रोजगारपरक भी होते हैं। कृषि–आधारित उद्योगों हेतु कुछ प्रमुख सरकारी योजनाओं का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार हैः

भारत में निर्माण (मेक इन इंडिया)

इस योजना को दिनांक 25 सितम्बर, 2014 को प्रारंभ किया गया था ताकि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ साथ घरेलू कम्पनियों को भी अपने उत्पादों का निर्माण करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। इस पहल के पीछे मुख्य लक्ष्य अर्थव्यवस्था के 25 क्षेत्र में रोजगार उत्पन्न करना और कौशल संवर्धन करना था। इस पहल का उद्देश्य उच्च गुणवत्ता मानक बनाये रखना और पर्यावरण पर प्रभाव को न्यूनतम करना भी है। इस पहल के अंतर्गत भारत में पूंजीगत एवं प्रौद्योगिकीय निवेश को आकर्षित करने की प्रयास है।

स्टार्ट–अप इंडिया' पहल

इसका प्रयोजन भारतीय युवाओं के बीच उद्यमशीलता को प्रोत्साहित करना है। 'स्टार्ट–अप इंडिया, स्टैण्ड अप इंडिया' द्वारा उद्यमशीलता को बढ़ाने और रोजगार उत्पन्न करने में स्टार्ट–अप के लिए वित्तीय सहायता को बढ़ावा दिया जाता है और अन्य प्रोत्साहन दिए जाते हैं। इस पहल के अंतर्गत 1.25 लाख बैंक शाखाओं द्वारा विभिन्न उद्योगों के साथ साथ दलित अथवा आदिवासी उद्यमी और महिला उद्यमिओं को भी बढ़ावा दिया जा रहा है।

वेयरहाउसिंग और कोल्ड चेन में निवेशः कृषि उत्पादों की आपूर्ति श्रृंखला में नुकसान को रोकने के लिए और खाद्य प्रसंस्करण से जुड़े स्टार्टअप्स एवं उद्यमों के लिए, खाद्य प्रसंस्करण मंत्रालय, मेगा फूड पार्क आदि एकीकृत शीत चेन, मूल्य संवर्धन और संरक्षण इंफ्रास्ट्रक्चर की स्थापना / आधुनिकीकरण की योजनाओं को लागू कर रहा है। इस योजना के अंतर्गत एकीकृत शीत श्रृंखला और संरक्षण बुनियादी ढांचा, उद्यमियों, सहकारी समितियों, स्वयं सहायता समूहों (एस.एच.जी.), किसान निर्माता संगठन (एफ.पी.ओ.), गैर सरकारी संगठनों, केंद्रीय/ राज्य सार्वजनिक उपक्रमों आदि द्वारा स्थापित किया जा सकता है।

vVy buko'kufe'ku

स्व–रोजगार और प्रतिभा उपयोग (सेतु) सहित अटल इनोवेशन मिशन नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार का प्रयास है। इसका उद्देश्य विशेष रूप से प्रौद्योगिकी संचालित क्षेत्रों में विश्व स्तर के नवाचार केंद्रों, स्टार्ट–अप व्यवसायों और अन्य स्वरोजगार गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए एक मंच के रूप में कार्य करना है। इसके दो मुख्य घटक हैंःस्व–रोजगार और प्रतिभा उपयोग (SETU) के माध्यम से उद्यमिता को बढ़ावा देना एवं नवाचार को बढ़ावा देना। प्रत्येक अटल इनक्यूबेशन सेंटर के अंतर्गत व्यय लागत को कवर करने के लिए अधिकतम पांच वर्षों के लिए 10 करोड़ रुपये का अनुदान सहायता प्रदान करता है।

U;itu buko'ku ,M ,Vjçk;kjf'ki MoyiesV lsVj (NewGenIEDC):

नेशनल साइंस एंड टेक्नोलॉजी

एंटरप्रेन्योरशिप डेवलपमेंट बोर्ड (NSTEDB) के तहत न्यूजेन आ.ई.ई.डी.सी. स्टार्टअप प्रोग्राम देश के मुख्य शैक्षणिक संस्थानों में चल रहा है है। एक वर्ष में अधिकतम 20 नई परियोजनाओं का समर्थन किया जाता है और सरकार एकमुश्त, गैर–आवर्ती वित्तीय सहायता, संस्था को स्थापना लागत, स्टार्ट–अप के लिए क्यूबिकल की फर्निशिंग, खरीद के लिए अधिकतम 25 लाख रुपये तक प्रदान करती है।

ç/kkuea=h dk'ky fodkl ;ktuk ¼ih-,e-d-oh-okbZ-½

वर्ष 2015 में मंजूर की गई प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (पी.एम.के.वी.वाई.) युवाओं के कौशल प्रशिक्षण के लिए एक प्रमुख योजना है। नवगठित कौशल विकास और उद्यम मंत्रालय के अंतर्गत राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एन.एस.डी.सी.) के माध्यम से इस कार्यक्रम को क्रियान्वित कर रहा है। इसके तहत 24 लाख युवाओं को नए उद्यम हेतु प्रशिक्षण के दायरे में लाया जाएगा। कौशल प्रशिक्षण नेशनल स्किेल क्वालिफिकेशन फ्रेमवर्क (एन.एस.क्यू.एफ) और उद्योग द्वारा तय मानदंडों पर आधारित होगा। कार्यक्रम के तहत प्रशिक्षुओं को नकद पारितोषिक दी जाएगी। नकद पारितोषिक औसतन 8,000 रूपए प्रति प्रशिक्षु होगी।

ç/kkuea=h fdlku lEink ;ktuk

कृषि उपज की बर्बादी को कम करने के लिए भारत सरकार ने 14वें वित्त आयोग के चक्र 2016–20 की अवधि के लिए 6000 करोड़ रुपए का आवंटन प्रधानमंत्री किसान सम्पदा योजना के लिए किया था। इस योजना का उद्देश्य खेत से लेकर खुदरा बिक्री केन्द्र तक दक्ष आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन के साथ आधुनिक अवसंरचना का सृजन करना है। इसके अन्तर्गत खाद्य प्रसंस्करण में वृद्धि करना, खाद्य प्रसंस्करण का आधुनिकीकरण करना, प्रसंस्कृत खाद्य–पदार्थों का निर्यात बढ़ाना, डेयरी व मत्स्य आदि कृषि उत्पादों का मूल्य–संवर्धन करना, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर का सृजन करना, उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर सुरक्षित और सुविधाजनक प्रसंस्कृत खाद्य उपलब्धता सुनिश्चित करना आदि महत्त्वपूर्ण पहल की जा रही है। इस योजना के तहत लगभग 20 लाख किसानों को फायदा होगा। साथ ही, ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर सृजित होने की सम्भावना है। प्रधान मंत्री किसान सम्पदा योजना एक व्यापक पैकेज है जिसके परिणाम स्वरूप खेत से लेकर खुदरा बिक्री केंद्रों तक दक्ष आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन के साथ आधुनिक अवसंरचना का सृजन होगा। इससे, देश में न केवल खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र की वृद्धि को तीव्र गति प्राप्त होगी बल्कि यह किसानों को बेहतर मूल्यत दिलाने तथा किसानों की आय को दुगुना करने, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के भारी अवसरों का सृजन करने, कृषि उपज की बर्बादी में कमी लाने, प्रसंस्कारण तथा प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के निर्यात के स्तर को बढ़ाने की दिशा में एक बड़ा कदम होगा।

प्रधानमंत्री किसान सम्पदा योजना के अंतर्गत निम्नलिखित स्कीमों का कार्यान्वयन किया जाएगा

- मेगा खाद्य पार्क
- कोल्ड चेन
- खाद्य प्रसंस्करण एवं परिरक्षण क्षमताओं का सृजन/विस्तार
- कृषि प्रसंस्करण क्लिस्टओर अवसंरचना
- बैकवर्ड और फारवर्ड लिंकेजों का सृजन
- खाद्य संरक्षा एवं गुणवत्ता आश्वासन अवसंरचना
- मानव संसाधन एवं संस्थान

सरकार प्रधानमंत्री किसान सम्पदा योजना के अन्तर्गत सरकारी अनुदान, नाबार्ड और मुद्रा योजना के तहत आसान शर्तों एवं सस्ती ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध करा रही है। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट (2020–21) के अनुसार मेगा फूड पार्क, एकीकृत प्रशीतन श्रृंखला और मूल्यसंर्धन अवसंरचना, कृषि प्रसंस्करण तथा बैकवर्ड और फारवर्ड

लिंकेज स्कीम के कार्यान्वयन के माध्यम से खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र के विकास के लिए अत्याधुनिक अवसंरचना का सृजन किया गया है तथा केंद्रीय क्षेत्र की विभिन्न स्कीमों के तहत खाद्य प्रसंस्करण के क्षमता सृजन और विस्तार के लिए सहायता प्रदान करना लक्षित है। चयनित फूड पार्क और कृषि प्रसंस्करण इकाईयों को किफायती ऋण उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) में 2000 करोड़ रुपए के विशेष कोष का गठन एक नीतिगत पहल है।

jk"Vh; —f"k fodkl ;kstuk

भारत सरकार ने वर्ष 2007–08 राष्ट्रीय कृषि विकास योजना की शुरूआत की थी जो तब से प्रचलन में है। मुख्य खाद्य फसलों जैसे गेहूँ, धान, मोटे अनाज, छोटे कदन्न, दलहन तथा तिलहन का समेकित विकास/ किसानों को प्रमाणित/ एच.वाई.वी. बीजों की उपलब्धता/ प्रजनक बीजों के उत्पादन/ सार्वजनिक क्षेत्र बीज निगमों से प्रजनक बीजों की खरीदय आधारी बीजों का उत्पादनय प्रमाणित बीजों का उत्पादनय बीज उपचारय प्रदर्शन स्थलों पर किसान फील्ड स्कूल/ किसानों को प्रशिक्षण आदि के लिए सहायता प्रदान की जाती है।

भारतीय कृषि कौशल परिषद

भारतीय कृषि कौशल परिषद का निर्माण वर्ष 2013 में कृषि तथा कृषि से संबन्धित क्षेत्रों में कौशल एवं उद्यमिता विकास हेतु किया गया। देश में खेती–बाड़ी के साथ पशुपालन, बागवानी, डेरी, मुर्गी पालन, मछली पालन, वानिकी, रेशम कीट पालन, कुक्कुट पालन,बत्तख पालन जैसे कृषि संबन्धित क्षेत्रों में भारतीय कृषि कौशल परिषद किसानों का कौशल विकास कर रहा है। भारतीय कृषि कौशल परिषद,देश भर में 956 प्रशिक्षण संस्थाओं, 685 उद्योग साथियों के साथ मिलकर अभी तक 9,55,900 प्रशिक्षणार्थीओं को कृषि में कौशल विकास हेतु प्रशिक्षण दे चुका है।

eXk QM ikdl ;kstuk

देश के कई भागों में 'मेक इन इंडिया' योजना के अन्तर्गत मेगा फूड पार्कों की स्थापना की गई है। इससे वहाँ रोजगार के अवसर बढ़ाने में मदद मिलेगी। मेगा फूड पार्क योजना का मूल उद्देश्य किसानों, प्रसंस्करण कर्ताओं और रिटेल कारोबारियों को एक साथ लाते हुए कृषि उत्पादों को बाजार से जोड़ने के लिए एक मशीनरी उपलब्ध कराना होता है जिससे कृषि उत्पादों की बर्बादी को न्यूनतम कर ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का सृजन किया जा सके। इससे ग्रामीण युवाओं व किसानों को सबसे ज्यादा फायदा होगा। इस योजना का क्रियान्वयन खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय द्वारा किया जा रहा है। इस योजना के कार्यान्वयन के फलस्वरूप कुशल आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन से युक्त आधुनिक आधारभूत संरचना का विकास होगा जिससे खेत का उत्पाद सीधे रिटेल आउटलेट तक पहुँच सकेगा। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की समस्या कम करने के अलावा, देश और ग्रामीण क्षेत्र की सामाजिक व आर्थिक स्थिति में सुधार होगा।

—f"k mRikn lxBu l: m|e'khyrk fodkl

उत्पादकों, विशेष रूप से छोटे एवं सीमांत किसानों का उत्पादक संगठनों में सामूहीकरण सबसे कारगर तरीकों में से एक है। यह कृषि से जुड़ी अनेक चुनौतियों का सामना करने तथा निवेश, प्रौद्योगिकी एवं आदान तथा बाजार तक पहुंच में सुधार के लिए भी एक अत्यंत प्रभावी तरीका बन कर उभरा है। भारत सरकार ने कंपनी अधिनियम, 1956 के विशेष प्रावधानों के अंतर्गत पंजीकृत किसान उत्पादक संगठनों को सबसे उपयुक्त संस्थानिक स्वरूप के रूप में चिह्नित किया है जिसके इर्दगिर्द किसानों को संगठित किया जाएगा तथा उनकी उत्पादन एवं विपणन क्षमता का सामूहिक रूप से लाभ उठाने के लिए उनकी क्षमता निर्मित की जाएगी। इस संबंध में किसान उत्पादक संगठनों (FPO) की स्थापना से काफी मदद मिल सकती है। कृषि क्षेत्र की संस्थाओं में विभिन्न केंद्र प्रायोजित एवं राज्य वित्त

पोषित स्कीमों के विभिन्न संसाधनों का प्रयोग करके केंद्र सरकार एवं राज्य सरकारों तथा उनकी संस्थाओं द्वारा एफपीओ के गठन एवं विकास को सक्रिय रूप से प्रोत्साहित किया जाएगा तथा सहायता प्रदान की जाएगी। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए साझेदारों के गठबंधन का निर्माण करना आवश्यक होगा। ये लक्ष्य समाज की संबंधित संस्थाओं, अनुसंधान संगठनों, परामर्शदाताओं, निजी क्षेत्र के खिलाड़ियों तथा उत्पादकों के स्वामित्व वाले मजबूत एवं संभव एफ.पी.ओ. के विकास में योगदान करने में सक्षम किसी अन्य संस्था को शामिल करते हुए संबंधित संवर्धक निकाय द्वारा प्राप्त किए जा सकते हैं। एक FPO किसान आधार को बढ़ाने, इनपुट प्रदान करने, उत्पादन खरीदने, उन्हें फसलों पर सलाह देने, ऋण एवं बीमा प्रदान करने, प्रसंस्करण के बाद की सुविधा आदि में मदद करता है। इस क्रम में एफपीओ योजना यानी कि कृषि उत्पादक संगठन (FPO – Farmer Producer Organization) भी है। इस योजना के तहत किसानों को कृषि बिजनेस (Agriculture Business) करने के लिए 15 लाख रुपए की राशि उपलब्ध कराई जाएगी। इस योजना का लाभ उठाने के लिए किसानों को अपना एक समूह बनाना होता है। समूह बनाने के बाद इस समूह को कंपनी एक्ट में रजिस्टर्ड करवाना होता है। PM Kisan FPO Yojana रजिस्टर्ड हो जाने के बाद आम किसानों को बहुत फायदा मिलता है। योजना के मुख्य तथ्यानुसार :

- एस.पी.ओ. के माध्यम से किसानों को तकनीकी, मार्केटिंग, ऋण, प्रोसेसिंग, सिंचाई आदि जैसी सुविधाएं प्रदान की जाती है।
- इस योजना के तहत किसान 15 लाख रुपए तक का ऋण ले सकते हैं।
- एफपीओ को इंडियन कंपनीज एक्ट के अंतर्गत रजिस्टर करवाना होता है।
- इस संगठन के माध्यम से किसानों को बीज, खाद, मशीनरी, मार्केट लिंकेज, ट्रेनिंग, नेटवर्किंग, वित्तीय सहायता आदि जैसी सुविधाएं भी प्रदान की जाती है।
- इस योजना के अंतर्गत प्रत्येक जिले के ब्लॉक में एक एफपीओ होना चाहिए।
- यह संगठन उन जिलों में प्राथमिकता पर संगठित किया जाएगा जो एस्पिरेशनल होते हैं। एफपीओ के माध्यम से पर्याप्त प्रशिक्षण और हैंड हैंडलिंग प्रदान की जाती है इसके अलावा सीबीओ के स्तर से प्राथमिक प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाता है।
- पूर्वोत्तर राज्यों एवं पहाड़ी इलाकों में एक एफपीओ में कम से कम 100 सदस्य होने चाहिए और मैदानी इलाकों में एक एफपीओ में कम से कम 300 सदस्य होने चाहिए।

Hkkjrh; —f"k vuqla/kku ifj"kn ¼vkbZ-lh-,-vkj-½ dh igy

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद में पारंपरिक रूप से प्रौद्योगिकी विकास और प्रसार में मुख्यय बल खाद्य और पौषणिक सुरक्षा उपलब्धी कराने के उद्देश्य से फसल, पशु और फार्म उत्पादकता को बढ़ाने पर दिया जाता रहा है। इस प्रकार विकसित की गई प्रौद्योगिकियों ने खाद्यान्नष, बागवानी फसलों, दूध, मात्स्यिकी और अंडों के उत्पादन को बढ़ाने में महत्वकपूर्ण रूप से योगदान दिया है। तथापि, कृषि के बढ़ रहे वैश्वीकरण के कारण, अब अनुसंधान और विकास की प्राथमिकताओं का कृषि उत्पालदों के मूल्ये संवर्धन और कृषि वैविधीकरण को बढ़ाने की ओर पुनःअभिविन्याउस किया जाना चाहिए, और इसके द्वारा ही वास्तोविक समानता और आजीविका सुरक्षा उपलब्ध कराई जा सकेगी। भारतीय स्टाजर्ट–अप पारिस्थितिकीय प्रणाली ने पिछले कुछ वर्षों में अभूतपूर्व विकास का प्रदर्शन किया है, और अब भारत वैश्विक रूप से स्थापित किए जाने वाले स्टांर्ट–अप की संख्याश के संदर्भ में सर्वोच्च्त तीन देशों में से एक देश के रूप में उभरा है। तथापि, सभी देशों के स्टानर्ट–अप पारिस्थितिकी प्रणाली के सैक्टमरवार ब्रेक–अप से यह पता चलता है कि कृषि क्षेत्र की ओर विभिन्नर स्टेकहोल्डरों, विशेष रूप से निवेशकों, का ध्यान कम जाता रहा है। इसके मुख्य कारण उच्चटतर जोखिम, जलवायु जोखिम, कृषि भूमि

का उच्च मात्रा में विखण्डीकरण, आंकड़ो की कमी, सप्लाई श्रृंखला में पारदर्शिता की कमी आदि हैं। तथापि, भारतीय कृषि में एक मुख्य बदलाव देखा गया है जिससे पता चलता है कि किसानों की विचारधारा में अब परिवर्तन होने लगा है और ऐसा सरकार की उद्यमशीलता विकास को प्रोत्साहित करने और स्टार्ट–अप को सहायता प्रदान करने की नीति में परिवर्तन के कारण संभव हुआ है। केन्द्र सरकार द्वारा गैर नीतिगत उपायों जैसे कि राष्ट्रीय बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर नीति 2016) और स्टार्ट–अप इंडिया (2016) की शुरूआत करने से संगठनों में अनुसंधान और विकास में नव प्रर्वतनों के एक कल्चर का निर्माण हुआ है जो उद्योग–शिक्षाविदों के बीच सहभागिताओं को प्रोत्सोहित करते हैं। इसके साथ–साथ, इन पहलों से प्रक्रियाएं और हैंड होल्डिंग सरल हुई हैं। निधियन की सहायता प्राप्त हुई हैं और प्रौद्योगिकियों को कृषि व्यवसाय में रूपांतरित करने में बढ़ावा देने के लिए की जाने वाली पहलों को भी प्रोत्साहित किया जा रहा है। इसलिए, पिछले कुछ वर्षों में अनेक शिक्षित युवा, जिनके पास नए विचार हैं, काम करने का जोश है, कृषि को उसके पारंपरिक रूप से ऊपर उठाकर हाईटैक व्यवसाय मॉडलों और नई प्रकार की प्रौद्योगिकयों की शुरूआत करने की ओर आकर्षित हुए हैं। ये उद्यमी और स्ट्ार्ट–अप कृषि मूल्यत श्रृंखला में लुप्तं हो चुके सम्पर्क उपलब्ध करा सकते हैं और किसानों और ग्राहकों दोनों को उत्पादों, प्रौद्योगिक और सेवाओं की त्वरित और दक्ष डिलीवरी कर सकते हैं। खाद्य और कृषि क्षेत्र में आईसीटी–एप्पस से फार्म ओटोमेशन, स्मार्ट पोल्ट्री और डेयरी उद्योगों से स्माऔर्ट कृषि की ओर तथा संरक्षित कृषि से नवोन्मेरषी खाद्य प्रसंस्करण और पैकेजिंग की ओर प्रौद्योगिकी प्रेरित स्टार्ट–अप उभर रहे हैं। नई प्रौद्योगिकियों के साथ नए स्टारर्ट–अप बनाने के अलावा, यह उतना ही महत्वपूर्ण है कि हमारे देश में बहुत बड़ी संख्या में छोटे पैमाने के किसान उसी रूप में उद्यमी बन सकें जैसी कि वे खेती करते हैं। तथापि, इन किसानों के लिए यह चुनौती है और इसके लिए उन्हेंव प्रसार कार्यकर्ताओं और अन्य् संस्थानों की सहायता की आवश्यकता है। उन्हें एक बेहतर और अधिक दक्ष और लाभप्रद रास्ते् बताए जाने चाहिए जिससे कि वे अपने खेतों से अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकें।

इस प्रकार, उद्यमशीलता विकास के माध्यम से कृषि में नव–प्रवर्तन लाने के लिए एक मजबूत पारिस्थितिकी प्रणाली का निर्माण करने के लिए प्रौद्योगिकी इनक्यूबेशन और स्टार्ट–अप को बढ़ावा देना ऐसे उपाय हैं जिनसे देश के किसानों के जीवन में सुधार लाया जा सकता है। सरकार की नीतियों और प्राथमिकताओं के अनुरूप, भा.कृ.अ.प. ने विभिन्न वर्गों के स्टेकहोल्डरों को शामिल करते हुए कृषि क्षेत्र में उद्यमियों और स्टार्ट–अप को विकसित करने के लिए संकेन्द्रित प्रयास किए हैं। इस बात पर बल दिया गया है कि किसानों की आय को दोगुना करने के लिए कृषि से संबंधित गतिविधियां बाजार–प्रेरित वाणिज्यिक उद्यम के रूप में की जानी चाहिए। इसका अनिवार्य रूप से अर्थ यह है कि उनमें नई फसलें और किस्में उगाने की क्षमता हो, उन्नत पशुधन का प्रजनन कर सकते हों और उनके पास उत्पादकता और उत्पादन विविधीकरण को बढ़ाने के लिए वैकल्पिक प्रौद्योगिकयां हों और इसके द्वारा जोखिम कम होंगे और लाभ बढ़ेंगे। कृषि में दक्षता विकास के लिए बढ़ती कार्यबल आवश्यकताओं के लिए नियोजनीय कौशल प्रदान करने की सुविधाएं प्रदान करने वाली उचित पारिस्थितिकी तंत्र को बनाने की आवश्यकता महसूस करते हुए कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने दिनांक 20 मार्च, 2018 को कृषि एवं संबंध क्षेत्रों में कैशल विकास को बढ़ावा देने के लिए कौशल विकास एवं उद्यमिता मंत्रालय के साथ एक एम.ए.यू. हस्ताक्षर किया है। देश के कृषि विकास में ग्रामीण युवाओं के बीच उद्यमी कौशल विकसित करने के महत्वब को समझते हुए भा.कृ.अ.प. ने युवाओं को कृषि में आकर्षित करने एवं बनाए रखने के लिए (ए.आर. वाई.ए.) कार्यक्रम प्रारंभ किया है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने किसानों को उन्नत तकनीकों, नई उत्पादन प्रौद्योगिकियों, उन्नत किस्मों, ऋण और लिंकेज सुविधाओं में अनुसंधान, शिक्षण एवं प्रसार के साथ साथ कृषि में कौशल विकास व स्वरोजगार हेतु नयें कदम उठाए हैं जिनमें से मुख्य इस प्रकार हैं:

—f"k esa ewY; laao/kZu vkSj çkS|ksfxdh Å"ek;u dsaæ ¼okfVdk½

यह 3 मॉडलों के माध्यम से काम कर रहा है, 'कृषि विकास केंद्र परिसर प्रौद्योगिकी ऊष्मायन केंद्र की स्थापना और कौशल विकास का संचालन','उद्यमियों के समूह की आउटसोरसिंग' तथा 'यूनिट को वाणिज्यिक लाइनों पर काम करने के लिए आर.के.वी.वाई. के एक बार अनुदान के साथ एफ.पी.ओ. या किसी भी निजी संस्था को दिया जाना'। कुल 100 वैटिका केंद्र वाटिका के तहत स्थापित किए जाने हैं और अनुमानित बजट लगभग 2 करोड़ है।

esjk xkao esjk xkSjo

यह 25 जुलाई 2015 को पटना में माननीय प्रधान मंत्री द्वारा शुरू की गई, अनुसंधान और विस्तार शिक्षा के बीच अंतर कम करने के लिए ज्ञान के हस्तांतरण पर ध्यान केंद्रित करने का कार्यक्रम है। इस योजना के तहत, वैज्ञानिकों के समूहों को गाँवों का चयन करना है और उस गाँव के संपर्क में रहना है और किसानों को तकनीकी और अन्य संबंधित पहलुओं की जानकारी व्यक्तिगत यात्राओं के माध्यम से या दूरसंचार के माध्यम से प्रदान करनी है। इस तरह, राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान और शिक्षा प्रणाली (एन.ए.आर.ई.एस.) के 20,000 वैज्ञानिक सीधे गांवों में काम कर सकते हैं तथा उद्यमता विकास पर महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

QkeZj QLVZ

यह उत्पादन और उत्पादकता से परे ले जाने और बहु–हितधारकों के साथ किसानों–वैज्ञानिकों के संपर्क को बढ़ाने के माध्यम से को विशेषाधिकार देने के लिए एक आई.सी.ए.आर. पहल है। फार्मर फर्स्ट का उद्देश्य प्रौद्योगिकी विकास और अनुप्रयोग के लिए किसानों–वैज्ञानिकों के इंटरफेस को समृद्ध करना है। परियोजना को किसानों की समृद्धता पर ध्यान केंद्रित करने के लिए संकल्पित किया गया है–कृषिवादी इंटरफेस, जिसमें खेत की स्थिति, समस्या उन्मुखीकरण, किसानों और अन्य हितधारकों के बीच ज्ञान का आदान–प्रदान, समस्याओं का प्राथमिकताकरण, प्रौद्योगिकी संयोजन, अनुप्रयोग और प्रतिक्रिया विभिन्न हितधारकों को शामिल करते हुए साझेदारी और संस्थागत निर्माण साझेदारी ग्रामीण आधारित संस्थानों का विकास कृषि–पारिस्थितिकी तंत्र और हितधारक विश्लेषण आदि द्वारा किया जाता है।

—f"k esa ;qokvksa dks vkdf"kZr djuk vkSj mUgsa l'kä djuk ¼vk;k½

कृषि विकास में ग्रामीण युवाओं के महत्व को समझते हुए, विशेष रूप से देश की खाद्य सुरक्षा के दृष्टिकोण से, आई.सी.ए.आर. ने 'कृषि में युवाओं को आकर्षित करने और उन्हें सशक्त करन' पर एक कार्यक्रम शुरू किया है। परियोजना 25 राज्यों में कृषि विज्ञान केंद्रके माध्यम से कार्यान्वित की जा रही है, प्रत्येक राज्य से एक जिला, एक जिले में, 200–300 ग्रामीण युवाओं की पहचान उद्यमशीलता की गतिविधियों में उनके कौशल विकास और संबंधित सूक्ष्म उद्यम इकाइयों की स्थापना के लिए की जाएगी, जो कि क्षेत्र में मशरूम, बीज प्रसंस्करण, मृदा परीक्षण, मुर्गी पालन, डेयरी, बकरी, कार्प–हैचरी, वर्मी–कम्पोस्ट आदि, के.वी.के. कृषि विश्व–विद्यालयों और आई.सी.ए.आर. संस्थानों को प्रौद्योगिकी भागीदार के रूप में शामिल करेंगे। के.वी.के. में भी एक या दो उद्यम इकाइयाँ स्थापित की जाएंगी ताकि वे किसानों के लिए उद्यमी प्रशिक्षण इकाई के रूप में काम करें।

xzkeh.k m|ferk tkx:drk fodkl ;kstuk ¼LVwMsaV jsMh½

स्टूडेंट रेडी स्किल डेवलपमेंट की पहल है, जिससे कृषि स्नातक के छात्रों को कौशल मजबूत

करने में मदद मिलती है, छात्रों को 'रावे' घटक के तहत अनुसंधान स्टेशनों और केवीके के समन्वय में खेत पर काम करने का अनुभव मिलता है। छात्र कृषि परिवारों, कृषि आधारित उद्योगों, कार्यक्रम के चरणों के दौरान सहकारी समितियों के साथ गांवों में रहते हैं ताकि उन्हें वास्तविक जीवन क्षेत्र का अनुभव मिल सके, समस्याओं को समझ सकें और इन समस्याओं से निपटने के लिए आत्मविश्वास हासिल कर सकें। छात्रों में उद्यमशीलता के विकास हेतु स्टूरडेंट रेडी पहल, जो कृषि और संबंध विषयों के स्नाणतकों को अभिमुख करता है जो गहन कृषि ज्ञान चुनौती के लिए सुनिश्चित करना और रोजगार योग्यनता का भरोसा दिलाना और उद्यमी विकसित करने के लिए है। सभी कृषि विश्वविद्यालयों में इस कार्यक्रम को डिग्री एवार्ड के लिए अनिवार्य शर्त के रूप में लागू करने का विचार संबंधित विषय और स्थानीय मांगों की आवश्यकताओं पर निर्भर करता है, जो अनुभवी हाथों और व्यहारिक प्रशिक्षण को सुनिश्चित करें।

vkpfyd çk|kfxdh çcU/ku vkj 0;olk; ;kstuk vkj fodkl bdkb

देश के पाँच क्षेत्रों में पाँच आंचलिक प्रौद्योगिकी प्रबंधन और व्यवसाय योजना और विकास इकाइयाँ स्थापित की गयी हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली की इकाई ने 9 जून, 2016 को एग्री–स्टार्टअप के लिए दूसरा एग्रीबिजनेस इंक्यूबेशन प्रोग्राम –"ARISE–लॉन्च पैड" लॉन्च किया है। भारत सरकार, 'स्किल इंडिया' और 'स्टार्ट–अप इंडिया' की अपनी विभिन्न पहलों के माध्यम से, युवा उद्यमियों द्वारा विविध क्षेत्रों के स्पेक्ट्रम पर नए स्टार्ट–अप्स को प्रोत्साहित कर रहा है।

–f"k foKku dUæksa ei dk'ky fodkl

ग्रामीण युवाओं को स्वावलंबी बनाने के लिए कृषि विज्ञान केंद्र वर्मी कंपोस्ट, डेयरी फार्मिंग, मशरूम उत्पादन इत्यादि के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है जो कि कृषि में कौशल विकास की ओर एक स्वर्णिम कदम होगा। प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना के तहत होने वाले इस प्रशिक्षण में युवाओं को 200 घंटे का प्रशिक्षण दिया जाता है तथा प्रशिक्षणार्थियों को संबंधित यूनिटों का दौरा कराकर उन्हें इसमें आने वाली समस्याओं को समाधान के बारे में अवगत भी कराया जाता है।

नई प्रौद्योगिकियों में उद्यमशीलता और स्टार्ट–अप किसानों की नई प्रौद्योगिकियों तक पहुंच की प्रक्रिया में तेजी लाने के लिए नए उद्यमियों और स्टार्ट–अप को विकसित करने की नई एप्रोच को पूर्व आवश्यकता मानते हुए, भा.कृ.अ.प. ने आई.पी. और प्रौद्योगिकी व्यावसायीकरण प्रक्रिया के प्रचार में प्रबंधक की भूमिका निभाने का कार्य किया है। परिणाम स्वरूप, नीति और परिचालनात्मक दिशानिर्देश बनाए गए और भा.कृ.अ.प. के सभी संस्थीनों में तीन स्तणरों की नियमन क्रियाविधि की स्थापना की गई।

उद्यमशीलता विकास कार्यक्रम (ई.डी.पी.) युवा स्कॉसलरों, उद्यमियों और प्रगतिशील किसानों के बीच कृषि व्यसवसाय विकास गतिविधियों के बारे में जागरूकता उत्पोन्नन करने के लिए, भा.कृ.अ.प. संस्थाबनों ने संस्थापन 'जोनल' राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न कृषि व्यवसाय संबंधी कार्यक्रमों का आयोजन किया है। भा.कृ.अ.प. द्वारा नवीन स्टार्ट–अपः कृषि व्यापार उद्यमों के विकास पर विशेष जोर देते हुए केन्द्रों ने अपनी कृषि प्रसार संबंधी तकनीकी तथा बुनियादी जरूरतों के लिए पिछले वर्षों में अनेकों इन्क्यूबेट/ उद्यमियों /स्टार्ट–अप को सहायता प्रदान की है। इस अवधि के दौरान भा.कृ.अ.प. के ए.बी.आई. नैटवर्क ने कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में अपना व्यापार प्रारंभ करने के लिए उद्यमियों /स्टार्ट–अप को स्नातक/प्रशिक्षित किया है। जिन क्षेत्रों में इन स्टार्ट–अप को स्थापित किया गया है उनमें कृषि अभियांत्रिकी मशीन/ उपकरण, जैव–नाशी जीवनाशक तथा फसल पोषण, फसल उत्पादन तथा उत्पादन प्रक्रिया, मत्सकीय उत्पाद तथा प्रसंस्करण, खाद्य उत्पाद और प्रसंस्करण, बीज एवं रोपण सामग्री तथा वस्त्र उद्योग शामिल हैं।

अचार प्रक्रिया के द्वारा सब्जियों का संरक्षण

सुधा जुकारिया, शशि तिवारी एवं सी० तिवारी
कृषि विज्ञान केन्द्र, ज्योलीकोट, नैनीताल

सब्जियों से बनाये जाने वाले उत्पाद

सब्जियों को परिरक्षित करते समय यदि वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाये तो तैयार उत्पाद स्वादिष्ट होने के साथ–साथ पौष्टिक भी होंगे। सब्जियों से बनाये जाने वाले कुछ उत्पादों का प्रयोग करके गृहणियाँ कम लागत में सब्जियों को परिरक्षित कर सकती है। घर में पाये जाने वाले मध्यम आकार के बर्तन जैसे–चम्मच, कटोरी, ग्लास आदि की अनुमानित नापक क्षमता द्वारा भी किसी भी सामग्री को पाने के लिए किया जा सकता है।

vpkj

- अचार का प्रयोग लगभग प्रत्येक घर में भोजन के साथ किया जाता है।
- भोजन का स्वाद बढ़ाता है।
- पाचन शक्ति को बढ़ाता है।

yglqu dk vpkj

सामग्री	मात्रा
लहसुन	1 किग्रा0
नमक	100 ग्राम (1/2 कटोरी)
काला नमक	25 ग्राम (4 चम्मच)
हल्दी	15 ग्राम (3 चम्मच)
राई	10 ग्राम (2 चम्मच)
मेथी	10 ग्राम (2 चम्मच)
धनियां	15 ग्राम (3 चम्मच)
जीरा	20 ग्राम (4 चम्मच)
सौंफ	20 ग्राम (4 चम्मच)
बड़ी इलायची	06 ग्राम (8 दाने)
काली मिर्च	05 ग्राम (1 चम्मच)
लाल मिर्च	15 ग्राम (3 चम्मच)
लौंग	02 ग्राम (20 फूल)
कलौंजी	10 ग्राम (2 चम्मच)
हींग	02 ग्राम (1/3 चम्मच)
एसिटिक एसिड	08 मिली (1/2 चम्मच)
सोडियम बेन्जोएट	01 ग्राम (1/5 चम्मच)
तेल	200मिली (1 कटोरी)

cukus dh fof/k

- लहसुन को छीलकर साफ कर दे।
- कढ़ाई में तेल खौलाकर लहसुन को धीमी आंच पर हल्का मुलायम होने तक भूनें।
- ठंडा होने पर एसिटिक/सिरका व सोडियम बेन्जोएट मिलाकर डिब्बों में अच्छी तरह से दबा–दबा कर भर दें।
- 8–10 दिन धूप दिखाकर अचार को ऐसे स्थान पर भण्डारित करें जहां नमी न हो।

xksHkh dk vpkj

सामग्री	मात्रा
गोभी के टुकड़े	1 किग्रा
नमक	120 ग्राम
हल्दी	15 ग्राम
राई	10 ग्राम
धनिया	20 ग्राम
जीरा	20 ग्राम
सौंफ	15 ग्राम
बड़ी इलायची	05 ग्राम
कालीमिर्च	05 ग्राम
लालमिर्च	15 ग्राम
हींग	02 ग्राम
सरसों का तेल	200 मिली०
साइट्रिक एसिड	02 ग्राम
कलौंजी	10 ग्राम
एसिटिक एसिड	1½ चम्मच
सिरका	150 मिली
सोडियम बेन्जोएट	01 ग्राम

ICAR-DCFR

cuku: dh fof/k

- अब टुकड़ों में एसिगोभी को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर धो लें। इन टुकड़ों को उबलते पानी में 4–5 मिनट हल्का मुलायम होने तक उबालकर तुरंत कपड़े पर छाने लें। टुकड़ों को पानी सूखने तक धूप में सुखा लें।
- टक एसिड व सोडियम बेन्जोएट को छोड़कर बाकी सारे मसाले मिला दे। सरसों का तेल खौलायें और गरम–गरम ही गोभी में डालकर मिला दें।
- ठंडा होने पर साइट्रिक एसिड, एसिटिक एसिड/सिरका व सोडियम बेन्जोएट अच्छी तरह से मिला दें। यदि साइट्रिक एसिड न हो तो एक नींबू का रस छानकर मिला दें।
- तैयार अचार को सुखे हुए बर्तन में अच्छी तरह से दबा–दबा कर भर दें और 10 से 12 दिन धूप दिखा दें।

eyh dk vpkj

सामग्री	मात्रा
मूली	1 किग्रा
नमक	125 ग्राम
हल्दी	10 ग्राम
धनिया	15 ग्राम
जीरा	15 ग्राम
सौंफ	15 ग्राम
कालीमिर्च	05 ग्राम
लालमिर्च	10 ग्राम
कलौंजी	05 ग्राम
एसिटिक एसिड	7–8 मिली0/
सिरका	150 मिली
सोडियम बेन्जोएट	01 ग्राम
सरसों का तेल	150 मिली0

cuku: dh fof/k

- मूली के रेशे चाकू से खुरचकर साफ करें और अच्छी तरह से धो लें। इनके 3 से 4 मिमी0 मोटे गोल टुकड़े काट लें।
- टुकड़ों को 4–5 दिन के लिए 10 प्रतिशत नमक के घोल में (100 ग्राम नमक और एक लीटर पानी) डालकर रख दें।
- इसके पश्चात टुकड़ों को नमक के पानी से निकालकर अच्छी तरह से धोकर साफ कर लें। ऐसा करने से मूली की गंध निकल जाती है।
- इन टुकड़ों को उबलते पानी में डालकर 4–5 मिनट के लिए (हल्का मुलायम होने तक) उबालकर तुरन्त कपड़े पर छान लें। इसे धूप में पानी सूखने तक अच्छी तरह से सुखा लें।
- अब इन टुकड़ों में बचा हुआ नमक (25 ग्राम), मसाले व खौलाकर ठंडा किया हुआ तेल मिला लें।
- अन्त में एसिटिक एसिड/सिरका व सोडियम बेन्जोएट को अचार में अच्छी तरह मिलाकर डिब्बे में दबा–दबा कर भर दें और 10–12 दिन तक धूप में रखें।

dVgy dk vpkj

सामग्री	मात्रा
कटहल	1 किग्रा
नमक	120 ग्राम
हल्द	15 ग्राम
धनिया	20 ग्राम
जीरा	25 ग्राम
सौंफ	25 ग्राम
राई	10 ग्राम
कालीमिर्च	05 ग्राम
लालमिर्च	15 ग्राम
हींग	03 ग्राम
साबुत लौग	01 ग्राम
बड़ी इलायची	03 ग्राम
कलौंजी	05 ग्राम
एसिटिक एसिड	08 मिली०
सोडियम बेन्जोएट	1.5 ग्राम
सरसों का तेल	250 मिली०

cuku: dh fof/k

- कटहल को छोटे टुकड़ों में काटकर धो लें। इन टुकड़ों को उबलते पानी में 4–5 मिनट (हल्का मुलायम होने तक) उबालकर तुरंत कपड़े पर छाने ले। टुकड़ों को पानी सूखने तक धूप में सुखा लें।

- अब टुकड़ों में एसिटिक एसिड व सोडियम बेन्जोएट को छोड़कर बाकी सारे मसाले मिला दे। सरसों का तेल खौलायें और गरम–गरम ही कटहल में डालकर मिला दें।
- ठंडा होने पर साइट्रिक एसिड, एसिटिक एसिड/सिरका व सोडियम बेन्जोएट अच्छी तरह से मिला दें। यदि साइट्रिक एसिड न हो तो एक नींबू का रस छानकर मिला दें।
- तैयार अचार को सुखे हुए बर्तन में अच्छी तरह से दबा–दबा कर भर दें और 10 से 12 दिन धूप दिखा दें।

vnjd dk vpkj

सामग्री	मात्रा
अदरक	1 किग्रा
लालमिर्च	15 ग्राम
नमक	140 ग्राम
कलौंजी	10 ग्राम
राई	20 ग्राम
लौंग	03 ग्राम
हल्दी	15 ग्राम
सरसों का तेल	300 मिली0
धनिया	10 ग्राम
सिरका	250 मिली
जीरा	25 ग्राम
सौंफ	20 ग्राम
बड़ी इलायची	03 ग्राम–4दाने

cukus dh fof/k

- अचार बनाने के लिए बड़े आकार की कम रेशे वाली अदरक अधिक उपयुक्त होती है। अदरक को चाकू से खुरच कर छिलका निकाल दें तथा पानी से अच्छी तरह से धोकर मिट्टी साफ कर लें। अदरक के लगभग चार मिमी0 मोटे व 3–4 सेमी0 लम्बे टुकड़े काट लें। इन टुकडों को 30 मिनट तक उबलते पानी में उबालने के पश्चात कपड़े पर छान लें। पानी निकल जाने क बाद टुकड़ों में राई लपेटकर 24 घंटे के लिए रख दे। अगले दिन टुकड़ों में नमक व अन्य मसाले मिलाकर गरम करके ठंडा किया हुआ सरसों को तेल मिला दें।
- अन्त में एसिटिक एसिड/सिरका व सोडियम बेन्जोएट को अच्छी तरह से मिलाने के बाद बर्तन में खूब दबा–दबा कर भर दें तथा 15–20 दिन धूप दिखा दें।

vnjd] fep] xktj o xksHkh dk fefJr vpkj

सामग्री	मात्रा
अदरक	01 किग्रा,
बड़ी इलायची	10 ग्राम–12 दाने
मिर्च	01 किग्रा
खड़ी लौंग	10 ग्राम
गाजर	01 किग्रा
काली मिर्च	15 ग्राम
गोभी के टुकड़े	01 किग्रा
कलौंजी	20 ग्राम
नमक	500 ग्राम
सरसों का तेल	01 लीटर
हल्दी	50 ग्राम
जीरा	80 ग्राम
राई	50 ग्राम
सोडियम बेन्जोएट	04 ग्राम 4/5 चम्मच
धनिया	50 ग्राम
सौंफ	60 ग्राम
एसिटिक एसिड	30 मिली0
सिरका	600 मिली

cukus dh fof/k

अदरक को चाकू से खुरचकर छिलका साफ कर लें। मिर्च की डण्ठल तोड़कर अलग कर लें। गाजर को खुरच कर रेशे निकाल दें तथा गोभी के डण्ठल व पत्ते अलग कर दें। सभी सब्जियों को अच्छी तरह से धोकर साफ कर लें तथा मिर्च को छोड़कर बाकी सब्जियों के छोटे–छोटे टुकड़े काट लें। अब गाजर को 3 मिनट, गोभी 5 मिनट व अदरक को 30 मिनट तक उबलते पानी में उबालने के बाद तुरंत कपड़े पर छानकर पानी सूखने तक धूप में सुखायें। मिर्च को भी 1/2 घंटे धूप में सुखा लें। सभी सब्जियों को एक साथ लेकर उसमें नमक, मसाले, एसिटिक एसिड/सिरका व सोडियम बेन्जोएट अच्छी तरह से मिलाने के बाद खौलाकर ठंडा किया हुआ तेल

मिला दें तथा बर्तन में दबा–दबा भर दें।अचार को 15 दिन धूप दिखाने के बाद ऐसे स्थान पर भण्डारित करें जहां अचार में नमी न पहुंचे।

djsys dk vpkj

सामग्री	मात्रा
करेला	1 किग्रा
नमक	125 ग्राम
राई	40 ग्राम
अमचूर	50 ग्राम
हल्दी	20 ग्राम
धनिया	25 ग्राम
सौंफ	40 ग्राम
जीरा	50 ग्राम
लाल मिर्च	15 ग्राम
लौंग	03 ग्राम
बड़ी इलायची	03 ग्राम–4 दाने
कलौंजी	10 ग्राम
सरसों का तेल	400 मिली0

cukus dh fof/k

- अचार बनाने के लिये छोटे आकार के बिना दाग वाले ताजे करेले का प्रयोग उत्तम है। करेले को खुरचकर ऊपर की परत को निकाल दें। इस पर नमक लपेटकर रात भर के लिए रख दें। रात भर में करेले से जो पानी निकलेगा उसे फेंक दें तथा करेले को साफ पानी में तीन –चार बार अच्छी तरह से धो लें। इससे करेले का कडुवापन कम हो जायेगा।
- करेले को धूप में डालकर ऊपर का पानी सुखा लें। सभी मसालों को मोटा पीस लें तथा थोड़े से तेल में भून लें। करेले पर छोटा सा चीरा लगाकर अन्दर का गूदा व बीज निकाल दें और खाली स्थान में मसाला भर कर ऊपर से सफेद धागा लपेट दें जिससे मसाला गिरे नहीं।
- अब इसे बर्तन में भर कर ऊपर से खौलाकर ठंडा किया हुआ तेल डाल दे। करेले पूरी तरह से तेल में ढके होने चाहिए अन्यथा फफूंदी लग जायेगी।

gjh fep dk vpkj

सामग्री	मात्रा
हरी मिर्च	1 किग्रा
नमक	175 ग्राम
राई	20 ग्राम
जीरा	25 ग्राम
सौंफ	20 ग्राम
मेथी	10 ग्राम
धनिया	25 ग्राम
हल्दी	20 ग्राम
सरसों का तेल	150 मिली0
नींबू का रस	150 मिली0

cukus dh fof/k

- हरी मिर्च की डण्ठल निकालकर धोकर साफ कर लें। इसे पानी सूखने तक धूप में सुखाने के बाद दो फांकों में काट लें।
- कड़ाई में तेल खौलाकर रख लें। कटी हुई मिर्च में बारीक पिसे मसाले, नमक व गरम तेल मिलायें।
- ठंडा होने पर नींबू का रस अच्छी तरह से मिलाकर बर्तन में दबा–दबा कर भर दें। ऊपर से थोड़ा नमक बिखेर कर 10–15 दिन धूप में रख दें।

Ykky fep dk Hkjok vpkj

सामग्री	मात्रा
लाल मिर्च	1 किग्रा
नमक	125 ग्राम
जीरा	50 ग्राम
खटाई	50 ग्राम
राई	50 ग्राम
सौंफ	25 ग्राम
काली मिर्च	10 ग्राम
हल्दी	20 ग्राम
धनिया	50 ग्राम
मेथी	10 ग्राम
सरसों का तेल	400 मिली०

cukus dh fof/k

- दाग रहित मोटी लाल मिर्च को धोकर कुछ देर धूप में फैला दें। जिससे ऊपर का पानी सूख जाये। मिर्च के डण्ठल वाले भाग को

तेज चाकू से थोड़ा सा काटकर तीली से अन्दर का सारा बीज निकाल लें।

- सभी मसालों को मोटा पीस लें तथा साथ में मिर्च के बीज भी मिला दें। इन मसालों में थोड़ा सा तेल डालकर हल्का सा भून लें। यदि रासायनिक परिरक्षक (दवा) का प्रयोग कराना हो तो 1.5 ग्राम सोडियम बेन्जोएट को पूरे मसाले में मिला दें। अब मसालों को मिर्च के अंदर दबा–दबा भर दें।
- भरी हुई मिर्च को जार में इस प्रकार रखें कि उनके बीच जगह कम से कम रहे। ऊपर से खौलाकर ठंडा किया हुआ सरसों का तेल डाल दें।
- अचार पूरी तरह से तेल से ढका होना चाहिए अन्यथा फफूंदी लग जायेगी। जार को ढक्कन से अच्छी तरह से बन्द करके 10–15 दिन के लिए धूप में रख दें।

vpkj cukus dk izf'k{k.k

VekVj dk dpi

सामग्री	मात्रा
टमाटर	7.5 किग्रा
चीनी	600 ग्राम
नमक	60 ग्राम
सोड़ियम बेन्जोएट	6 ग्राम
गरम मसाला	40 ग्राम
प्याज, लहसुन व अदरक	120, 25 व 60 ग्राम
एसिटिक एसिड़	25 मिली.
सॉस की बोतल	3 (500 ग्राम)

7-5 fdxk VekVj ls rS;kj iYi 6 fdxk cukus dh fof/k

- धोकर छोटे– छोटे टुकड़ों में काटें।
- प्याज,लहसुन व अदरक को बारीक पीस कर टमाटर के साथ गलने तक पकायें।
- पल्पर द्वारा पल्प निकालें।
- कुल चीनी का तिहाई भाग पल्प में मिलाकर पकायें
- सारे मसालों को महीन पीस कर कपड़े की पोटली में ड़ालकर धागे से बॉधकर पल्प में डाल दें।
- जब यह पककर एक तिहाई हो जाय तो इसमें बाकी बची चीनी व नमक मिला दें।
- सोड़ियम बेन्जोएट को पानी में घोलकर मिलायें।
- अन्त में एसिटिक अम्ल डालकर अच्छी तरह मिलाने के पश्चात सॉस की बोतल में भरें।

तैयार उत्पाद : 3 किग्रा

लागत मूल्य रू 303.00

लागत मूल्य प्रति शीशी (500 ग्राम) रू 50.00

शुद्ध लाभ मात्रा बाजार मूल्य – लागत मूल्य

रू 80.00 – रू 50.00 रू 30.00

ग्रामीण क्षेत्रों में कुक्कुट पालन

दिव्या, चन्द्र देव, जगवीर सिंह त्यागी, संदीप सरन, राजनरायण,
एस०के० भान्जा एवं ए०के० तिवारी
भा.कृ.अनु.परि.–केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर–243122

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ गाँवो की प्रधानता है। अत्याधिक लोगो को जीवन–यापन के लिए कृषि के साथ–साथ छोटे व्यवसाय जैसे कि पशुपालन, कुक्कुट पालन, डेयरी उद्योग, फल उत्पादन एवं मशरूम उत्पादन इत्यादि हैं। गाँवों की अधिकतम अबादी सीमांत व लघु कृषक अथवा भूमिहीन कृषकों की है जिनको गाँवों में पर्याप्त रोजगार न होने के कारण शहरों की तरफ पलायन करना पड़ता है वर्तमान समय में कुक्कुट पालन व्यवसाय से ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में बहुत ही कम समय में अधिक आय प्राप्त की जा सकती है। भारत में कुक्कुट पालन एक उद्योग का रूप ले चुका है। भारत में कुक्कुट उत्पादन ने पिछले चार दशकों में ऊँची छलांग लगाई है, जो पारंपरिक कृषि पद्धतियों से चलकर अत्याधुनिक वाणिज्यिक उत्पादन लगभग 114.38 बिलियन है। आंकड़ो से यह पता चलता है कि 2012 से 2019 के बीच बैकयार्ड पोल्ट्री पक्षियों की संख्या में 46 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस कारण अण्ड़े की वार्षिक उपलब्धता 1971 में 10 अण्ड़े से बढ़कर आज 94 अण्डे व्यक्ति वर्ष हो गई है इसी तरह मांस की वार्षिक उपलब्धता 1971 में 0.22 किग्रा से बढकर आज लगभग 4.00 किग्रा व्यक्ति वर्श हो गई है फिर भी यह उत्पादन भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद नई दिल्ली द्वारा निर्धारित की गई मानदंडों प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति अण्डा एवं मांस उत्पादन क्रमशः 180 और 10.95 किग्रा से काफी कम है इन मानकों को पूरा करने के लिए हमें अण्डा एवं मांस की उत्पादकता में लगभग 2 गुना वृद्वि करनी होगी।

वैसे तो कुक्कुट पालन एवं कृषकों का संबन्ध बहुत पुराना है किंतु इनके द्वारा पाली जाने वाली मुर्गियाँ घर के पिछवाड़े में ही रखी जाती थीं। उनके विकास एवं उनके व्यवसायिक रूप के बारे में अधिक ध्यान नहीं गया। कुछ भ्रांतियाँ एवं संक्रामक रोगों के कारण इसका पर्याप्त विकास नहीं हो सका। इसी कारण कुछ लोग इस व्यवसाय पर चर्चा भी करना पसंद नहीं करते हैं। लेकिन अब परिस्थितियाँ बदल गयीं हैं। भ्रांतियाँ दूर हो चूकीं हैं तथा बेहतर स्वास्थ्य प्रबन्ध तथा टीकाकरण से संक्रामक रोगों पर काबू पा लिया गया है। आज यह व्यवसाय अत्यन्त तीव्र गति से प्रगति करने वाला एक सफल व्यवसाय है जिससे शहरी एवं ग्रामीण दोनों ही परिवेशों में अत्यंत उपयोगी है।

स्वरोजगार शुरू करने से पहले उस में लागत और लाभ के बारे में जान लेना जरूरी है। चार–पाँच महीने में मुर्गी अण्डे देने लायक हो जाती है। प्रति अण्डा उत्पादन मे तीन से साढ़े तीन रूपये की लागत आती है और बाजार मे चार से पाँच रूपये की कीमत में उसे बेचा जा सकता है। इस प्रकार प्रति अण्डा एक से डेढ रूपये का फायदा हो जाता है। इसी प्रकार एक ब्रायलर मुर्गे से लगभग 15–20 रूपये की आमदनी डेढ़ महीने में हो जाती है। अब बात करते हैं मुर्गी पालन की बैकयार्ड तकनीकी के बारे में जो गाँवों में अत्याधिक प्रचलित है –

बैकयार्ड कुक्कुट पालन में प्रायः 5–20 मुर्गीयों का छोटा सा समूह एक परिवार या घर में पाले जाते हैं जो घर के पिछवाड़े तथा गली कूचों से बीज, कीड़े, मकोड़े, घास–फूस, पौधों की कोमल पत्तियाँ तथा घर के बचे जूठन इत्यादि को खाकर अपना पेट भरते हैं। प्रायः दोहरे उपयोग वाली मुर्गियों का उपयोग बैकयार्ड कुक्कुट पालन के लिए किया जाता है। इसमें मुर्गियाँ घर की चार दिवारी के अन्दर स्वतः विचरण करते हुए अपना खाना–पीना खुद खोजतीं हैं। बैकयार्ड कुक्कुट को पालने के लिए किसी विशेष घर की आवश्यकता नहीं होती है

इन्हें रखने के लिए साधारण सी झोपड़ी या फिर बाँस के फ्रेम और छप्पर की छत वाली झोपड़ी ही काफी है।

- इस पद्धति से कुक्कुट पालन के लिए बहुत कम जमीन, श्रम एवं पूंजी की आवश्यकता होती है।
- यह गाँवों के लोगों को फसल की बर्बादी या अन्य आपात स्थितियों में अतिरिक्त आय प्रदान कर जीने की सुरक्षा देता है।
- यह बच्चों एवं औरतों में कुपोषण से मुक्ति दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।
- यह अवशिष्ट पदार्थो जैसे रसोई से बचा खाना, कीड़े मकोड़ो को उच्च प्रोटीन वाले अंडे एवं मांस में बदलकर खाद्य सुरक्षा एवं पर्यावरण सुरक्षा मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।
- मुर्गी में विष्टा से भूमि उपजाऊ होती है, दाना चुगने के दौरान 15 मुर्गियों का झुण्ड प्रतिदिन लगभग 1.0–1.25 किलो बीट खाद के रूप में देती है।
- इस पद्धति द्वारा पैदा अंड़े एवं मांस में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा काफी कम होती है, इसलिए इसका सेवन स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है।
- यह ग्रामीण परिवेश मे पिछड़े लोगों को स्वरोजगार प्रदान करता है।

xkeh.k d|Dd|V ikyu d: fy, cd ;kM rduhdh

"बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग" रोजगार और आय सृजन के माध्यम से सीमांत किसानों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार करने, कुपोषण को कम करने के अलावा ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों में प्रवासन को कम करने के प्रभावी समाधानों में से एक हो सकता है। देशी चिकन का संरक्षण एवं और ग्रामीण पोल्ट्री के लिए उन्नत क्रॉस का विकास भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान (सी.ए.आर.आई.), इज्जतनगर, बरेली की अनिवार्य गतिविधियों में से एक रहा है। बैकयार्ड कुक्कुट पालन के लिए उपयुक्त कुछ विशेष बिन्दु :

- कुक्कुट नस्लें,
- आवास प्रबंधन,
- आहार एवं जल प्रबन्धन,
- स्वास्थ्य एवं रोग नियन्त्रण
- तकनीकी ज्ञान
- कुक्कुट विपणन
- उन्नत देशी मुर्गियों की आर्थिकता
- अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्न

1) कुक्कुट नस्लें

बैकयार्ड कुक्कुट पालन हेतु विदेशी नस्लों की जगह देशी नस्लें ज्यादा उपयुक्त होती है। देशी नस्ल की मुर्गियां, स्थानीय माहौल में सदियों से पलने के कारण अपने आप को यहाँ के वातावरण मे आसानी से ढाल लेतीं हैं एवं अपने में रोग निरोधी क्षमता का ज्यादा समायोजन करतीं है। इसी के चलते ये मुर्गियाँ देश के आर्द्र–उष्मीय प्रकोप को सहने में सक्षम होती हैं साथ ही इनमें घूम फिरकर अपने भोजन जुटाने, निम्न कोटि के आहार पर जीवनयापन करने, हल्के तथा फुर्तीले शरीर के कारण शिकारी जानवरों से बचाव एवं वंश क्रम चलाने की असीम क्षमता होती है।

कैरी श्यामा

यह कड़कनाथ और कैरी रेड की संकर नस्ल है। इन पक्षियों मे विभिन्न रंगों के पंख होते है लेकिन काले रंग का प्रभुत्व होता है। जनजातीय आबादी के द्वारा मानव रोगों के इलाज के लिए इसे पसंद किया जाता है। त्वचा, चोंच, टांग, पैर की उंगलियाँ और तलुए गहरे भूरे रंग के होते है। इस पक्षी की खासियत यह है कि अधिकांश आंतरिक अंगों मे विशिष्ट काले रंजकता दिखाई देती है। मांसपेशियों और ऊतकों का काला रंग मेलेनिन वर्णक के जमाव के कारण होता है जो प्रोटीन में वृद्वि और वसा में कमी का कारण बनता है, जिससे बड़े पक्षियों का मांस कोमल होता है।

उत्पादन विशेषताएँ

20 सप्ताह पर (नर पक्षियों)
शरीर का वजन– 1450 ग्राम
20 सप्ताह पर (मादा पक्षियों)
शरीर का वजन – 1120 ग्राम
यौन परिपक्वता पर आयु – 170 दिन

वार्शिक अंडा उत्पादन– 210
40 सप्ताह में अंडे का वजन– 53 ग्राम

कैरी निर्भीक

यह एक दोहरे उद्देश्य अण्ड़ा एवं मांस उत्पादन के लिए भ.कृ.अनु.परि.– केंद्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान बरेली द्वारा विकसित नस्ल है। कैरी रेड के साथ भारतीय देशी नस्ल असील का संकरण है। यह अपने लड़ाकू चरित्रों, सक्रियता मजबूत शारीरिक गठन और जुझारू प्रवृत्ति की वजह से अपने शिकारियों से खुद को बचा पाते हैं। कैरी निर्भीक देश के सभी जलवायु क्षेत्रों के अनुकूल है।

उत्पादन विशेषताएँ

20 सप्ताह पर (नर पक्षियों)
शरीर का वजन – 1850 ग्राम
20 सप्ताह पर (मादा पक्षियों)
शरीर का वजन – 1350 ग्राम
यौन परिपक्वता पर आयु – 175–180 दिन
वार्षिक अंडा उत्पादन 180–200
40 सप्ताह में अंडे का वजन– 54 ग्राम
अंडे देने की अवस्था के दौरान मृत्यु दर 3–5 प्रतिशत

कैरी उपकारी

यह कैरी रेड के साथ देशी फ्रिजल की एक क्रॉसब्रीड नस्ल है। यह मध्य शरीर के अकार के साथ बहुरंगी पक्षी है। फ्रोजल पंख (प्लूमेज)होने के कारण इनमें गर्मी को सहन करने की क्षमता अधिक होती है। जिसके कारण इन पक्षियों को विशेष रूप से शुष्क उष्णकटिबंधीय जलवायु क्षेत्रों में समायोजित करने में मद्द मिलती है।

उत्पादन विशेषताएँ

20 सप्ताह पर (नर पक्षियों)
शरीर का वजन – 1688 ग्राम
20 सप्ताह पर (मादा पक्षियों)
शरीर का वजन – 1285 ग्राम
यौन परिपक्वता पर आयु – 165 दिन
वार्षिक अंडा उत्पादन– 220
40 सप्ताह में अंडे का वजन– 60 ग्राम

कैरी हितकारी

कैरी हितकारी पक्षियों को भारतीय मूल की नेकेड नैक और कैरी रेड के साथ क्रॉस करके विकसित किया गया है। इन पक्षियों में गर्दन क्षेत्र पंखों से रहित होते हैं और शरीर पर 30 से 40 प्रतिशत पंखों की कमी रहती है। पंखों की कमी आन्तरिक गर्मी अपव्यय मे मदद करती है जिसके कारण उष्णकटिबंधीय अनुकूलता बढ़ जाती है जिससे अण्डे के उत्पादन में कोई कमी नहीं आती है। ये पक्षी गर्म आद्रतटीय क्षेत्र में पालने के लिए बहुत उपयुक्त पायी गई है।

उत्पादन विशेषताएँ

20 सप्ताह पर (नरपक्षियों)
शरीर का वजन– 1750 ग्राम
20 सप्ताह पर (मादा पक्षियों)
शरीर का वजन– 1320 ग्राम
यौन परिपक्वता पर आयु– 178 दिन
वर्षिक अंडा उत्पादन– 200
40 सप्ताह में अंडे का वजन– 61 ग्राम

कैरी देवेन्द्र

कैरी देवेन्द्र एक मध्यम आकार का द्विउद्देशीय पक्षी है, जो रंगीन सिंथेटिक ब्रायलर और रोड आइलैंड रेड के क्रॉस से बनाया गया है। अपने आकर्षण रंग के कारण यह भारतीय उपभोक्ताओं के लिए सबसे उपयुक्त पक्षी है। ब्रायलर मांस की तुलना मे इसके मांस मे वसा की मात्रा कम होती है, जोकि इसे उपभोक्ता की पहली पसंद बनाती है। कैरी देवेन्द्र अपनी बेहतर उत्तर जीविता और मध्यम अण्डा उत्पादन क्षमता के कारण ग्रामीण कुक्कुट के लिए भी उपयुक्त पक्षी है।

उत्पादन विशेषताएँ

8 सप्ताह पर शरीर का वजन – 1100–1200 ग्राम
10 सप्ताह पर शरीर का वजन – 1400–1500 ग्राम
12 सप्ताह पर शरीर का वजन – 1700–1800 ग्राम
आहार रूपांतरण अनुपात (0–8 सप्ताह) पर 2.5–2.6

यौन परिपक्वता पर आयु –
155–160 दिन
वार्षिक अंडा उत्पादन–
190–200
बढ़ती अवस्था के दौरान मृत्यु दर–
2–3 प्रतिशत
अण्डे देने की अवस्था के दौरान मृत्यु दर–
3–5 प्रतिशत

वनराजा

यह एक दोहरे उद्देश्य अर्थात् अंडा एवं मांस उत्पादन के लिए पोल्ट्री परियोजना निदेशालय, हैदराबाद के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में फ्री रेंज लालन के लिए प्रजाति विकसित की गई है। यह बहुबसीय एवं आकर्षक पक्षी है। इसकी रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक होने के कारण रोग ग्रस्त होने की संम्भावना कम होती है। निम्न आहार उलब्धता पर अच्छा वृद्धि दर प्राप्त होता है। पंजा एवं पिण्डली लम्बा होने के कारण यह परभक्षी से स्वयं की रक्षा करने में अधिक सक्षम है।

उत्पादन विशेषताएँ

एक दिन के चूजे का वजन –	35 से 40 ग्राम
6 सप्ताह पर शरीर का वजन–	700–800 ग्राम
अण्ड़ा उत्पादन का आरम्भ	175–180 दिन
अण्ड़े का वजन	55–63 ग्राम
वार्षिक अंडा उत्पादन–	110–120

2) आवास प्रबंधन

कुक्कुट आवास से आशय है अण्डा तथा मांस उत्पादन वाले कुक्कुटों को उचित वातावरण की परिस्थितियों में रखने हेतु स्थान का प्रबंधन पक्षियों को सुरक्षा देने, आराम देने,उत्पादन के लिए आहार पोषकों के सर्वोत्तम उपयोग के लिए तथा कुक्कुट पालकों को पक्षी समूह को नियंत्रित करने की सुविधा के लिए आवास अत्यंन्त आवश्यक है। पारिवारिक कुक्कुट पालन में मुर्गियों को पूरे दिन स्वयं भोजन संग्रहण के लिए, खुले एवं प्राकृतिक वातावरण स्थानों मे छोड़ दिया जाता है एवं रात्रि विश्राम तथा शत्रुओं पर पक्षियों से सुरक्षा के लिए छोटे–छोटे मुर्गी आवासों की व्यवस्था की जाती है। प्रायः 2.0×1.5 वर्गमीटर परिमाप के आवासों मे 20–25 वयस्क मुर्गियों को आराम से रात्रि विश्राम हेतु प्रयोग मे लाया जा सकता है। ये आवास स्थानीय सामग्रियों के प्रयोग से कम लागत मे तैयार करना चाहिए। अच्छे उत्पादन के लिए मुर्गी के आवास साफ, सुथरे एवं हवादार होने चाहिए। सम्भवतः आवासों में तीन से चार इंच मोटी धान की भूसी की लेयर बिछा देनी चाहिए जिससे कि प्रतिदिन की सफाई से मुक्ति मिल सके। पीने के लिए हमेशा स्वच्छ पानी की व्यवस्था कुक्कुट आवासों एवं वाहर दोनों जगह करना चाहिए।

कुक्कुट झोपड़ी

स्थानीय उपलब्ध सामग्रियों से 20–25 पक्षियों की क्षमता वाली कुक्कुट झोपड़ियों (2.0मी.×1.5मी.) का निर्माण किया जा सकता है। झोपड़ियों के फर्श को ईटों (खड़ी ईंटों) की परतों मे लकड़ी का बुरादा और धान की पुआल को भरकर बनाया जाता है।

बांस के फ्रेम और छप्पर की छत

शेड के चारों ओर बांस के फ्रेम में 76 मि.मी. ×76 मि.मी. की जाली लगाई गई (चित्र मे दिखाया गया है।) झोपड़ी के किनारे की दीवारों तथा केन्द्र की ऊँचाई क्रमशः 1.2 मी. तथा 1.5 मी. होनी चाहिए। छत का ढलान चारों ओर से 0.3 मी. की है ताकि वर्षा की बौछार झोपड़ी के अन्दर न जा सके। छत को पुआल से बनाया गया है। झोपड़ी के धरातल पर लगभग 1.5 मि.मी. मोटी फाइबर सीट को 0.3 मी. लगाया गया ताकी रेंगने वाले जन्तुओं और पशु पक्षियों को झोपड़ी मे प्रवेश करने से रोका जा सके। प्रवेश गेट को छोड़कर चारों ओर बचे हुए किनारों पर फाइबर सीट के ऊपर उपयुक्त आकार की बांस की जाली लगाई गई। 1.0 मी. × 0.8मी. चौड़ाई वाले एकल पैनल का गेट लगाया गया, जिसे आवश्यकतानुसार खोला एवं बन्द किया जा सके और ताला भी लगाया जा सके। झोपड़ी के अन्दर दोनो किनारों की लम्बाई के अनुसार उपयुक्त ऊँचाई (लगभग 0.6 मी.) बांस के फ्रेम, बोरी तथा तिरपाल (काली पॉलीथीन) से बनी छत–ऊपर झोपड़ी मे दर्शाए गए चित्र के अनुसार किनारों के

फ्रेम तथा ऊपरी भाग को बांस की पट्टीयों से बनाया गया है। छत के ऊपरी भाग को बांस के फ्रेम से बनाया गया, जिसे बोरी और तिरपाल (काली पॉलीथीन) से ढंक दिया गया है। चारों किनारों को धरातल से 0.6 मी. की ऊचाई तक फाइबर सीट से ढंक दिया गया और फाइबर सीट के ऊपर सभी किनारों की बची हुई ऊँचाई तक उपयुक्त आकार की बांस की जाली लगाई गई है।

फाइबर की सीट तथा लाहे की वर्गाकार पाइप के फ्रेम से बनी छत–इस झोपड़ी मे 1.5 इंच × 1.5 इंच मोटी लोहे वर्गाकार पाइप से मुख्य फ्रेम तथा 1.5 इंच × 1.0 इंच मोटी वर्गाकार पाइप से सहायक फ्रेम बनाये गये। छत की फाइबर सीट को लोहे की फ्रेम में लगाया गया जैसा चित्र मे देख सकते है। झोपड़ी की किनारों एवं केन्द्र से ऊँचाई लगभग क्रमशः 1.2मी. तथा 1.5 मी. होनी चाहिए। छत से चारों 0.15 मी. की छजरी भी लटकायी गई है। धरातल से 0.3 मी. की ऊँचाई तक 1.5 मि.मी. मोटी फाइबर सीट को चारों ओर लगाया गया है। फाइबर सीट के ऊपर चारों ओर 2 मि.मी. मोटी और लगभग 32 मि.मी.× 32 मि.मी. आकार की तार की जाली लगाई गयी। तार की जाली के ऊपर 0.2मी. की फाइबर सीट की पट्टी छत की ऊँचाई तक चारों ओर से लगाई गयी। 1.0 मी. लम्बा, 0.8 मी. चौड़ा गेट लगाया गया, जिसे आवश्यकतानुसार खोला एवं बन्द किया जा सकता है और ताला भी लगाया जा सकता है।

3) आहार एवं जल प्रबन्धन

आमतौर पर ग्रामीण किसान सिर्फ एक तरह के मौसमी अनाज मुर्गियों को खाने के लिए देते हैं जिससे सभी पोषक मुर्गियों को नहीं मिल पाता अतः साल भर में उपजित विभिन्न आनाजों को मिश्रित कर मुर्गियों को खिलाना ज्यादा लाभप्रद होता है। यदि आहार में मिनरल मिक्सचर एवं विटामिन मिक्सचर मुर्गियों के दाने मिश्रित किया जाये तो अण्डें एवं मांस का उत्पादन बढ़ जाता है। इस आहार को प्रति मुर्गी करीब 50 से 60 ग्राम की दर से शाम के समय देना चाहिए आहार की मात्रा प्रकृतिक स्त्रोतों से उपलब्ध खाद्य मात्रा के अनुसार घटाया/बढ़ाया जा सकता है। कुक्कुट साधारण आहार प्रणाली वाली जीव है तथा इनमें रेशों को पचानने की क्षमता कम होती है। आम तौर पर कुक्कुट का आहार मोटे दानों (मक्का, ज्वार, गेहूँ, चावल की कनकी) दाना सह–उत्पादों (चोकर, धान, का कोढ़ा एवं अन्य उत्पाद), प्रोटीन श्रोतों (मूंगफली की खली, सोयाबीन –एक्सट्रैक्सन, तिल की खली आदि एवं मछली चूर्ण, प्राकृतिक स्त्रोतों से प्राप्त मुर्गी आहार की मात्रा में दिन प्रतिदिन कमी आ रही है अतः संतुलित आहार की उपलब्धता कुक्कुट पालन हेतु अति– आवश्यक है।

बैकयार्ड कुक्कुट पालन हेतु संतुलित आहार

कुक्कुट पालकों के लिए कुक्कुटों के आहार पर ध्यान देना बहुत ही आवश्यक है बैकयार्ड के फार्म सफल होने का कारण ही यही है कि इन पद्धति में हम पक्षियों को खाना ढूंढने के लिए मुक्त छोड़ देते हैं जिससे कि पक्षियों के आहार की लागत में कमी आती है कुक्कट पालन में सबसे बड़ा खर्च आहार का होता है। अच्छा अहार अच्छा निवेश है, क्योंकि असंतुलित आहार पक्षियों के उत्पादन स्तर को कम कर देता है तथा इससे पोषण संबन्धी रोग भी हो सकते हैं। छोटे कुक्कुट पालक अपने मुर्गियों के लिए बने बनायें संतुलित आहार बाजार से खरीद लेते हैं। किन्तु यदि कोई भी कुक्कुट पालक स्वयं ही आहार बनाना चाहे तो इसके लिए उन्हे कई बातों का ध्यान रखना जरूरी हो जाता है। कुक्कुट पालकों को मुर्गियों का आहार बनाने के लिए मुख्यता यह समझ लेना चाहिए कि उन्हें आहार अण्डे देने वाली मुर्गियों के लिए बनाना है या मांस देने वाली मुर्गियों के लिए। तत्पश्चात कम खर्च पर सभी पोषक तत्वों से भरपूर संतुलित आहार बनाने के लिए हमें विभिन्न पारम्परिक व अपारम्परिक खाद्य पदार्थो का प्रयोग के बारे मे उचित जानकारी होनी चाहिए। हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि कौन–कौन से खाद्य पदार्थ आसानी व कम कीमत पर उपलब्ध हो सकता है। इनकी गुणात्मक दृष्टि से जाँच पड़ताल करना अति

आवश्यक होता है। कुक्कुट पालकों को यह भी देखना होता है कि आहार में मिलाये जाने वाले खाद्य पदार्थो में किसी भी विशैला पदार्थ तो नही है यदि है तो किस स्तर तक पदार्थ मे मिला सकते हैं ताकि विषैले तत्व का प्रभाव पक्षियों पर न पड़े। अर्थात बनाया गया आहार वास्तव में पौष्टिक, स्वादिष्ट व सस्ता हो। यदि किसी कारणवश किसी एक पदार्थ की कमी हो जाती है तब उसके स्थान पर कौन सा दूसरा पदार्थ मिलाया जाये, यह जानकारी होना अच्छा रहता है।

आहार सूत्र तैयार करना

आहार सूत्र तैयार करने की कई विधियाँ है परन्तु हीट एण्ड ट्रायल विधि कुक्कुट आहार तैयार करने की सबसे सरल विधि है इस विधि से कुक्कुट पालक स्वयं गणना करके या कैल्कुलेटर की सहायता से कम मूल्य का सस्ता आहार सूत्र तैयार कर सकता है। आहार सूत्र में परिवर्तन करना जरूरी होता है। क्योंकि समय–समय पर खाद्य पदार्थो की उपलब्धता, मूल्य, संघटन व मुर्गियों की उत्पादन क्षमता बदलती रहती है। सर्वप्रथम यह निश्चित करते है कि कौन–कौन से खाद्य पदार्थ मिलाकर आहार बनाना है तत्पश्चात आहार में वांछित पोषक तत्वों की मात्रा के अनुसार सर्वप्रथम प्रोटीन तथा ऊर्जा को निर्धारित करते हैं। उसके बाद कैल्शियम, फास्फोरस, नमक, सूक्ष्म खनिज मिश्रण, विटामिन मिश्रण तथा दवा की मात्रा को एक–एक कर निर्धारित करते हैं। सम्पूर्ण आहार की मात्रा 100 किलो या 1000 किलो पर निर्धारित करते हैं।

संतुलित आहार तैयार करने की विधि

सर्वप्रथम आहार सूत्र के अनुसार मिलाये जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थो का वजन कर पीसने वाली मशीन (ग्राइन्डर) में पीसते हैं। पीसे हुए खाद्य पदार्थो की मोटाई मुर्गियों को दिये जाने वाले आहार पर निर्भर करता है जैसे–प्रारम्भिक आहार (चिक स्टार्टर) तैयार करते हैं तो पीसा हुआ खाद्य पदार्थ बारीक होना चाहिए अन्यथा छोटे बच्चे इन्हे अच्छी तरह चुगँ नहीं सकते। बड़ी मुर्गियों के लिये पिसा हुआ खाद्य पदार्थ थोड़ा मोटा होना चाहिए ताकि मुर्गियाँ आराम से चुगँ सकें ऐसा करने पर आहार में ज्यादा धूलपन भी नही आता है।

खनिज मिश्रण एवं विटामिन मिश्रण तैयार करना

सूक्ष्म तत्व जैसे खनिज पदार्थ प्री–मिश्रण एवं विटामिन प्री–मिश्रण दोनो अलग–अलग तैयार करना चाहिए। ये मिश्रण बनाने के लिए सभी सूक्ष्म खनिज पदार्थो एवं विटामिनों कों अलग–अलग माप की हुई मात्रा आहार सूत्र के अनुसार एक किलो पिसी मक्का (जो कि तुले हुए पदार्थो में से ही हो) लेकर अच्छी तरह मिला लेते है बाद मे थोड़ा अधिक मक्का तुले हुए खाद्य पदार्थो में से ही लेकर अच्छी तरह मिलाते हैं यह मिश्रण दोनो के लिए अलग–अलग लगभग 5–6 किलो तक (100 किलो आहार के लिए) हो जाना चाहिए। सभी माप की हुई सामग्री एक–एक कर मिश्रण मशीन मे डालकर लगभग 6–8 मिनट तक मिलाते हैं ताकि सम्पूर्ण आहार अच्छी तरह से मिल जाये तथा उसमें मौजूद सभी पोषक तत्व आहार में सामान रूप से प्राप्त हों। जिन कुक्कुट पालकों के पास मिलाने वाला (मिश्रण यन्त्र) नहीं है। वे आहार के सभी खाद्य पदार्थों को साफ–सुथरे फर्श पर रखकर लोहे के बेल्चे से या हाथ से भी अच्छी तरह मिलाकर आहार तैयार कर सकते है। विटामिन मिश्रण मे विटामिन–ए, बी2, डी3 तथा विटामिन के 20 ग्राम व विटामिन बी– काम्प्लैक्स 10 ग्राम प्रति कुन्टल की दर से मिलाते हैं। इसके अतिरिक्त 30 से 50 ग्राम कोमिन प्रति कुन्टल की दर से मिलाते है।

आहार गुणवत्ता की जाँच

- आहार की गुणवत्ता को देख कर परखा जा सकता है आहार देखने में ताजा व नमी की मात्रा बहुत कम होनी चाहिए।
- आहार की गुणवत्ता मुर्गियों की आहार दक्षता एवं आहार का प्रयोगशाला मे रासायनिक परीक्षण करके पता कर सकते हैं।
- ब्रायलर पालन में उनकी खपत तथा शरीर

वृद्धि तथा लेयर मुर्गियों मे दिये गये अण्डों की संख्या तथा वजन का रिकार्ड रखकर भी आहार की गुणवत्ता को परख सकतें हैं।

- यदि ब्रायलर मुर्गियों मे आहार खपत प्रति कि0ग्रा0 शरीर वृद्धि पर 1.6 से 2.0 कि0ग्रा0 है तो यह समझना चाहिए कि आहार अच्छी गुणवत्ता का है। इसी प्रकार लेयर मुर्गियों मे आहार खपत 110 ग्रा0/मुर्गी या 130 ग्रा0/अण्डा या 1.6 कि0ग्रा0/दर्जन अण्डा हो तो आहार अच्छी गुणवत्ता का है।

संतुलित आहार सम्बन्धित ध्यान देने योग्य बातें

- 15 दिन से अधिक का आहार न बनाकर रखें इससे गुणवत्ता में कमी आ सकती है।
- आहार के विभिन्न अवयवों को अच्छी तरह मिलाना चाहिए ताकि पूरे आहार में सामान रूप से अच्छी तरह मिल जायें।
- आहार दरदरा होना चाहिए ताकि मुर्गियों को चुँगने में आसानी हो।
- विभिन्न उम्र की मुर्गियों का आहार उनकी पोषक तत्वों की आवश्यकता के अनुसार बनाये जैसे ब्रायलर स्टार्टर, ब्रायलर फिनिशर, चिक स्टार्टर, चिक ग्रोवर तथा लेयर आहार इत्यादि।
- आहार का सही रूप से भण्डारण करें तथा नमी लगने से बचायें।
- पहले दिन चूजों को आहार कागज पर बिछाकर देना चाहिए तत्पश्चात दूसरे दिन से आहार पात्रों का प्रयोग करना चाहिए।
- आहार पात्र प्रारम्भिक दिनों मे पूरा भरा हो ताकि बच्चे दाना आराम से खा सकें। तत्पश्चात धीरे–धीरे दाने की मात्रा आहार पात्र में कम करते जाना चाहिए तथा एक सप्ताह पश्चात् आहार पात्र को आधे भाग तक ही भरना चाहिए ताकि आहार की बर्बादी से बचा जाये।
- सभी पक्षियों को आहार पात्र पर भरपूर स्थान मिलना चाहिए। अन्यथा कमजोर चूजों को दूसरे चूजें आहार नही खाने देंगे व भूख से मर भी सकते हैं।
- आहार पात्र की ऊँचाई मुर्गियों की उम्र के हिसाब से बढ़ाते रहना चाहिए। ताकि मुर्गियाँ आराम से दाना खा सकें।
- पानी व दाने के बर्तन को नियमित साफ करना चाहिए।
- आहार पात्रों व जल पात्रों में ज्यादा दूरी न हों।
- प्रतिदिन मुर्गियों के आहार खपत का हिसाब रखें। साथ ही साथ उनके दिये हुए अण्डों का भी हिसाब रखें।
- प्रकाश स्त्रोतों (बल्ब) को आहार पात्रों के ऊपर लगायें क्योंकि मुर्गियाँ रोशनी मे आहार ग्रहण करती हैं।
- अपना आहार सूत्र न बना पाने की स्थिति में किसान मुर्गी दाना बनाने के लिये बाजार में उपलब्ध प्रोटीन खनिज पदार्थ एवं विटामिन के सांद्रण खरीद कर, सांद्रण के अनुरूप ऊर्जा स्त्रोत के मिश्रण जैसे पीली मक्का, ज्वार, बाजरा, टूटे चावल इत्यादि के साथ मिलाकर मुर्गी का सस्ता आहार तैयार कर सकते हैं इसके अतिरिक्त बाजार में विभिन्न गुणवत्ता के बैलेन्सर जैसे 10%, 15%, 20%, 35% इत्यादि सामर्थ के बैंलेंसर भी उपलब्ध होते है जिसे खरीद कर बैलेंसर के अनुरूप ऊर्जा स्त्रोत जैसे पीली मक्का, ज्वार, बाजरा, टूटे चावल इत्यादि के साथ मिलाकर सस्ता मुर्गी अहार बनाया जा सकता है जैसे 35% बैलन्सर मे लगभग 60% मक्का या कोई अन्य ऊर्जा श्रोत मिलाकर सस्ता कुक्कुट आहार बनाया जा सकता है।

अपनी छोटी–छोटी बाधाओं को पार करना चाहिए,
क्योंकि इंसान पहाड़ से नही छोटे–छोटे पत्थरों से
ठोकर खाता है।
–अरस्तू

ग्रामीण कुक्कुट पालन के लिये सस्ता आहार सूत्र

खाद्य पदार्थ	छोटे चूजों का आहार (0–8 सप्ताह) कि०ग्रा०		पठोर मुर्गियों का आहार (9–20 सप्ताह) कि०ग्रा०		लेयर मुर्गियों का आहार (20 सप्ताह से ऊपर) कि०ग्रा०	
	1	2	1	2	1	2
पीली मक्का	51.5	–	54.5	–	54.0	–
सफेद ज्वार	–	52.6	–	55.0	–	54.5
चावल घूटा	16.0	13.0	29.5	28.0	15.5	15.0
तेल रहित सोयावीन मील	16.0	20.0	7.0	8.0	12.0	12.0
चावल बेस्ड डी०डी०जी०एस०	7.0	–	–	–	5.0	–
सरसों की खल	5.0	5.0	5.0	5.0	5.0	5.0
सूरज मुखी की खल	–	5.0	–	–	–	5.0
चूना पत्थर पाउडर	1.4	1.3	1.3	1.3	1.5	1.5
मार्बल चिप्स	–	–	–	–	2.0	2.0
सिप्पी का चूरा	–	–	–	–	2.3	2.3
दिकाल्चियम फॉस्फेट	1.0	1.0	1.0	1.0	1.0	1.0
सादा नमक	0.3	0.3	0.3	0.3	0.3	0.3
लयसीन	0.6	0.5	0.5	0.3	0.3	0.3
ड0एल0 मेथिओनिने	0.2	0.3	0.01	0.1	0.1	0.1
खनिज पदार्थ प्रीमिश्रण	0.5	0.5	0.5	0.5	0.5	0.5
विटामिन प्रीमिश्रण	0.5	0.5	0.5	0.5	0.5	0.5
कुल योग	100.0	100.0	100.0	100.00	100.0	100.0

4) स्वास्थ्य एवं रोग नियंत्रण

कुक्कुट बीमारियों के प्रकोप से भारी मृत्यु दर पारिवारिक मुर्गी पालन के लिए एक बड़ी समस्या है। अतः रोगों से बचाव के लिए उचित समय पर विभिन्न मुर्गी रोगो का टीकाकरण आवश्यक है। टीकाकरण करवाने के लिए यह जरूरी है कि मुर्गी पालक एक साथ बड़ी संख्या मे चूजें निकलवायें तथा एक मुश्त टीका लगवायें। अतः आस–पास के गाँवों के मुर्गी पालक आपस में विचार–विमर्श करके एक सप्ताह के अन्दर ही अण्डों को मुर्गी द्वारा सेने के लिये बैठायें जिससे चूजें समूह में निकलें एवं टीकाकरण आसानी से सम्भव हो पाये। शुरूआत मे टीका एक दिन से एक सप्ताह की उम्र के चूजों को एक साथ दिया जा सकता है। उचित समय पर टीकाकरण के लिए ब्लॉक के पशु–चिकित्सक को सूचित करके इसको और भी सफल बनाया जा सकता है।

औषधीय देखभाल

आयु	दवाएँ/प्रोबायोटिक्स/विकास प्रवर्तक
दिन 1–3	एंटीबायोटिक कोर्स (1 ग्राम/लीटर) वेंडोक्स/कोलिक्स/एन्रोलोक्सासिन: 1 ग्राम प्रति लीटर पानी, वाटर सैनिटाइजर, इलेक्ट्रोलाइट पाउडर (1 ग्राम/लीटर), ग्लूकोज पाउडर (1ग्राम/लीटर) गर्म पानी
दिन 4–7	लिवर टॉनिक (1मि0ली0/लीटर)
दिन8–14	विटामिन पूरक (विमराल 1मि0ली0/लीटर) इमोलाइट (1 मि0ली0/लीटर)

टीकाकरण अनुसूची
घर के पिछवाड़े कुक्कुट (पालकों) के लिए विशिष्ट टीकाकरण कैलेंडर

आयु	वैक्सीन	मार्ग का नाम	खुराक/पक्षी
0–1 दिन	मैरेक्सरोग का टीकाकरण (आमतौर पर चूजे की डिलीवरी के समय हैंचरी में किया जाता है)	गर्दन क्षेत्र में एस/सी	0.2 मि0ली0
5–7 दिन	रानी खेत रोग का टीका (डी–58/लसोटा/बी1/एफ)	(इंट्रा ओकुलर/इंट्रा नेजल)	एक–एक बूंद
28 दिन	रानी खेत रोग का टीका (डी–58/लसोटा/बी1/एफ)	(इंट्रा ओकुलर/इंट्रा नेजल)	एक–एक बूंद
6–8सप्ताह	फाउल पॉक्स वैक्सीन फाउल टीका हर 2–3 महीने के अंतराल पर दोहराया जाना चाहिए।	विंगवेब	एक चुभन

5) तकनीकी ज्ञान

ग्रामीण क्षेत्रों में मुर्गियों से बार–बार साल भर बच्चे प्राप्त करते रहने से उनमें कुड़क होने आदत पड़ जाती है। अतः यह आवश्यक है कि मुर्गी द्वारा दिये गये अण्डों को प्रतिदिन उनके दड़बों से हटा दिये जायें जिससे मुर्गी द्वारा अण्डा न देख पाने के कारण कुड़क होने की आदत कम हो जाती है एवं अण्डा उत्पादन मे वृद्वि होती हैं। इस विधि के अपनाने से केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में शुद्ध देशी मुर्गी से भी 130–150 अण्डों के उत्पादन सम्भव हो पाया है। जोकि अण्डे न हटाने की स्थिति मे केवल 50–75 ही रह जाता है। ऐसा इसलिये क्योकि देशी मुर्गी प्रायः 12–15 अण्डे देने के बाद अण्डे सेने तथा बच्चों को पालने के लिए कुड़क हो जाती है। यह क्रम साल में 4 से 5 बार चलता है एवं देशी मुर्गियों का वार्षिक उत्पादन केवल 50–75 अण्डों तक रह जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रायः पहली बार में खरीदे गए जोड़े से ही साल दर साल चूजे निकाले जाते है। इस तरह कई वंशावलियों तक घर मे निकाले गए चूजों में इन बीडिंगया अंतः–प्रजनन का विकार उत्पन्न होता हैं। इस दुष्प्रभाव के कारण अण्डे की संख्या,निशेचन तथा प्रस्फुटन मे भारी कमी आती है एवं चूजों की मृत्यु दर में भी वृद्वि होती है। अतः यह आवश्यक है कि हर वर्ष नये संकर देशी चूजें किसी अच्छी हैचरी से लिए जायें। अगर घर में चूजें निकलवाना जरूरी हो तो साल में कम से कम एक बार पड़ोसी गाँव से समान नस्ल का मुर्गा बदलते रहना चाहिए। इससे इन ब्रीडिंग के अवसाद से बचने मे मद्द मिलती है तथा अण्डा उत्पादन एवं प्रजनन क्षमता में वृद्वि के साथ–साथ चूजों के मृत्यु दर में भी कमी आती है।

6) उन्नत देशी मुर्गियों की आर्थिक विश्लेषण

01. वयस्क मादा की संख्या	10
02. खरीदे गये एक दिवसीय चूजों की संख्या	20
03. कुल आवासीय खर्चे	रू 600/–
04. उपकरण पर खर्चे रू/20/– प्रति पक्षी	रू 200/–
05. विविध खर्चे	रू 200/–
06. कुल आवासीय उपकरण एवं विविध खर्चे	रू 1000/–
	कुल रख रखाव
(250 कि0ग्रा0 दाने दवाई इत्यादि) के खर्चे लगभग	रू 7500/–
07. मृत्यु दर	10–
08. अण्डों का विपणन (160×9×10)	रू 14400/–
09. 08 महीने बाद मुर्गियों का विपणन (9×500)	रू 4500/–
10. 72 सप्ताह के बाद मुर्गियों का विपणन (9×400)	रू 3600/–
11. साकल आय (ix + x + xi)	रू 22500/–
12. शुद्ध आय (प्रति वर्ष)	रू 14000/–
13. शुद्ध आय (प्रति माह)	रू 1200/–
14. शुद्ध आय (प्रति मुर्गी)	रू 778/–
	लगभग रू 800/–

एकीकृत कुक्कुट पालन

एकीकृत कुक्कुट पालन के अन्तगर्तमुर्गी पालन के साथ–साथ पशुपालन, कृषि प्रणाली एवं मछली पालन करते हैं। इस पद्धति के द्वारा कम व्यय करके अधिक आय प्राप्त की जाती है। इसका सबसे बड़ा फायदा यह होता है कि किसान भाई पूरे साल कमाई करते हैं साथ ही साथ यदि एक व्यवसाय में नुकसान होता है तो इसकी भरपाई दूसरी तरफ की जा सकती है। जिससे किसान भाई बड़े नुकसान से बच जातें हैं। मुर्गी पालन एवं मछली पालन के साथ बकरी पालन के एकीकरण से किसान भाई अधिक से अधिक लाभ कमा सकते हैं इसके लिए मछलियों के तालाब के पास ही बकरियों के रहने का आवास वनाया जाता है। जिससे कि बकरियों से प्राप्त गोबर तालाब में बहाया जाता है एंव बकरियों से बचे चारे को तालाब में डाला जाता है जिससे की मछलियों को भी भोजन मिल जाता है और इसके लिए बाहर से कोई अन्य व्यय की आवश्यकता नहीं होती हैं।

कुक्कुट पालन को मछली पालन और पशुधन के साथ एकीकरण के बाद पूरक आहार पर खर्च काफी कम हो जाता है। यह विधि जगह की आवश्यकता को भी कम करती है। यह अधिक आय प्राप्त करने का एक नया आकर्षक और अनूठा तरीका है। जिससे कम समय एवं खर्चों से अधिक लाभ प्राप्त कर सकतें हैं

बैकयार्ड कुक्कुट केचुआ फार्मिंग

सहजन एवं जैविक कचरा एकीकरण (गिरि ग्राम तकनीकी पार्क) भारत का असंगठित कुक्कुट क्षेत्र मुख्यतः गरीब किसानों के अधीन रहा है, जिससे वेक मनिवेशत था न्यूनतम आवासीय सुविधा के साथ कम उत्पादन वाली प्रजातियों अथवा देशी मुर्गी की प्रजातियों को अर्द्धसघन अथवा मुक्तांग नपदिति से मुर्गी पालन करते हैं। वर्तमान परिदृश्य में मौलिक संसाधनों जैसे भूमि, खाद्यान्नों तथा पानी की कमी होने के साथ–साथ बीमारियों को बड़े पैमाने पर कुक्कुट उत्पादन से उत्पन्न होने वाले प्रदूषण एवं रोगाणुरोधी प्रतिरोधकता, कल्याण के मुद्दों, उष्णकटिबंधीय तनाव आदि व्यवसायिक कुक्कुलट क्षेत्र के सामने गम्भीर चुनौतियाँ हैं। दूसरी ओर, भारतीय स्थिति के अन्तर्गत असंगठित कुक्कुट क्षेत्र में इन में से अधिकाँश समस्याओं से उबरने के लिए अनेक अवसर हैं तथा कुल मिलाकर कुक्कुट उत्पादन को बढ़ाने के लिये एक महत्वपूर्ण विकल्प है। इसके साथ ही अन्य प्रौद्योगिकियों जैसे सहजन, केंचुआ उत्पादन (वर्मीकल्चर), भुनगा उत्पादन (मैगोटकल्चर), औषधीय एवं एरो मेटिक पौधों, सब्जी, पुष्प उत्पादन आदि को जोड़ कर आय अर्जन के साथ–साथ शिक्षित एवं बेरोजगार युवाओं को महत्वपूर्ण व्यवसाय प्रदान किया जा सकता है। इन तथ्यों को ध्यान मे रखते हुए, वर्तमान मॉडल मे मुक्तांगन पद्धति से कुक्कुट उत्पादन के लिये एक एकड़ भूमि मे (गिरिग्राम तकनीकी पार्क) की स्थापना की गई है, जिसमे सहजन के पौधों को रोपित करके अन्य पदार्थो जैसे मौसमी चारा, केंचुआ उत्पादन (वर्मीकल्चर), भुगना उत्पादन (मैगोटकल्चर), सब्जी, पुष्प उत्पादन आदि का प्रयोग करते हुए इस इकाई के माध्यम से और अधिक आय अर्जन के लिए बैकयार्ड कुक्कुट पालन किया जा रहा है।

कुक्कुट उत्पादन में मूल्यवर्धन के लाभ

यद्यपि कुक्कुट मांस एवं अण्डों के पौष्णिक गुणवत्ता को पोषण सम्बन्धी बदलाव कर बढ़ाया जा सकता है। इसके साथ–साथ कुक्कुट उत्पादों का प्रसंस्करण करने से भी कुक्कुट मांस व अण्डें आधारित उत्पाद तैयार किये जा सकते हैं, जिनमें बाजार की मांग के अनुसार एवं स्वास्थ्य वर्धन में सहायक घटकों को मिलाकर पोष्टिक कुक्कुट उत्पादन तैयार किये जा सकते है।

कुक्कुट मांस आधारित मूल्यवर्धित उत्पाद

कुक्कुट मांस को प्रसंस्कृत कर नये उत्पाद बनाकर बाजार मे अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है। इन उत्पादों में चिकिन मीट बाईट्स, कुक्कुट मीट फिंगरचिप्स, कुक्कुट मीट वैफर्स, चिकन मीट कबाब, चिकिन टिक्का, चिकिन मीट आचार आदि प्रमुख हैं।

चिकिन मीट बाईट्स एवं सोसेज

चिकिन मीट बाईट्स में कई तरह के फलों, पौधों और जड़ी बूटियों का अर्क, रस, मोरिंगा पत्तियाँ मिलाकर इनको स्वास्थ्यवर्धक बनाया गया है। इनका भण्डारण 40 से0 तापमान पर तीन सप्ताह तक किया जा सकता है। इसके साथ–साथ चिकिन सोसेज बनाने की विधि भी विकसित की गई है, जिसमें कुक्कुट मांस को लेक्टो बेसिलस नामक बैक्टेरिया से फरमेन्टेसन किया गया है तथा साथ मे ओट व बारले को मालटिड कर इनके आंटे को मांस मे मिलाकर चिकिन सोसेज की गुणवत्ता व पौष्टिकता बढ़ाई गई है। यह उत्पाद रेफ्रिजरेशन तापमान पर 10 से 12 दिन तक भण्डारण किया जा सकता है।

कुक्कुट फिंगर चिप्स व वैफर्स

कुक्कुट फिंगर चिप्स व वैफर्स को विशेष प्रकार के मसाले मिलाकर बनाया जाता है तथा इनका भण्डारण कमरे के तापमान पर 60 दिन तक किया जा सकता है। इनमे फाईबर व एन्टी ऑक्सीडेन्ट की मात्रा अधिक है तथा वसा की मात्रा कम होती है। ऐसे उत्पादों को मूल्यवर्धिक उत्पादों को ग्रामीण स्तर पर आसानी से बनाया जा सकता है। कुक्कुट फिंगर चिप्स व वैफर्स के अन्दर नमी की मात्रा कम होने के कारण इनका भण्डारण सामान्य तापमान पर भी किया जा सकता है तथा यह उत्पाद दूर–दराज के क्षेत्रों में आसानी से बिना गुणवत्ता खराब हुए पहुँचाये जा सकते है।

कुक्कुट अण्डा आधारित मूल्यवर्धित उत्पाद

इस संस्थान में अनेक प्रकार का अण्डा आधारित कुक्कुट उत्पाद भी विकसित किये गये हैं। संस्थान द्वारा विकसित विधियों से अण्डों का प्रसंस्करण घरेलू संसाधनों एवं वातावरण में किया जा सकता है। संस्थान में विकसित एवं प्रसंस्कृत अण्डा उत्पादों में बटेर के अण्डे का अचार, मल्टीग्रेन ऐग बिस्कुट, कम शुगर के साथ ऐग बिस्कुट, ऐग रबड़ी मलाई, ऐग कुल्फी आदि प्रमुख है। इसके साथ–साथ इमू ऐग नूडल्स बनाने की विधि भी संस्थान में विकसित की गयी है, जिसमें आटा, नमक और विशेष मसालों का इस्तेमाल किया जाता है। ऐग नूडल्स को लगभग छः महीने तक कमरे के तापमान पर सुरक्षित रखा जा सकता है।

मल्टी ग्रेन ऐग बिस्कुट

अण्डा बिस्कुट बनाने के लिए एक प्रसंस्करण प्रोद्योगिकी का मानकीकरण किया गया है जिसमें सामग्री जैसे साबुत अण्डा, व विभिन्न प्रकार के फ्लोर और अन्य सामग्री शामिल है। यह प्रक्रिया इतनी आसान और सरल है कि इसमें किसी भी परिष्कृत उपकरण को शामिल नही किया गया है और इसे ग्रामीण क्षेत्रों में भी अपनाया जा सकता है। यह अण्डा उत्पाद कम लागत की भागीदारी के साथ पोषक तत्वों के विविध स्त्रोत प्रदान कर सकतें है। यह उत्पाद विशेश रूप से बाढ़, ड्राट और यहाँ तक की अन्य जलवायु आपदाओं जैसी स्थितियों में पोषण और स्वस्थ्य भोजन का स्त्रोत हो सकता है क्योंकि यह परिवहन करने में आसान है इसके अलावा यह उद्यमियों के लिए आय और रोजगार सृजन के अधिक रास्ते भी खोल सकता है।

कम शुगर के ऐग बिस्किट

अण्डे को आटे के साथ मिलाकर यह उत्पाद तैयार किया गया है। प्रौद्योगिकी सरल है और किसी भी परिष्कृत उपकरण की आवश्यकता के बिना आसानी से अपनाई जा सकती है। प्रसंस्करण समय बहुत कम है इसलिये कम समय की भागीदारी के साथ बड़ी मात्रा मे संसाधित किया जा सकता है। उपभोक्ताओं के बीच अण्डे की खपत को बढ़ावा देने के साथ–साथ मधुमेह रोगी को पौष्टिक उत्पाद प्रदान करने के लिए कम चीनी सामग्री वाले अण्डा बिस्कुट बनाने के लिए एक सरल तकनीक का मानकीकरण किया गया है। अंतिम उत्पाद प्रोटीन और फाइबर से भरपूर है।

ऐग रबड़ी मलाई

इस तकनीक में एक पौष्टिक उत्पाद तैयार करने के लिए अण्ड़े और दूध के सम्मिश्रण

शामिल है। अण्ड़े प्रोटीन का समृद्ध स्त्रोत हैं तथा खनिज और विटामिनों का भी अच्छा स्त्रोत है। यह एक प्रोटीन भरपूर उत्पाद है जिसका हर आयु वर्ग के व्यक्ति सेवन कर सकते हैं। भारत में वर्ष के कुछ महीनों मे अण्डों की खपत कम हो जाती है ऐसे मे इस प्रकार का उत्पाद बनाकर कुक्कुट पालक अपनी आमदनी बढ़ा सकते है। यह उत्पाद दूध व अण्डे के घोल में जमा व प्रक्रिया द्वारा बनाया गया है। यह उत्पाद अण्ड़े के सेवन के वैकल्पिक तरीके प्रदान करने के अलावा आय सृजन के नए रास्ते के साथ पौष्टिक और प्रोटीन युक्त अण्ड़ा उत्पाद तैयार करने में मद्द करता है।

ऐग कुल्फी

अण्ड़े की कुल्फी मूल रूप से एक मिठाई है जो दूध के साथ अण्ड़े के निर्माण से बनाई जाती है। यह मिठाई अधिक कार्यात्मक विशेषताओं और पोशण संबंधी विशेषताओं से समृद्ध है। कम लागत के निवेश के साथ इस उत्पाद के लिए प्रक्रिया समय कम लगता है। प्राप्त अन्तिम उत्पाद में स्थिरता में दानेदार बनाने की अनूठी बनावट है, जमें हुए भण्डारण में लम्बे समय तक शेल्फ जीवन और संवेदी पैनल द्वारा अच्छी तरह से स्वीकार किया गया है। इस प्रकार यह उत्पाद, अण्ड़े खाने के लिए वैकल्पिक व्यंजन उपलब्ध कराने के अलावा, आय सृजन के लिए उद्यमियों के लिए नये रास्ते खेलता है।

बटेर के अण्डे का आचार

अण्डे को लम्बे समय तक स्टोर करने के उद्देश्य से, विशेष रूप ग्रामीण क्षेत्रों में बिना प्रशीतन सुविधा का उपयोग किये, सिरका समाधान के साथ बटेर के अण्डे का आचार बनाने के लिए प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी का मानकीकरण किया गया है। प्रक्रिया में शामिल, उबले हुए अण्डे को बाहरी सामग्री के साथ मिलाकर कमरे के तापमान पर ठंडा किया जाता है और परिपक्वता और बाद के भण्डारण के लिए 27 डिग्री सेल्सियस पर रखा जाता है। कमरे तापमान पर 03 महीने तक सुरक्षित पाया गया है। प्रौद्योगिकी आसान है और बहुत कम निवेश के साथ और महंगे उपकरण के बिना आय सृजन के लिए अपनाया जा सकता है।

संस्थान द्वारा प्रदत्त सेवाएं

- संतुलित तथा कम लागत के आहार तैयार करने के लिए विन्डोज आधारित मेकफीड पोल्ट्री सॉफ्टवेयर द्वारा आहार सूत्र बनाना।
- कुक्कुट आहार की गुणवत्ता नियंत्रण के लिए आहार संघटकों तथा मिश्रित आहार में अनुमानित मूल तत्वों, खनिजों, मिलावटों तथा विषैले तत्वों का विश्लेषण करना।
- कुक्कुट पालन इकाईयों तथा आहार उत्पादन संयत्रों को स्थापित करने के लिए विभिन्न सरकारी योजनाओं के अन्तर्गत वित्तीय संस्थायों से ऋण प्राप्त करने के लिए बैंक को प्रस्तुत की जाने वाली परियोजना रिपोर्ट (डी०पी०आर०) को तैयार करना।
- स्नातकोत्तर शिक्षण व शोध (कुक्कुट पालन में राष्ट्रीय डिप्लोमा, कुक्कुट विज्ञान मे एम.वी.एस.सी. तथा पी.एच.डी.) करना।
- कुक्कुट पालकों/उधमियों के लिए कुक्कुट उत्पादन में अल्प–अवधि प्रशिक्षण प्रदान करना।
- जापानी बटेर, बत्तख, टर्की गिनीफाउल, देशी लेयर तथा ब्रायलर उत्पादन प्रबन्धन पर विशेष प्रशिक्षण प्रदान करना। इसमे पोषण, आवास, हैचरी तथा स्वास्थ्य की देखरेख आदि सम्मिलित है।
- संविदा पर अनुसंधान के लिए परामर्शी परियोजना पर कार्य करना।
- मूल्य वर्धित कुक्कुट उत्पादों के प्रसंस्करण के लिए प्रौद्योगिकियाँ प्रदान करना।

पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०1– मुर्गियों की देखभाल कैसे करें ?

उ०:– अक्सर मुर्गी पालकों के मन यह सबाल जरूर उठता है कि मुर्गियों की सही तरह से देखभाल कैसे कि जाये तो इसके लिए निम्न बिन्दुओं पर नजर डालतें हैं

1) मुर्गियों के रहने वाले स्थान का तापमान लगभग 23–25 सेंटीग्रेट होना चाहिए। सर्दियों के लिए उचित तापमान बनाये

रखने के लिए हमें लकड़ी के बुरादे या धान की भूसी का उपयोग करना चाहिए क्योंकि तापमान कम होने पर मुर्गियां एक–दूसरे के ऊपर चढ़तीं हैं जिससे दबने के कारण उनकी मृत्यु हो सकती है।

2) सर्दियों में तापमान को समान करने के लिए उनके आवास में 60–100 वाट का तथा गर्मियों में प्रकाश के लिए 40 वाट का बल्ब जलाकर रखना चाहिए।

3) गर्मियों में मुर्गियों का दड़बा हवादार होना चाहिए तथा अधिक गर्मी होने पर पंखें की व्यवस्था करनी चाहिए।

4) मुर्गियों के आते ही साफ व ताजा पानी पीने को देना चाहिए।

5) वयस्क मुर्गियों को लगभग 40 ग्राम दाना प्रतिदिन देना चाहिए। दाने को रात्रि में दें तथा दिन के समय मुर्गियों को चुगने के लिए छोड़ देना चाहिए।

6) मुर्गियों को 100 ग्राम गुड़ व सिरका, 1 लीटर हल्के गर्म पानी में घोलकर सप्ताह में दो बार देना चाहिए।

7) मुर्गियों में किसी भी प्रकार की शारीरिक शिथिलता दिखाई देने पर या मुर्गियों के खाना पीना छोड़ने पर तुरंन्त पशु चिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिए तथा उनकी सलाह के अनुसार उनका उपचार कराना चाहिए।

प्र०2–मुर्गियों को असानी से वनाया जाने वाला आहार कैसे बनायें ?

उ0:– यह आहार बनाने का तरीका वैज्ञानिक दृष्टि से तो पूर्ण नहीं है लेकिन इसे खिलाकर उत्पादन में सुधार कर सकते हैं

सामग्री	मात्रा
मक्का / चावल / गेहूँ / ज्वार / बाजरा	1/3
खली	1/3
गेहूँ की भूसी / चावल की पॉलिश	1/3
नमक	0.5%

प्र०3 देशी नस्लें कितने समय के बाद अण्ड़े देने लग जातीं हैं?

उ0 देशी नस्लें लगभग 22–26 सप्ताह की आयु के बाद अण्ड़े देने लग जातीं हैं।

प्र०4 देशी नस्लों को कितने समय बाद (बाजार में मांस के लिए) वेचने के लिए तैयार हो जाता है ?

उ० हम लोग 16 से 20 सप्ताह के बाद देशी नस्लों को बाजार में मांस के लिए बेंच सकते हैं।

प्र०5 क्या देशी पक्षियों के लिए टीकाकरण आवश्यक है ?

उ० हाँ देशी पक्षियों को समय–समय पर टीकाकरण अवश्य करा लेना चाहिए। जो निम्न प्रकार है –

प्र०6 हम देशी कुक्कुट को कहां और कैसे बेच (मार्केटिंग) सकते हैं?

उ० हमारे किसान भाई तैयार कुक्कुट सीधे फार्म से बेंच सकते हैं या किसी पास के रेस्तरां, ढाबा या होटलों में भी बेचा जा सकता हैं।

आयु	वैक्सीन	मार्ग का नाम	खुराक / पक्षी
0–1 दिन	मेरेक्स रोग का टीकाकरण (चूजे की डिलीवरी के समय हैचरी (अण्ड़े सेने के स्थान) में किया जाता है)	गर्दन में त्वचा के नीचे	0.2 मि0ली0
5–7 दिन	रानीखेत रोग का टीका (डी–56/ लसोटा/बी1/एफ) थर्मोस्टेबल टीकों को प्राथमिकता दें।	आंख में /नाक में	एक–एक बूंद
28 दिन	रानीखेत रोग का टीका (डी–56/ लसोटा/बी1/एफ) थर्मोस्टेबल टीकों को प्राथमिकता दें।	आंख में /नाक में	एक–एक बूंद
6 वॉ सप्ताह	कुक्कुट चेचक टीका	पंखों में या मांसपेशी में	0.1–0.2 मिली
8–10वॉं सप्ताह	रानीखेत रोग टीका (आर$_2$बी)	त्वचा के नीचे या मांसपेशी में	0.5 मिली

प्र०7 किन नस्लों के साथ बैकयार्ड मुर्गी पालन करना चाहिए?

उ० बैकयार्ड पोल्ट्री फार्मिंग में असील, कड़कनाथ, ग्रामप्रिया, कैरी श्यामा, कैरी देवेन्द्र, कैरी हितकारी, कैरी उपकारी, जैसी नस्लों का पालन करना चाहिए।

प्र०8 हम मुर्गियों के आवास को किटाणुरहित कैसे कर सकते हैं ?

उ० मुर्गियों के आवास को कीटाणुरहित करने के लिए फॉर्मेलिन स्प्रे–500 मि.ली. (फॉर्मेलिन + 10 लीटर पानी) 1000 वर्ग फिट के लिए। फर्श और छत को चूने और पानी का उपयोग करके पुताई करें।

प्र०9 कैसे पहचाना जा सकता है कि मुर्गी अण्ड़ा सेने के लिए तैयार है ?

उ० अण्ड़ा सेने वालीं मुर्गियाँ बहुत आक्रामक, बेचैन, फैले हुए पंख वालीं होगीं और मुर्गियों का अण्ड़ों का ढूँढने व उन पर बैठने का व्यवहार भी देखा गया है।

प्र०10 देशी नस्लों के पक्षी कितने समय में अपना वजन 1.5 किलो ग्राम कर लेते हैं ?

उ० देशी पक्षी 18 से 20 सप्ताह में अपना बजन 1.5 किलोग्राम के आस–पास कर लेते हैं।

ऊँटनी का दूध डेयरी उद्योग के लिए वरदान

सोनम कुमारी[1], जुई लोध[1] एवं योगेंद्र सिंह जादौन[2]

[1]डेयरी प्रौद्योगिकी विभाग, संजय गांधी डेयरी प्रौद्योगिकी संस्थान, पटना (बिहार)

[2]गव्य प्रसार शिक्षा विभाग, संजय गांधी डेयरी प्रौद्योगिकी संस्थान, पटना (बिहार)

परिचय

दूध एक पूर्ण आहार है जिसमें पानी, वसा, कार्बोहाइड्रेट, लैक्टोज, प्रोटीन, खनिज पोषक तत्व और कई उत्प्रेरक शामिल होते हैं। ऊंट शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं जिससे वे उन क्षेत्रों में दूध उत्पादन के लिए एक स्थायी विकल्प बन जाते हैं जहां पारंपरिक डेयरी खेती चुनौतीपूर्ण हो सकती है। कुरान में ऊँट को ईश्वर का आश्चर्य बताया गया है। ऊँट के दूध ने पोषणशुष्क क्षेत्रों में जैसे कि भारत, रूस, और सूडान में बीमारियों के इलाज में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसमें गाय के दूध की तुलना में सभी पोषक तत्व होते हैं और इसमें कैंसररोधी, एंटीडायबिटिक, और एंटीहाइपरटेंसिव जैसे चिकित्सीय गुण भी पाए जाते हैं। ऊँटनी के दूध से बने डेयरी उत्पादों में नए स्वाद और संरचना के साथ विविधता आती है जो उपभोक्ताओं को नए और स्वस्थ विकल्पों की पेशकश करती है।

पोषण का महत्व

तालिका : ऊंटनी के दूध की संरचना

जानवर प्रजाति	पानी	वसा	प्रोटीन	लैक्टोज	राख
ऊँट	83-88%	2.9-5.4%	3.0-3.9%	3.3-5.8%	0.6-1.0%

ऊंटनी के दूध का सेवन विभिन्न स्वास्थ्य लाभों से जुड़ा है। अद्वितीय प्रोटीन और पेप्टाइड्स के कारण प्रतिरक्षा–बढ़ाने वाले गुण और गाय के दूध की तुलना में कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स मधुमेह के प्रबंधन के लिए भी पहचाना जाता है। ऊंटनी के दूध में रोगाणुरोधी एजेंटों की मौजूदगी इसके स्वास्थ्यवर्धक गुणों को और बढ़ा देती है।

आर्थिक अवसर

डेयरी उद्योग में ऊंटनी के दूध को अपनाने से किसानों के लिए नए आर्थिक अवसर पैदा हो सकते हैं। ऊंट अपनी कठोरता और विविध पारिस्थितिक तंत्रों में पनपने की क्षमता के लिए जाने जाते हैं, जिससे चुनौतीपूर्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में किसानों को डेयरी उत्पादन में संलग्न होने की अनुमति मिलती है। इससे ऊंटनी के दूध की खेती में शामिल समुदायों की आय में वृद्धि हो सकती है और आजीविका में सुधार हो सकता है।

डेयरी उत्पादों का विविधीकरण

डेयरी उद्योग में ऊंटनी के दूध को शामिल करने से उत्पाद विविधीकरण को बढ़ावा मिलता है। ऊंटनी के दूध का उपयोग पनीर, दही और आइसक्रीम सहित कई प्रकार के डेयरी उत्पादों के उत्पादन के लिए किया जा सकता है। ऊंटनी के दूध का अनोखा स्वाद और संरचना इन उत्पादों में नवीनता जोड़ती है, जो पारंपरिक डेयरी विकल्पों की तलाश करने वाले उपभोक्ताओं की जरूरतों को पूरा करती है। ऊंटनी के दूध में उच्च तापमान पर खराब गर्मी स्थिरता होती है, जिससे प्रोटीन विकृतीकरण और अवसादन के कारण नसबंदी और अल्ट्रा–उच्च तापमान (यूएचटी) प्रसंस्करण चुनौतीपूर्ण हो जाता है। आमतौर पर, ऊंटनी के दूध को पैकेजिंग के बाद 15 सेकंड के लिए 72 डिग्री सेल्सियस पर पास्चुरीकृत किया जाता है। यूएचटी प्रसंस्करण आम तौर पर अनुपयुक्त है क्योंकि यह प्रोटीन अवसादन का कारण बनता है, हालांकि हल्के यूएचटी उपचार (150 डिग्री

सेल्सियस, 2 सेकंड) प्रशीतन के साथ शेल्फ जीवन को पांच सप्ताह तक बढ़ा सकता है।

गोजातीय दूध के विपरीत, ऊंटनी के दूध का प्लास्मिन एंजाइम अपनी प्रोटियोलिटिक गतिविधि के कारण यूएचटी प्रसंस्करण के लिए अतिरिक्त चुनौतियां पैदा करता है, जिससे उम्र बढ़ने और कड़वाहट हो सकती है। उच्च तापमान पर ऊंटनी के दूध की कम स्थिरता कप्पा–कैसिइन की कमी और β–लैक्टोग्लोबुलिन की अनुपस्थिति के कारण होती है। पीएच को 7.0–7.2 तक बढ़ाने या सोडियम फॉस्फेट जोड़ने से गर्मी स्थिरता में सुधार हो सकता है और अवसादन कम हो सकता है। ऊंटनी के दूध के प्रोटीन को स्थिर करने के लिए फॉस्फेट, हाइड्रोकोलॉइड्स और कप्पा–कैसिइन जैसे एडिटिव्स का पता लगाने के लिए और अधिक शोध की आवश्यकता है।

यूएचटी के विकल्प के रूप में उच्च दबाव उपचार का सुझाव दिया गया है, जिससे कम प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। वर्तमान में, यूएचटी ऊंटनी का दूध दुर्लभ है, पुनर्गठित ऊंटनी के दूध के पाउडर से बने उत्पाद उपलब्ध हैं, जिनकी शेल्फ लाइफ 12 महीने है। ऊंटनी के दूध के लिए पाश्चुरीकरण मानक अलग–अलग होते हैं, 20 सेकंड के लिए 80° सेल्सियस तापमान को अलगाव पैदा किए बिना स्थिरता बढ़ाने के लिए इष्टतम माना जाता है।

पारंपरिक किण्वित ऊंट के दूध के उत्पादों में शुबत, खुरमोग, गैरिस, सुसैक, लेबेन (एलबेन), इतितु, धनान और चल शामिल हैं। केन्या, सोमालिया, सूडान, कजाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान और ईरान जैसे क्षेत्रों में आम ये उत्पाद अपने विस्तारित शेल्फ जीवन, बेहतर स्वाद, उच्च पोषण मूल्य और एंटीऑक्सिडेंट और विरोधी भड़काऊ गुणों जैसे स्वास्थ्य लाभों के लिए मूल्यवान हैं। केन्या और सोमालिया का सुसैक, ऊंटनी के दूध को तीन दिनों तक स्मोक्ड लकड़ी की बाल्टियों में उबालकर बनाया जाता है। सूडान के गैरिस, ऊंट की काठी से बंधे चमड़े के थैले में कच्चे ऊंट के दूध को हिलाना शामिल करते हैं। कजाकिस्तान के शुबात, लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया और यीस्ट दोनों का उपयोग करके कमरे के तापमान पर आठ घंटे तक किण्वन करते हैं। तुर्कमेनिस्तान, कजाकिस्तान और ईरान में उत्पादित चल, कच्चे ऊंट के दूध को किण्वित करके बनाया गया एक चमकदार पेय है। ये उत्पाद ऊंट पालक समुदायों की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और व्यावहारिक जरूरतों को दर्शाते हैं।

गाय के दूध के दही के समान वांछनीय दही की दृढ़ता और स्थिरता के साथ ऊंटनी के दूध का दही बनाना चुनौतीपूर्ण है। ऊँटनी का दूध अनुचित तरीके से जमता है, जिसके परिणामस्वरूप बिखरे हुए गुच्छों के साथ कम दृढ़, नाजुक और विषम दही बन जाता है। इसके परिणामस्वरूप दही कमजोर बनावट और पतली स्थिरता वाला बन जाता है, जिससे इसके स्वाद, रूप–रंग और समग्र स्वीकार्यता पर असर पड़ता है। वाणिज्यिक स्टार्टर कल्चर ऊंटनी के दूध में विकसित हो सकते हैं, लेकिन अम्लीकरण दर गोजातीय दूध की तुलना में कम है। इन कठिनाइयों के बावजूद, ऊंटनी के दूध के दही का सफल उत्पादन बताया गया है।

ऊंटनी के दूध की अनूठी संरचना और कार्यात्मक गुणों के कारण गोजातीय दूध के समान उत्पादन प्रोटोकॉल का उपयोग करना मुश्किल साबित हुआ है। शोधकर्ताओं ने पाया है कि 5ः स्किम मिल्क पाउडर, 1.2ः जिलेटिन, 40 मिलीध्लीटर मेपल स्ट्रॉबेरी सिरप, 1.5 मिली लीटर कैल्शियम क्लोराइड और 6ः दही कल्चर मिलाने के बाद 18 घंटे के लिए 42 डिग्री सेल्सियस पर ऊष्मायन करने से ऊंटनी का दूध तैयार किया जा सकता है। काफी गाढ़ी स्थिरता वाला दही, हालांकि गाय के दूध के दही की तुलना में कम चिपचिपा और दृढ़ होता है, जो पीने के दही जैसा होता है। कमजोर बनावट का

कारण ऊंटनी के दूध में β की कमी, K की कम मात्रा और कैसिइन अनुपात में उच्च मट्ठा प्रोटीन होना है।

ऊंटनी के दूध से पनीर का उत्पादन मुख्य रूप से इसकी खराब स्कंदन क्षमता के कारण महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना करता है। ब्रुलमैन एट अल द्वारा अध्ययन। (2007), रामेट (1987), और फराह और बैचमैन (1987) ने वाणिज्यिक रेनेट का उपयोग करके ऊंट के दूध को जमा करने में आने वाली कठिनाइयों पर प्रकाश डाला, यह देखते हुए कि इसमें दो से तीन गुना अधिक समय लगता है और गाय के दूध की तुलना में चार गुना अधिक रेनेट की आवश्यकता होती है। कम कप्पा कैसिइन सामग्री के साथ ऊंटनी के दूध की अनूठी संरचना, काटने के दौरान कैसिइन नेटवर्क के विनाश की ओर ले जाती है, जिसके परिणामस्वरूप मट्ठा में शुष्क पदार्थ की हानि होती है।

बोवाइन रेनेट अपनी कम कप्पा कैसिइन सांद्रता (ऊंट के दूध में 3% बनाम गाय के दूध में 13%) के कारण ऊंट के दूध के जमाव के लिए अप्रभावी है। ऊंटनी का दूध कैसिइन के वितरण और अमीनो एसिड संरचना में भी भिन्न होता है, इसमें बीटा कैसिइन की मात्रा अधिक होती है लेकिन गाय के दूध की तुलना में अल्फा एस1–कैसिइन और कप्पा कैसिइन कम होता है। ऊंटनी के दूध में कैसिइन मिसेल का बड़ा आकार एक नाजुक और कमजोर कोगुलम के निर्माण में योगदान देता है, जिससे पनीर की पैदावार कम हो जाती है।

इन चुनौतियों के बावजूद, जमावट में सुधार के लिए विभिन्न स्कंदक और तकनीकों का विकास किया गया है, जैसे कि पुनः संयोजक कैमल रेनेट (ची–मैक्स एम1000) और अल्ट्राफिल्ट्रेशन। इन नवाचारों ने विभिन्न प्रकार के ऊंटनी के दूध के पनीर के उत्पादन को बढ़ावा दिया है, जिससे ऊंटनी के दूध के पनीर उद्योग के विकास में योगदान हुआ है और देहाती समुदायों को लाभ हुआ है। हालाँकि, पनीर बनाने की प्रौद्योगिकियों को ऊंटनी के दूध में अपनाना जटिल बना हुआ है, और पके हुए ऊंटनी के दूध के पनीर के लिए प्रोटोकॉल को मानकीकृत करने के लिए और अधिक शोध की आवश्यकता है।

चुनौतियाँ और भविष्य की संभावनाएँ

जबकि ऊंटनी के दूध के कई फायदे हैं, सीमित जागरूकता कम उत्पादन मात्रा और बुनियादी ढांचे की बाधाओं जैसी चुनौतियों पर ध्यान देने की जरूरत है। अनुसंधान, बुनियादी ढांचे और विपणन में बढ़ा हुआ निवेश इन चुनौतियों पर काबू पाने और डेयरी उद्योग में ऊंटनी के दूध की पूरी क्षमता को अनलॉक करने में योगदान दे सकता है।

निष्कर्ष

ऊंटनी का दूध डेयरी उद्योग के लिए वरदान साबित हो रहा है, जो पारंपरिक डेयरी उत्पादों के लिए एक टिकाऊ, पौष्टिक और आर्थिक रूप से व्यवहार्य विकल्प प्रदान करता है। जैसे–जैसे जागरूकता बढ़ती है और निवेश बढ़ता है, ऊंटनी के दूध में बाजार में एक महत्वपूर्ण जगह बनाने की क्षमता है, जो उपभोक्ताओं को स्वस्थ और पर्यावरण के अनुकूल डेयरी विकल्पों की एक विविध श्रृंखला प्रदान करता है। मुख्यधारा के डेयरी उद्योग में ऊंटनी के दूध का एकीकरण न केवल किसानों के लिए एक वरदान है, बल्कि डेयरी क्षेत्र के लिए अधिक लचीले और टिकाऊ भविष्य की दिशा में एक कदम भी है।

कर्मभूमि की दुनियाँ में श्रम सभी को करना है...
ईश्वर सिर्फ लकीरें देता है रंग हमें ही भरना है
भगवत् गीता

स्थानीय फल एवं फूल का कुटीर उद्योग के रूप में मूल्य संवर्धन

सुधा जुकारिया, शशि तिवारी एवं सी० तिवारी
कृषि विज्ञान केन्द्र ज्योलिकोट, नैनीताल

नींबू का स्क्वैश बनाएं

नींबू में विटामिन सी बहुतायत में पाया जाता है। इनके प्रतिदिन से प्रयोग से दांत के मसूड़े स्वस्थ रहते है त्वचा निरोग रहती है तथा शरीर को विभिन्न रोगों से लड़ने की शक्ति मिलती है, किंतु यह गुणकारी फल वर्ष में कुछ महीने ही उपलब्ध रहते है। इन फलों का रस निकालकर यदि स्क्वैश बनाया जाये तो हम इनकी गुणवत्ता व स्वाद का आनन्द वर्ष भर ले सकते है।

सामग्री

नींबू का रस	1 लीटर
चीनी	1.8 किलोग्राम
पानी	1.2 लीटर
सुगन्ध (एसेन्स)	नींबू का एसेन्स 2 चाय चम्मच
रंग	पीला रंग आवश्यकतानुसार
के0एम0एस0	3 ग्राम लगभग 3/4 चाय चम्मच

बनाने की विधि

- नींबू का रस निकाल ले।
- रस को छानकर नाप ले।
- रस की मात्रानुसार पानी एवं चीनी लेकर गैस पर चढ़ाये तथा चलाते रहे जिससे की चीनी जलने न लगे। जब चीनी घुल जाए तो 2 चम्मच नींबू का रस डाल दे जब चासनी उबलने लगे तो 3–4 मिनट कर उतार ले। इसे कपड़े से छानकर ठंडा होने के लिये रख दे।
- चासनी ठंडी होने के पश्चात रस को उसमें मिलाये।
- दो गिलास में थोड़ा–थोड़ा रस निकाले एक गिलास में थोड़ा रंग घोले दूसरे गिलास में के0एम0एस0 मिलाये। इसे तैयार स्क्वैश में मिला दे। तैयार स्क्वैश को शुष्क स्थान पर सील बोतल में रखे।

सावधानियां

- नींबू वर्गीय फलों का स्क्वैश बनाते समय कभी भी रस को पकाना नहीं चाहिये।
- चासनी को अच्छी तरह से ठंडा करने के पश्चात उसमें रस मिलाये।
- के0एम0एस0 को थोड़े से रस में अच्छी तरह से घोलकर सबसे अंत में मिलाये।

नींबू का अचार

सामग्री

नींबू	1 किलो
नमक	150 ग्राम
काला नमक	50 ग्राम
हल्दी	10 ग्राम
धनिया	15 ग्राम
कालीमिर्च	5 ग्राम
लालमिर्च	10 ग्राम
हींग	2 ग्राम
बड़ी इलायची	3 ग्राम
कलौंजी	5 ग्राम
सरसों का तेल	200 मिली0

बनाने की विधि

- नींबू धोकर छोटे– छोटे टुकड़ों में काटकर बीज का सफेदा रेशा निकाल दें।
- नींबू के टुकड़े को हल्दी व नमक में मिलाकर 5–6 दिन के लिये जार में भरकर रख दे। कलौजी को छोड़कर बाकी मसाले पीस ले।
- 5–6 दिन बाद टुकड़ो को जार से निकालकर हींग को थोड़े से रस में घोलकर मिलाये।
- सरसों का तेल खौलाकर बिल्कुल ठंडा करे उसमें सभी मसाले मिलाइये और मसाले और तेल को नींबू के टुकड़ों के साथ मिला दे।
- अब जार में दबा दबा कर भर दे। उपर से थोड़ा सा नमक लेकर फैला दे तथा जार को छाया में रख दे।

स्क्वैश बनाने का प्रशिक्षण

आम के लच्छों का अचार

सामग्री

आम का लच्छा	1 किग्रा0
नमक	200 ग्राम
सरसों के बीज का चूर्ण	100 ग्राम
लाल मिर्च	15 ग्राम
हींग	3 ग्राम
मेंथी	50 ग्राम
सरसों का तेल	100 ग्राम
गुड़	400 ग्राम

बनाने की विधि

- हरे तथा सख्त आम लेकर धो लीजिए।
- अब लच्छों को अच्छी तरह से नमक मिलाकर जार में भर दीजिए। इसे 4–5 दिन तक धूप में रखिए। धूप में रखते समय जार के मुँह में कपड़ा बॉध दें।
- बीच–बीच में लच्छों को हिलाते रहिए। इस समय में लच्छों का पानी नमक की क्रिया से बाहर निकलेगा तथा उनका रंग हल्का पीला पड़ जाएगा।
- 4–5 दिन तक धूप में रखने के बाद लच्छों को नमक के घोल से बाहर निकालकर तथा इन्हें एक साफ कपड़े में फैलाकर धूप में लगभग 1–2 घंटे तक सुखा लीजिए। नमक के घोल को अलग रख दीजिए।
- मेथी, कलौंजी तथा सौफ को मोटा पीस लीजिए अन्य मसालों को बारीक पीस लीजिए।
- अब सब मसालों को थोड़े से नमक के पानी तथा तेल के साथ लच्छों में अच्छी तरह मिला दीजिए। हींग को नमक के पानी में घोलकर मिलाए।
- अन्त में मसालों के साथ गुड़ का चूरा भी डाल दीजिए तथा अच्छी तरह से मिला दीजिए। यह अचार बहुत स्वादिष्ट होता है।

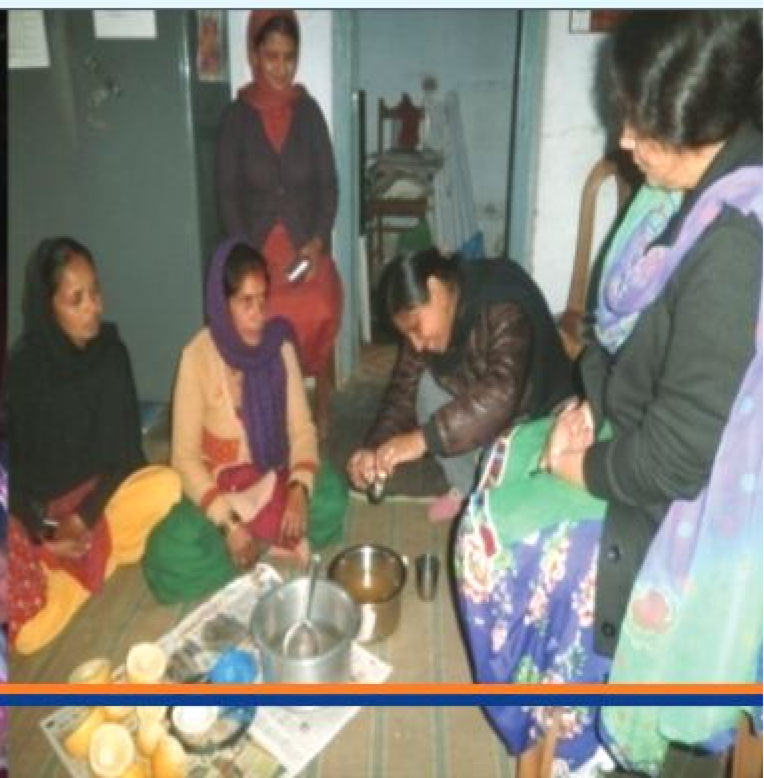

- मसालें मिले अचार को जार में दबा–दबाकर भर दीजिए ताकि हवा के बुलबुले के अन्दर न रह जाए।
- ऊपर से बचा हुआ नमक का पानी तथा तेल डाल दीजिए।

सावधानियाँ

- अचार बनाते समय व भण्डारण के दौरान हमेशा स्टील, कॉच या खाद्य स्तरीय प्लास्टिक बर्तन का ही प्रयोग करना चाहिये।
- अचार में नमक, तेल व एसिटिक ऐसिड का प्रयोग बताई गई मात्रा से कम न हो।
- सोडियम बेन्जोएट एक रसायनिक परिरक्षक है। इसका प्रयोग हमेशा बताई गई मात्रा में करे अन्यथा न करे।
- अचार में अच्छी किस्म के नमक, मसाले तथा फूलरहित लौंग का प्रयोग करना चाहिए इससे अचार काला नहीं पड़ता है।
- यदि कम तेल वाला अचार बनाना हो तो अचार को भरने के बाद उपर से थोड़ा नमक बिखरे दें।
- कलौंजी को हमेशा बिना पिसा ही प्रयोग करें।
- अचार को जार में भरते समय अच्छी तरह से दबा–दबा कर भरे और ऊपर से ढक दें।
- यदि कम तेल वाला अचार बनाना हो तो अचार को भरने के बाद ऊपर से थोड़ा सा नमक बिखेर दें।
- अचार के ऊपर सफेद पपड़ी (फफूँदी) पड़ जाने पर उसे चम्मच से निकल कर फेंक दें। पूरे अचार को जार से बाहर निकालकर उसमें 5–6 मिली0 प्रति किग्रा0 की दर से एसिटिक एसिड व स्वादानुसार नमक अच्छी तरह से मिलाकर पुनः जार में भर दें और 15 दिन धूप में रखें।
- शुद्ध एसिटिक एसिड हाथ को जला देता है इस कारण उसे चम्मच से निकालें।
- तैयार अचार को अच्छी तरह से ढक्कन बंद करके किसी ऐसे स्थान पर भण्डारित करें जहां नमी न हो।
- अचार निकालते समय हमेशा सूखे चम्मच का प्रयोग करना चाहिए हाथ का नहीं।

विभिन्न प्रकार के जैम/चटनी

सेब या लदाख का जैम

सामग्री

सेब का पल्प	10 किग्रा
चीनी	9 किग्रा
साइट्रिक एसिड़	30 ग्राम
लाल रंग	आवश्यकतानुसार
सोड़ियम बेन्जोएट	15 ग्राम
जैम बोतल	26

बनाने की विधि

- धोकर छोटे– छोटे टुकड़ों में काटें।
- चौथाई पानी मिलाकर गलने तक पकायें।
- पल्पर द्वारा पल्प निकालें।
- 9 किग्रा चीनी पल्प में मिलाकर पकायें व थोड़ी देर पकाने के बाद साइट्रिक एसिड़ मिलायें।
- जैम गाढ़ा होने पर रिफरेक्टोमीटर द्वारा उसके तैयार होने की जॉच करें। उसमें धुलनशील पदार्थ 68 होना चाहिए।

- जैम तैयार होने पर उसमें 15 ग्राम सोड़ियम बेन्जोएट व आवश्यकतानुसार लाल रंग पानी में घोलकर मिलायें।
- तैयार जैम को चौड़े मुँह की बोतल गरम–गरम भरें।

तैयार उत्पाद : 14 किग्रा

लागत मूल्य रू 1610.00

लागत मूल्य प्रति शीशी (0.500 ग्राम) रू 32.00

शुद्व लाभ मात्रा बाजार मूल्य–लागत मूल्य

रू 100.00–रू 32.00 = रू 68.00

सावधानियॉं

- लौह तॉंबे पीतल के बर्तनों का प्रयोग न करके स्टील या एल्यूमीनियम के बर्तनों का प्रयोग करें।
- एसिटिक एसिड को हाथ से न छुऐं।
- रंग व सोडियम बेन्जोएट का अमेशा थोड़े से पानी में घोलकर मिलाऐं।
- जैम/चटनी को जितना सम्भव हो सके तेज ऑंच पर पकायें।
- जैम/चटनी को भरते समय शीशी को जमीन के सम्पर्क में न रखकर लकड़ी के पटरे पर पर रखें।

सेब का मुरब्बा

सामग्री

सेब	1 किग्रा0
चीनी	1.5 किग्रा0
साइट्रिक एसिड	3 ग्राम
सोडियम बेन्जोएट	1 से 1.5 ग्राम
नमक का घोल	2 प्रतिशत 4 लीटर
रंग	आवश्यकतानुसार

बनाने की विधि

- सेब को धोकर साफ कर लें। इसे चाकू से छीलकर नमक के घोल में डालते जायें।
- सेब छोटे आकार के हों तो साबुत रखें अन्यथा काटकर दो भाग कर लें तथा बीच का कड़ा भाग व बीज निकाल दें।
- सेब को स्टील के कॉंटे या बांस की तिल्ली से गोद लें।
- भगोने में पानी उबालें तथा सेब को मलमल के कपड़े या बारीक सूती के कपड़े में लेकर उबलते पानी में 3–4 मिनट तक उबाल कर निकाल लें तथा पानी सूख जाने दें।
- चीनी की आधी मात्रा (750 ग्राम) निकाल कर अलग कर लें। थोड़ी चीनी लेकर भगोने की तली में बिछायें। इसके ऊपर सेब की एक पर्त और फिर चीनी की पर्त लगायें। इस प्रकार पूरे सेब को चीनी से ढक दें तथा भगोने को ढक कर रात भर के लिए रख दें।

- दुसरे दिन चीनी पिघलकर चाशनी बन जाती है। सेब को निकालकर अलग कर लें तथा चाशनी में बची हुई चीनी की आधी मात्रा (लगभग 350 ग्राम) मिलाकर उबालें और इसमे सेब डालकर पुनः रख दें।
- तीसरे दिन उपरोक्त क्रिया को दोहरायें तथा चाशनी उबालते समय बची हुई चीनी व साइट्रिक एसिड मिलाकर एक उबाल आने तक पकायें तथा चानी को छानकर उसमें पुनः सेब डालकर रखें।
- चौथे दिन चाशनी को एक उबाल आने तक पकायें।
- पॉचवे दिन चाशनी को इतना गाढ़ा करें कि वह शहद के समान हो जाय। इसमें सोडियम बेन्जोएट घोलकर मिला दें तथा आग से उतार कर ठण्डा होने पर सेब डालकर किसी जार में भर दें और शुष्क स्थान पर भण्डारित करें।

सावधानियाँ

- सेब को अन्दर तक गोदना चाहिए जिससे चीनी का घोल अन्दर तक पहुॅंच सके।
- सेब को अधिक नहीं उबालना चाहिए इसे केवल हल्का मुलायम होने तक ही उबालें।
- बतायी गयी चीनी की पूरी मात्रा एक साथ न मिलाकर थोड़ी थोड़ी करके कई बार में मिलानी चाहिए।
- सेब को चासनी में डालकर न पकायें।
- मुरब्बे में साइट्रिक एसिड अवश्य मिलायें अन्यथा भण्डारण के समय चीनी के दानें (क्रिस्टल) पड़ जाएगें।
- भण्डारण के दौरान मुरब्बा पुरी तरह चाशनी में डूबा रहना चाहिए अन्यथा फफूंदी लग जाएगी।

लदाख की चटनी

सामग्री

लदाख का पल्प	1 किग्रा
चीनी	1 किग्रा
नमक	30 से 40 ग्राम
एसिटिक एसिड़	15 मिली.
लाल रंग	आवश्यकतानुसार
सोड़ियम बेन्जोएट	1.5 ग्राम
जैम बोतल	3 (500 ग्राम)
गरम मसाला	10 से 15 ग्राम
प्याज, लहसुन व अदरक	20,10 व 15 ग्राम
किसमिस व छुहारे	25 व 50 ग्राम

बनाने की विधि

- प्याज,लहसुन व अदरक को बारीक पीस कर लदाख के साथ कुकर में गलने तक पकायें।
- पल्पर द्वारा पल्प निकालें।
- 1 किग्रा चीनी, नमक व मसाले पल्प में मिलाकर पकायें
- जब यह पककर गाढ़ा हो जाय तो सोड़ियम बेन्जोएट व आवश्यकतानुसार लाल रंग पानी में घोलकर मिलायें।
- इसमें एसिटिक अम्ल डालकर अल्छी तरह मिलाने के पश्चात चौड़े मुॅंह की बोतल गरम– गरम भरें।
- चटनी को जैम से थोड़ा कम पकाते हैं।

ICAR-DCFR

तैयार उत्पाद : 1.5 किग्रा

लागत मूल्य रू 150.00

लागत मूल्य प्रति शीशी (500 ग्राम) रू 50.00

शुद्व लाभ मात्रा बाजार मूल्य – लागत मूल्य

रू 105.00 – रू 50.00 = रू 55.00

बुरांश का शर्बत

सामग्री

बुरांश का फूल	1 किग्रा
चीनी	3 किग्रा
पानी	1.5 लीटर
साइट्रिक एसिड़	6 से 8 ग्राम
लाल रंग	आवश्यकतानुसार
नीबू सुगन्ध	10 मिली
सोड़ियम बेन्जोएट	4 ग्राम
स्क्वैश बोतल	4

बनाने की विधि

- फूलों की लाल पंखुड़ियों को लेकर साफ कर लें।
- एक किग्रा. पंखुड़ियों में 0.5 लीटर पानी लेकर धीमी ऑच पर 15 से 20 मिनट तक ढ़क कर पकायें।
- बीच–बीच में चलाते रहें जिससे फूलों का सारा रंग पानी में आ जाय।

- रस को छानकर नाप लें तथा चासनी बनाने के लिए रस की मात्रानुसार चीनी व पानी लेकर गैस पर चढ़ायें।
- जब चीनी घुल जाय तो इसकी गन्दगी साफ करने के लिए चौथाई चम्मच साइट्रिक एसिड़ ड़ालें। चासनी उबलने पर 3–4 मिनट पकाकर ऊपर का सफेद मैल चमचे से निकालकर अलग कर दें तथा चासनी को कपड़े से छानकर ठन्ड़ा होने के लिए रख दें।
- दो ग्लास में थोड़ा बुरांश का रस निकालकर एक में साइट्रिक एसिड व दूसरे में सोड़ियम बेन्जोएट घोलें। यदि चाहें तो आवश्यकतानुसार लाल रंग भी घोलें।
- चासनी ठन्ड़ी होने पर उसमें फूलों का रस, साइट्रिक एसिड, सुगन्ध, रंग व सोड़ियम बेन्जोएट मिलायें तथा तैयार बोतलों में भरकर सील कर दें।

तैयार उत्पाद : 3 लीटर

लागत मूल्य रू 245.00

लागत मूल्य प्रति शीशी (1 लीटर) रू 82.00

शुद्व लाभ मात्रा बाजार मूल्य –लागत मूल्य

रू 125.00 – रू 82.00 = रू 43.00

प्रथम वर्ग के परिरक्षक

- **चीनी** : फलों को चीनी की गाढी चासनी मे रखने या उस खाद्य पदार्थ में चीनी की मात्रा 66 प्रतिशत से अधिक हाने पर खाद्य पदार्थ खराब नही होता है जैसे – जैम, जेली, मुरब्बा, कैन्डी आदि।
- **नमक** : फल/सब्जियों को 15 प्रतिशत या उससे अधिक गाढे नमक के धोल मे रखने पर उसमें उपस्थित जीवाणुओ की वृद्वि रूक जाती है। इस कारण फल व सब्जियो लम्बे समय तक सुरक्षित रहती है।

द्वितीय वर्ग के परिरक्षक

- ये रासायनिक परिरक्षक होते है तथा आवश्यकता से अधिक प्रयोग करने पर

स्वास्थ्य के लिये हानिकारक भी हो सकते है। भारत सरकार द्वारा पारित भारतीय फल पदार्थ आदेश– के अनुसार किसी भी खाद्य पदार्थो में केवल दो प्रकार के रासायनिक परिरक्षक का ही प्रयोग किया जा सकता है:

1 सोडियम बेन्जोएट

2 पोटैशियम मेटाबाई सल्फाइट

रासायनिक परिरक्षकों की प्रयोग मात्रा

1. नीबू, संतरा, माल्टा नाशपाती, लीची, बेल, सेब आदि का स्क्वैश शर्बत व जूस।
   - के.एम.एस.1.5 ग्राम/लीटर
2. बुरांश गुलाब व किलमोडा का शर्वत।
   - सोडियम बेन्जोएट 1.0 ग्राम/लीटर
3. जैम, जैली, मुरब्बा व चटनी।
   - सोडियम बेन्जोएट 1.0 ग्राम/किग्रा
4. आम, नीबू, व अन्य खटटे फलों के अचार।
   - सोडियम बेन्जोएट1.0 ग्राम/किग्रा.
5. गोभी, मूली अदरक,मिर्च, कटहल,बासॅ व आवला का अचार।
   - सोडियम बेन्जोएट1.5 ग्राम/किग्रा.

बुरांश के फूल का स्क्वैश बनाने का प्रशिक्षण प्राप्त करते हुए प्रशिक्षु

देश के सबसे बड़े भू–भाग में बोली जाने वाली
हिन्दी राष्ट्र भाषा पद की अधिकारिणी है।
सुभाष चन्द्र बोस

छत बागवानी एवं गमले में फलदार पौधे उगाना

आकाश शर्मा
डिवीज़न ऑफ़ फ्रूट साइंस, फैकल्टी ऑफ़ हॉर्टिकल्चर-फोरेस्ट्री, स्कुअस्ट जम्मू, चट्ठा जम्मू

शहरी क्षेत्रों में छत पर बागवानी के लिए काफी संभावनाएं है। तेजी से हो रहे शहरीकरण, औद्योगीकरण, भूमि की छत, भवनों के निर्माण के परिणाम स्वरूप बड़े शहरों में किचन गार्डन गतिविधियों के लिए भूमि की अनुपलब्धता हुई है। छत पर उपलब्ध जगह को फलों के पेड़ उगाने के लिए प्रभावी ढंग से इस्तेमाल किया जा सकता है। एक सुनियोजित टैरेस गार्डन पूरे वर्ष ताजे फलों की आपूर्ति सुनिश्चित करता है। सौभाग्य से कुछ हद तक सफलता के साथ विभिन्न प्रकार की फलो को कंटेनरों में उगाया जा सकता है। रूफटॉप फलों की खेती का मुख्य लाभ प्रतिदिन ताजे फलों की स्थानीय आपूर्ति प्रदान करना है। घर के सभी सदस्यों का उपयोग छत पर फलों की खेती में किया जा सकता है जिससे श्रम की लागत कम हो सकती है और दैनिक शारीरिक व्यायाम भी हो जाता है। रूफटॉप खेती स्थानीय फलों के उत्पादन को बढ़ाकर शहरी खाद्य प्रणालियों के विकास में योगदान कर सकती है, पौष्टिक भोजन तक पहुंच, वायु प्रदूषण को कम करके, तूफानी जल धारण क्षमता में वृद्धि, सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार, सौंदर्य में वृद्धि करके लोगों की पोषण मांग को पूरा कर सकती है।

दुनिया की लगातार बढ़ती आबादी के 2050 तक लगभग 10 बिलियन जनसख्या तक पहुंचने की भविष्यवाणी की गई है। इस स्थिति से खाद्य मांग में वृद्धि होगी और इसके परिणामस्वरूप, कई पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं पर दबाव बढ़ जाएगा। वर्तमान में कोविड–19 महामारी दुनिया भर में एक प्रमुख चुनौती है। वायरस से लड़ने के लिए अच्छी पोषण स्थिति प्राप्त करना और बनाए रखना अनिवार्य है। इस कोविड–19 महामारी के दौरान अस्थिरता के प्रति लचीलेपन के रूप में व्यक्तियों की पोषण स्थिति का उपयोग किया गया है। इष्टतम पोषण और आहार पोषक तत्वों का सेवन प्रतिरक्षा प्रणाली को प्रभावित करता है, इसलिए वर्तमान संदर्भ में जीवित रहने का एकमात्र स्थायी तरीका प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करना है। वर्तमान में कोई सबूत नहीं है कि कोई भी पूरक हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली को

'बढ़ावा' दे सकता है और विटामिन सी को छोड़कर किसी भी वायरल संक्रमण का इलाज या रोकथाम कर सकते है। विटामिन सी पानी में घुलनशील विटामिन के प्रमुख घटकों में से एक है जो एक मजबूत प्रतिरक्षा प्रणाली बनाता है। अमरूद के फलों में विटामिन सी 228 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम गूदा में होता है। जबकि, नींबू के फल में प्रति 100 ग्राम रस में 53 मिलीग्राम विटामिन सी होता है। विटामिन सी के लिए दैनिक अनुशंसित आहार भत्ता पुरुषों के लिए 90 मिलीग्राम/दिन और महिलाओं के लिए 75 मिलीग्राम /दिन है। वर्तमान स्थिति में, उन विशिष्ट प्रकार के भोजन के बारे में जागरूक होना आवश्यक है जो कोविड –19 का मुकाबला करने के लिए हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली में सुधार कर सकते हैं। इसलिए, रोजाना फल खाएं जैसे अमरूद, सेब, स्ट्रॉबेरी, अनानास, पपीता, संतरा, काला करंट, पुमेलो, मीठा संतरा आदि।

छत के बगीचे में, मिट्टी और प्लास्टिक के बर्तन, लकड़ी और कंक्रीट के बिस्तर, ड्रम और उनके आकार जैसे पौधे उगाने वाले ढांचे में विभिन्न फल जैसे अमरूद, आम, किन्नू, मीठा नारंगी और कागजी इत्यादि उगाये जा सकते हैं। पौधे बढ़ने के रूप में संरचनाएं, पौधे उगाने वाला मीडिया भी स्थायी छत पर बागवानी के लिए एक प्रमुख चिंता का विषय है। मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ जैसे विघटित गाय का गोबर, वर्मीकम्पोस्ट, कोकोपीट और जैविक खाद जैसे गाय का गोबर, पोल्ट्री खाद और वर्मीकम्पोस्ट सहित पौधे उगाने वाले माध्यम मिट्टी की संरचना, वातन, धीमी गति से रिलीज पोषक तत्व में सुधार करते हैं जो जड़ विकास का समर्थन करते हैं जिससे फल पौधों की उच्च्व वृद्धि और उपज होती है। शहरी क्षेत्रों मे छत बागवानी एवम गमले में फलदार पौधे उगाना के महत्व को ध्यान में रखते हुए, डॉ. आकाश शर्मा, प्रोफेसर, सुकास्ट–जम्मू मे फलों के पौधों को छत/कंटेनर मे उगाने पर उन्नत बागवानी में शोध कार्य शुरू किया गया है जिसमें निमन ढंग से वैज्ञानिकी रास्तो में चलकर छत्तों पे गमलों में फलदार पौधे उगाये जा रहे है।

पोटिंग मिश्रण की तैयारी

पोषक तत्व धारण क्षमता वाली मिट्टी, जिसमें पर्याप्त मात्रा में हवा हो और उचित जड़ विकास सुनिश्चित हो, का उपयोग किया जाना चाहिए ताकि कंटेनर मे पौधो की तेज़ी से ग्रोथ हो सके। बगीचे की मिट्टी या वाणिज्यिक शीर्ष मिट्टी का उपयोग, वर्मीक्यूलाइट या पेर्लाइट के साथ संशोधित किया जाता है। कोकोपीटः वर्मीक्यूलाइटः पेर्लाइट का उपयुक्त मिश्रण न केवल अधिक नमी रखता है, बल्कि पौधो को बढ़ने के लिए बेहतर पोषण भी प्रदान करता है। जल निकासी की सुविधा के लिए कंटेनर के तल में बजरी की एक (1–2 इंच) परत रखी जानी चाहिए। कंटेनर को आंशिक रूप से मिट्टी से भरा जाना चाहिए (बड़े कंटेनरों को उस स्थान पर भरा जाना चाहिए जहां उनको रखा जाना है। पौंधे को मिट्टी के आंशिक रूप से भरे हुए कंटेनर में उसकी सही रोपण गहराई तक रखें जो कि वह गहराई है जिस पर पौधे पहले उगाया गया था। पौंधे के चारों ओर मिट्टी को मजबूत करें। अच्छी तरह से पानी दें लेकिन नई वृद्धि शुरू होने तक खाद न डालें। कंटेनर की उपस्थिति में सुधार के लिए छाल, बजरी या अन्य सामग्री का एक आकर्षक मल्च जोड़ा जा सकता है।

कंटेनर

फलदार पौधे कई प्रकार और आकार के कंटेनरों में विकसित हो सकते हैं जैसे लकड़ी, चीनी मिट्टी, धातु या प्लास्टिक के टब, बाल्टी, गमले, जो 1.5×1.5×1.5 फीट (ऊँचाई × डायामीटर × गहराई) से अधिक आकार के हो। अतिरिक्त पानी निकालने के लिए बैग के निचले हिस्से में 8 से 10 छेद होने चाहिए। अधिकांश फलों के पौधों को बड़ी मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है, इसलिए पौधों को सूखने से रोकने के लिए एक बड़े कंटेनर की आवश्यकता होती है। सुनिश्चित करें कि अच्छी जल निकासी की अनुमति देने के लिए कंटेनर में नीचे छेद है। तल में एक इंच या दो छोटे पत्थर या बजरी जल निकासी में सहायता करेगी। ध्यान रखें कि यदि मिट्टी जम जाती है, तो मिट्टी के बर्तनों में दरारें पडने से वह टूट जाते हैं।

मीडिया और उसकी संरचना

मीडिया

जिस सामग्री में पौधे गमलों में उगते हैं उसे पोटिंग सामग्री के रूप में जाना जाता है। सब्सट्रेट या माध्यम जो पौधों को उगाने के लिए उपयोग किया जाता है उसे आमतौर पर ग्रोइंग मीडिया कहा जाता है। मीडिया खनिज पोषक तत्वों, नमी और पौधे के लिए समर्थन का एक स्रोत है।

विभिन्न मीडिया या सबस्ट्रेट्स

कोको पीट

यह नारियल उद्योग का उप–उत्पाद है और इसकी कम लागत, वातन, जल निकासी और लंबे जीवन के कारण व्यापक रूप से सब्सट्रेट के रूप में उपयोग किया जाता है। इसकी आपूर्ति ढीले रूप में और साथ ही संपीड़ित ईंट रूपों में की जाती है। संपीड़ित ईंटों को कम लागत पर परिवहन करना आसान है। कोको पीट ईंटों का वजन लगभग 4–5 किलोग्राम होता है और पानी डालने पर इनकी मात्रा 4–5 गुना तक बढ़ जाती है। भाप या कीटाणुशोधन के अन्य साधनों से उपचार के बाद कोको पीट का उपयोग करने की सलाह दी जाती है।

वर्मीक्यूलाइट

यह एक एल्यूमीनियम–लौह–मैग्नीशियम सिलिकेट है। यह अभ्रक जैसा खनिज है जो उच्च तापमान पर गर्म करने पर खुली परत वाली संरचनाओं में फैल जाता है। वर्मीक्यूलाइट विभिन्न ग्रेड और कण आकारों में उपलब्ध है और नर्सरी के बर्तनों के आकार के आधार पर असर डालता है। छोटे बर्तनों और नर्सरी ट्रे के लिए महीन ग्रेड का उपयोग किया जाता है, जबकि बड़े या मोटे ग्रेड का उपयोग बड़े कंटेनरों में किया जाता है। वर्मीक्यूलाइट में छिद्रों की एक श्रृंखला होती है, जो गीला होने पर काफी मात्रा में नमी बनाए रख सकती है। इसमें लगभग तटस्थ पीएच होने के अलावा महत्वपूर्ण खनिज, विशेष रूप से कैल्शियम और मैग्नीशियम भी होते हैं। वर्मीक्यूलाइट अपने उच्च पोषक तत्व और पानी की अवधारण और कम थोक तथा घनत्व के साथ अच्छी वातन क्षमता के कारण यह मिट्टी रहित जड़ सब्सट्रेट का एक महत्वपूर्ण वांछनीय घटक है।

पेर्लाइट

यह एक कुचली हुई ज्वालामुखी चट्टान है जिसे हल्का वजन, सफेद सामग्री बनने के लिए गर्म और विस्तारित किया गया है। पेर्लाइट बाँझ है और इसका पीएच तटस्थ है। यह नर्सरी माध्यम के वायु स्थान और जल निकासी में सुधार करता है। यह एक कठोर पदार्थ है जो आसानी से टूटता नहीं है। यह पानी में अपने भार के बराबर लगभग 3–4 गुना पानी धारण कर सकता है। पेर्लाइट के उपयोग से मिट्टी की तुलना में मीडिया का वजन कम रहता है।

रेत

यह मिट्टी का मूल घटक है। इसका कण आकार 0.05–2.0 मिमी व्यास के बीच होता है। यह वातन और जल निकासी में सुधार करता है। यह पोटिंग और प्रचार मीडिया दोनों के लिए एक अच्छा माध्यम साबित हो सकता है।

मिट्टी

मिट्टी कंटेनर में फलों के पौधों को लंगर प्रदान करती है। दोमट और झरझरा मिट्टी, तटस्थ पीएच लगभग 7½ के साथ कार्बनिक पदार्थों से भरपूर, पौधों की वृद्धि के लिए अच्छी है। बेहतर वातन, जल धारण क्षमता और पौधों को पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए मिट्टी को रेत और खेत की खाद (2:1:1) के साथ मिलाया जाता है। मिट्टी को कंटेनर में पत्थरों और बजरी के ठीक ऊपर भरे हुए सब्सट्रेट के भाग के रूप में रखा जाना चाहिए।

सिंचाई

फलों के पौधों की उचित वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए कंटेनर में नियमित रूप से पानी देना बहुत महत्वपूर्ण है। पानी देने की आवृत्ति को

वर्षा और अन्य मौसम की स्थिति, उपयोग किए गए पॉटिंग मिश्रण के प्रकार और अंकुर की उम्र के आधार पर समायोजित किया जाना चाहिए। उच्च तापमान की अवधि के दौरान, पौधे को दिन में दो या तीन बार पानी देना आवश्यक हो सकता है। स्थान, मिट्टी का मिश्रण, कंटेनर का आकार और मौसम, आवश्यक पानी की आवृत्ति निर्धारित करता हे। ध्यान रखें कि अधिक पानी न डालें; पौधों की जड़ों को हवा के साथ–साथ पानी की भी आवश्यकता होती है, इसलिए ड्रिप सिंचाई कंटेनर में उगाए गए फलों के पौधों के लिए सिंचाई का एक आदर्श समाधान है। कंटेनरों में उगाए गए फलों के पौधों को पानी देने से पहले हमेशा उंगलियों से मिट्टी का परीक्षण करें। कंटेनरीकृत फल उगाने के लिए पूर्ण सूर्य आवश्यक नहीं है; 5–6 घंटे की धूप से पौधे की अच्छी ताक़त बनी रहेगी।

कंटेनर फलों का प्रशिक्षण और छंटाई

प्रशिक्षण प्रणाली

प्रशिक्षण का अर्थ है विकास की आदत को नियंत्रित करके विशेष उद्देश्यों के साथ पेड़ का वांछित आकार विकसित करना। कंटेनर में फलों के पौधों की रोपाई के बाद जैसे ही नई वृद्धि उभरती है, प्रशिक्षण शुरू हो जाता है। कुछ फलों की फसलों के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है जैसे अमरूद, आम, किन्नू, संतरा, मीठा संतरा, चूना और नींबू आदि। मेनफ्रेम निर्माण कार्य मजबूत होना चाहिए। प्रशिक्षण एक अभ्यास है जिसमें पेड़ की वृद्धि को वांछित आकार और रूप में निर्देशित किया जाता है। वृक्षों के समुचित विकास के लिए युवा फलों के पेड़ों को प्रशिक्षित करना आवश्यक है। वृक्ष प्रशिक्षण का लक्ष्य वृक्षों की वृद्धि को निर्देशित करना और कटाई को कम करना है।

छँटाई

कुछ अपवादों के साथ, फलों के पेड़ बहुत कम या बिना प्रशिक्षण या छंटाई से अपने प्राकृतिक आकार को विकसित बनाए रखते है। शाखाओं और झाड़ियों को बल देने के लिए निचे की शाखाओं को आंशिक रूप से काट दिया जाना चाहिए। अक्सर, शीर्ष काफी बड़ा हो जाएगा और जड़ प्रणाली की क्षमता को पार करना शुरू कर देता हे। नतीजतन, कुछ लीफ शेड और टहनी डाइबैक अक्सर घटित हो जाती हे। ऐसे पौधों को फिर से जीवंत करने के लिए उन्हें भारी रूप से काटा जाना चाहिए। जब पौधों को भारी छँटाई की जाती है, तो कम उर्वरक और पानी की आवश्यकता होती है जिससे पौधों के आकार में कमी की भरपाई हो जाती है।

निराई

चूंकि मिट्टी या रेत पोटिंग माध्यम का एक घटक है, इसलिए कंटेनर में खरपतवार उगने की पूरी संभावना है। खरपतवार पौधों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं और इसलिए, यह आवश्यक है कि उन्हें बार–बार हटाया जाए। बार–बार निराई करके आसपास के क्षेत्र को भी साफ और खरपतवार मुक्त रखना चाहिए।

खाद

कंटेनर में उगाए गए फलों के पेड़ों की सफलता के लिए अच्छा पोषण आवश्यक है, लेकिन अतिरिक्त उर्वरक के परिणामस्वरूप नमक जमा होने के कारण अतिवृद्धि, खराब फल और संभावित पेड़ों का मरना हो सकता है। पानी में घुलनशील उर्वरक व्यापक रूप से उपलब्ध हैं और इनका उपयोग लेबल निर्देशों के अनुसार किया जाना चाहिए। यदि अधिकांश पौधों में परिपक्व पत्ते गहरे हरे रंग के होते हैं, तो इसका मतलब हे की पर्याप्त उर्वरक का उपयोग किया जा रहा है। कंटेनर की सिंचाई उसी दिन कर देनी चाहिए, जब उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है। उर्वरक में संतुलित अनुपात में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम होना चाहिए और इसमें मैग्नीशियम, लोहा, मैंगनीज, जस्ता और तांबे की कम मात्रा या अंश शामिल होना चाहिए। निहित प्रत्येक पोषक तत्व की सामग्री और मात्रा उर्वरक लेबल पर सूचीबद्ध हैं।

निष्कर्ष

छत के ऊपर फल उगाना अप्रयुक्त इमारतों में छत की जगह का उपयोग करके शहरों के भीतर ताजे फल पैदा करने का एक अभिनव तरीका है। हमें कम कीमत और पर्यावरण के अनुकूल फल मिल सकते है जो जम्मू प्रांत के शहरी क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा को तेजी से बढ़ा सकते हैं। फलों को कंटेनर मे उगाने से हितधारकों के समूह और जम्मू के शहरी क्षेत्रों को लाभ हो सकता है। रूफटॉप फार्मिंग की मदद से ताजे और स्वच्छ फलों की आपूर्ति, तथा महंगे फल खरीदने के लिए घरेलू खर्च को कम कर सकते हे, इसके विप्रत हवा की गुणवत्ता में सुधार और हवा से कार्बन को अवशोषित और जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करके एक स्वस्थ वातावरण बनाकर भोजन की मांग को पूरा करने में मदद कर सकते है।

कोकोपीट ब्रिक्स

पर्लाइट

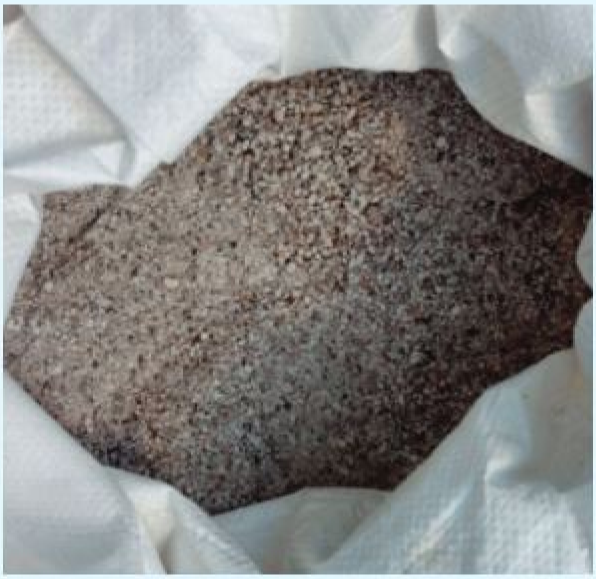

वर्मीक्यूलाइट

फिलिंग ऑफ़ ग्रोइंग मीडिया

किन्नो

अमरूद

छत पर लगाए गए अमरूद का दृश्य

शिक्षा की जड़ कड़वी है
पर उसके फल मीठे है। अरस्तु

जल संकट : कारण और निवारण

तारा दत्त जोशी

राजकीय इण्टर कालेज, हरिपुरा हरसान, बाजपुर, ऊधमसिंह नगर

श्रृष्टि के निर्माण के कारकों में जल महत्वपूर्ण कारक है। संपूर्ण ब्रह्माण्ड में धरती के अतिरिक्त अभी तक किसी अन्य ग्रह में जल उपलब्ध होने के पुष्ट प्रमाण नहीं हैं। यद्यपि मंगल ग्रह में जल होने के संकेत मिले है, किंतु वहां पर जीवन भी होगा?, अभी यह रहस्य है। धरती को अनोखा ग्रह कहा जाता है,क्यों कि इसमें जीवन के लिए सभी आवश्यक संभावनाएं मौजूद हैं। धरती की सतह का तीन चौथाई भाग जल से घिरा है और जल की उपस्थिति के कारण ही धरती अंतरिक्ष से नीली दिखाई देती है। इसी कारण धरती को नीला ग्रह भी कहते हैं। जल एक नवीनीकरणयोग्य साधन है और इसका नवीनीकरण और पुनर्भरण जल चक्र द्वारा स्वतः होता रहता है।

यद्यपि धरती का 70 प्रतिशत भाग जल से घिरा है, किंतु भारत सहित पूरे विश्व में पेय जल की भारी कमी है। धरती में उपलब्ध कुल जल का 96.5 प्रतिशत जल महासागरों में अवस्थित है।यह जल लवणीय होने के कारण पीने योग्य नहीं है। केवल 2.5 प्रतिशत जल ही पीने योग्य अलवणीय जल है जो सतही अपवाह ओर भौम जल स्रोतों के रूप में मिलता है। अलवणीय जल का 70 प्रतिशत भाग अंटार्कटिका, ग्रीनलैंड और पर्वतीय क्षेत्रों में बर्फ की चादरों व हिमनदों के रूप में है और 30 प्रतिशत भाग भौमजल व जलभृत्त के रूप में मिलता है।

किसी क्षेत्र में जल उपभोग की मांग पूरा करने हेतु उपलब्ध जल संसाधनों में कमी हो जाना ही जल संकट है। जबकि वैश्विक रूप से जनसंख्या में तीव्र वृद्धि से जल की बढ़ती मांग के अनुरूप जलवायु परिवर्तन के कारण जल की उपलब्धता में कमी को जल संकट के रूप में देखा जाता है। जल दुर्लभता भौतिक और आर्थिक कारणों से हो सकती है। यदि किसी क्षेत्र विशेष में प्राकृतिक रूप से उपलब्ध जल संसाधन वहां की जल मांग को पूरा करने के लिए अपर्याप्त हैं तो यह प्राकृतिक जल संकट की स्थिति है। किन्तु मानवीय प्रयासों अथवा उचित प्रबन्धन के अभाव के कारण प्राकृतिक रूप से जल साधन उपलब्ध होने के बावजूद जल की मांग के अनुरूप पूर्ति नहीं होती है तो यह आर्थिक जल संकट होगा। वैश्विक दृष्टि से उत्तरी अमेरिका का दक्षिण पश्चिमी क्षेत्र, उत्तरी अफ्रीका व पश्चिम एशिया में प्राकृतिक जल संकट है, जबकि दक्षिणी अफ्रीका, दक्षिणी अमेरिका का उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र उचित प्रबंधन के अभाव के कारण आर्थिक रूप से जल संकट की स्थिति में है।

भारत में पेय जल संकट एक बहुत बड़ी समस्या है। देश की लगभग 45 प्रतिशत आवादी को स्वच्छ पेय जल उपलब्ध नहीं है और लगभग 70 प्रतिशत जल दूषित है। जल गुणवत्ता सूचकांक में 122 देशों में भारत का 120 वां स्थान हैं। दूषित जल जनित बीमारियों के कारण लगभग 2 लाख लोगों का जीवन समाप्त हो जाता है। विशाल जनसंख्या होने के कारण भारत कुल वैश्विक आवादी के 18 प्रतिशत भाग को जल उपलब्ध कराता है, जबकि विश्व के कुल जल का 4 प्रतिशत भाग ही भारत में उपलब्ध है। प्रतिव्यक्ति प्रतिवर्ष जल उपलब्धता की दृष्टि से 180 देशों में भारत का 133 वां स्थान है। देश में जल संसाधनों का वितरण भी असमान है। 71 प्रतिशत जल संसाधन 36 प्रतिशत क्षेत्रफल में सिमटे हुए हैं और 64 प्रतिशत क्षेत्रफल में 29 प्रतिशत जल संसाधन उपलब्ध हैं। देश में वर्षा का चक्र भी मौसमी है। जिस कारण देश में जल की मांग और पूर्ति में भारी असंतुलन और जल संकट की स्थिति है।

भारत में जल संकट हेतु प्राकृतिक और आर्थिक दोनों ही कारण उत्तरदायी हैं। देश के कई राज्यों जैसे आंध्रप्रदेश, तमिनाडु, गुजरात व राजस्थान में पेय जल की उपलब्धता वहां की मांग की तुलना में बहुत कम है, जबकि हिमालयी राज्यों में उचित प्रबंधन के अभाव में जल संकट की स्थिति है। जल संकट के लिए जल की मांग और पूर्ति में असंतुलन उत्तरदाई है। जल की मांग लगातार बढ़ रही है जबकि जल की पूर्ति में गिरावट हो रही है। जल मांग मुख्यतः तीन कारणों से होती है।

घरेलू मांग

जल की घरेलू मांग में प्रातः जगने से लेकर रात्री में सोने तक भोजन बनाने व साफ सफाई करने में प्रयुक्त होने वाले जल को सम्मिलित किया जाता है। बीसवीं शताब्दी में विश्व की आवादी में तेजी से वृद्धि के कारण जल की घरेलू मांग द्रुत गति से बढ़ी है। 1950 में विश्व की जनसंख्या 2.5 अरब थी, जो 2022 में बढ़कर लगभग 9 अरब हो गई है। इसी अवधि में भारत की जनसंख्या में 1.30 करोड़ प्रतिवर्ष की दर से 95 करोड़ की वृद्धि हुई है। तेजी से बढ़ती जनसंख्या की घरेलू मांग के कारण उपलब्ध जल स्रोतों पर दबाव बढ़ा है। वर्तमान में देश की जनसंख्या 140 करोड़ है और 2050 तक 1.5 अरब हो जाएगी। नीति आयोग के एक सर्वेक्षण के अनुसार 2030 तक देश में जल की मांग उपलब्ध संसाधनों की दो गुनी हो जाएगी। जिससे भविष्य में गंभीर पेय जल संकट का सामना करना पड़ेगा।

जल की घरेलू मांग बढ़ने का दूसरा कारण शहरी जनसंख्या में वृद्धि होना भी है। पिछली शताब्दी में पूरे विश्व में शहरी जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। 1951 में भारत की शहरी जनसंख्या लगभग 2 प्रतिशत थी जो 2020 में बढ़कर लगभग 35 प्रतिशत हो गई है। शहरी जनसंख्या की आधुनिक जीवनशैली से जल की घरेलू मांग में तेजी से वृद्धि हो रही है। शहरी क्षेत्र के कूड़ा –कचरा निस्तारण, वाहनों को धोने और जल पार्कों व तरण तालों में मनोरंजन के कार्यो में पीने योग्य जल का बहुत बड़ा भाग प्रयोग होता है। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में निरंतर विकास व जीवन स्तर में सुधार के बाद बुनियादी स्वच्छता कार्यों के लिए जल की मांग में तेजी से वृद्धि हुई है।

जल की कृषि मांग

वैश्विक स्तर पर तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक खाद्यान्न उत्पादन के लिए सिंचाई के रूप में जल की कृषि मांग में बहुत अधिक वृद्धि हुई है। विश्व में आहरित कुल जल का 70 प्रतिशत जल कृषि में प्रयोग होता है। भारत में 1950–60 के दशक में देश में व्याप्त खाद्यान्न संकट को दूर करने, बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति व खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भता प्राप्त करने हेतु हरित क्रांन्ति अपनायी गयी। जिस कारण बहुत बड़े असिंचित क्षेत्र को सिंचित क्षेत्र में बदलने से जल की कृशि मांग तेजी से बढ़ी है। भारत की कृशि पारिस्थितिकी की फसलें गेहूँ, गन्ना, धान, जूट, कपास, आदि अधिक सिंचाई की मांग करती हैं, साथ ही गहन खेती, बेमौसमी फसलों के उत्पादन से जल की कृषि मांग लगातार बढ़ रही है। कुल जल मांग का 85 प्रतिशत जल कृषि में प्रयुक्त होता है। देश के 67 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र में 688 बिलियन घनमीटर भूमिगत जल का उपयोग सिंचाई हेतु होता है।

जल की औद्योगिक मांग

पिछली शताब्दी में अर्थव्यवस्थाओं के तीव्र विकास के लिये पूरे विश्व में तेजी से औद्योगीकरण हुआ है। जिससे ऊर्जा की मांग में तेजी से वृद्धि हुई है। ऊर्जा का उपभोग विकास का मापक माना जाता है। साथ ही शहरीकरण और जीवनस्तर में वृद्धि से भी ऊर्जा की मांग बढ़ी है। तकनीकि विकास से अधिकांश घर के कार्यों में मशीनों के प्रयोग से ऊर्जा की घरेलू खपत में लगातार वृद्धि हो रही है। ऊर्जा उत्पादन हेतु जल का प्रयोग हाइड्रो पावर प्लांट्स (एच.पी.पी.) और थर्मल पावर प्लांट्स (टी.पी.पी.) तथा न्यूक्लियर पावर प्लांट्स (एन.पी.पी.) में किया

जाता है। हाइड्रो पावर नवीनीकरण योग्य साधन है। इसमें प्रयुक्त जल का पुनः प्रयोग किया जा सकता है। किंतु विश्व में कुल उत्पादित ऊर्जा का 16 प्रतिशत ही एचपीपी द्वारा पूर्ति की जाती है। शेष पूर्ति ताप विद्युत गृहों व अन्य श्रोतों द्वारा की जाती है। इनमें जल का प्रयोग शीतलन के लिए किया जाता है। विकसित देशों में सर्वाधिक जल उपयोग ऊर्जा उत्पादन में किया जाता है।

भारत में भी आधुनिकीकरण और देश की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऊर्जा उत्पादन में वृद्धि करना आवश्यक है। देश में कुल ऊर्जा का 56 प्रतिशत कोयला आधारित ताप विद्युतगृहों से पूर्ति की जाती है। इनमें भारी मात्रा में जल का उपयोग होता है। जल की कमी से 2008 से 2013 के मध्य देश के 61 कोल आधारित पावर प्लांट्स को बंद करना पड़ा था और पानी की कमी के कारण ही 2013 से 17 के बीच 26287 मिलियन किलोवाट विद्युत उत्पादन नहीं हो सका। देश की ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए जल आवश्यक है और आम जन तक स्वच्छ जल पहुँचाने के लिए ऊर्जा आवश्यक है। देश की कुल औद्यौगिक जल मांग का 88 प्रतिशत जल ऊर्जा उत्पादन में व्यय होता है। देश के ओपन लूप वेट कूलिंग सिस्टम वाले टी.पी.पी. 40 प्रतिशत तक अधिक जल की मांग करते हैं। ऊर्जा उत्पादन के अतिरिक्त विभिन्न उद्योगों द्वारा विविध कार्यो में जल का प्रयोग होता है। औद्यौगिक विकास के साथ ही जल मांग लगातार बढ़ रही है। किसी क्षेत्र में सूखा पढ़ने, आगजनी हो जाने, वनों में आग लग जाने के कारण अमूल्य वन संपदा और जैव विविधता को बचाने, विविध प्रकार के निर्माण कार्यों के लिए आकस्मिक रूप से जल की आवश्यकता होती है। इस समस्त मांग की पूर्ति पीने योग्य अलवणीय जल से होती है। जिस कारण पेय जल स्रोतों पर भारी दबाव पड़ा है और जल संकट की स्थिति का सामना करना पड़ रहा है।

जल की पूर्ति

जल की पूर्ति सतही अपवाह व भूमिगत जल से होती है। सतही अपवाह में जलापूर्ति ग्लेशियरों के पिघलने और वर्षा जल से होती है। पिछली शताब्दी में धरती के तापमान में वृद्धि होने से ग्लेशियरों के पिघलने की दर बढ़ी है। जिससे हिमालयी नदियों में जल की कमी नहीं है,बल्कि हिमालय के तेजी से पिघलने से समुद्र का जलस्तर तेजी से ऊपर उठ रहा है। जिससे अनेक द्वीपों का अस्तित्व खतरे में है। एक शोध के अनुसार भारतीय समुद्र 2.5 मिमी वार्षिक की दर से ऊपर उठ रहा है। किंतु जलवायु परिवर्तन के कारण मौसमी चक्र में व्यापक परिवर्तन हुआ है। परिणामस्वरूप कई क्षेत्रों में सूखा व कई क्षेत्रों में अति वर्षा से विप्लव का सामना करना पड़ रहा है और जलापूर्ति प्रभावित हो रही है।

जल की पूर्ति का दूसरा साधन भूमिगत जल है। पूरे विश्व में लगभग 982 घन किलोमीटर भूगत जल का आहरण प्रतिवर्ष होता है और विश्व की आधी आवादी की पेयजलापूर्ति भूगत जल से होती है। भारत विश्व में सर्वाधिक भूमिगत जल उपयोग करने वाला देश है। वन भूमिगत जल पुनर्भरण का बहुत बड़ा साधन हैं। वन वर्षा जल को अवशोषित कर भूमिगत जल में तो वृद्धि करते है,साथ ही कार्बन अवशोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किंतु वैश्विक स्तर पर और भारत में भी वनों के क्षेत्रफल में लगातार गिरावट आ रही हैं। देश में 1950–80 के बीच 26200 हैक्टेयर वन भूमि को कृषि क्षेत्र में परिवर्तित किया गया। विभिन्न विकास परियोजनाओं के कारण 5000हेक्टेयर से अधिक वन क्षेत्र को साफ करना पड़ा है। जल विद्युत परियोजनाओं, खनन आदि से वनों का काफी नुकसान हो रहा है। नर्मदा सागर परियोजना के कारण बहुत अधिक वन क्षेत्र डूब गया है और पश्चिम बंगाल में खनन के कारण बुक्सा टाइगर रिजर्व खतरे में है। विकास परियोजनाओं से वनों का दोहरा नुकसान होता है। एक ओर बहुत अधिक क्षेत्र विकास की भेंट चढ़ जाता है तो दूसरी ओर इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के पुनर्वास की व्यवस्था भी वन क्षेत्र में करनी होती है। साथ ही देश 80 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या ईधन के रूप में लकड़ी का प्रयोग करती है और आवास, पशुचारा आदि आवश्यकताओं के लिए वनों पर निर्भर है।

परिणाम स्वरूप वनों के निरंतर ह्रास से भमूिगत जल के पुनर्भरण में कमी आई है।

विभिन्न कारणों से जल की मांग में लगातार वृद्धि और पूर्ति में कमी होने से मांग और पूर्ति में असंतुलन के कारण पूरे विश्व में जल संकट गंभीर समस्या बना हुआ है। भारत में भी पेय जल संकट का समाधान एक गंभीर चुनौती है। साथ ही जल प्रदूशण से समस्या और विकट हो गई है। शहरों में रहने वाली आधी आवादी को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध नहीं है। देश के कई बड़े शहरों में भूगत जल समाप्त होने की कगार पर है। जून 2019 चेन्नई में जल संकट के कारण वाटर ट्रेन द्वारा जल प्रबंध करना पड़ा था। अत्याधिक दोहन से भूगत जल का स्तर प्रति वर्ष 1 मीटर नीचे खिसक रहा हैं। विश्व में गंभीर पेय जल संकट का सामना कर रहे शहरों में चेन्नई पहले स्थान पर है। 2050 तक भारत की जनसंख्या 1.5 अरब हो जाएगी और इस जनसंख्या के आवास व खाद्य आवश्यकताओं के लिए बहुत अधिक वन क्षेत्र को साफ करना होगा। जिससे जल की मांग और पूर्ति में भारी असंतुलन हो जाएगा और विशाल जलसंख्या को भयंकर पेयजल संकट का सामना करना पड़ेगा।

पेय जल के आसन्न संकट के निवारण हेतु जल की बचत, स्वच्छता व पुनर्भरण हेतु प्रभावी एवं त्वरित कदम उठाने आवश्यक हैं। अन्यथा भविष्य में गंभीर परिणाम हो सकते हैं। इस हेतु सतत पोषणीय विकास के साथ ही सामुदायिक प्रयास किय जाने आवश्यक है कृषि क्षेत्र में जल की बचत करने हेतु बेमौसमी फसलों के उत्पादन को रोककर और अधिक सिंचाई वाली फसलों के स्थान पर परंपरागत मोटे अनाजों के उत्पादन को बढ़ावा देकर पानी की बचत हो सकती है। साथ ही रासायनिक खादों का कम से कम प्रयोग करके जैविक खादों के प्रयोग से उत्पादन लाभकारी होगा।

औद्यौगिक क्षेत्र की कुल मांग का 88 प्रतिशत जल का उपयोग ऊर्जा उत्पादन में किया जाता है। ऊर्जा उत्पादन के लिए के लिए धीरे–धीरे टीपीपी पर निर्भरता कम करके अक्षय ऊर्जा उत्पादन पर जोर देना होगा। भारत में सौर व पवन ऊर्जा विकास की पर्याप्त संभावनाएं हैं और सरकार का लक्ष्य कार्बन उत्सर्जन में चरणबद्ध रूप से कमी करने से गैरपरंपरागत अथवा नवीनीकरण योग्य संसाधनों से ऊर्जा प्राप्त करना है। इस दिशा में देश में 2022 तक 1 लाख 75 हजार मेगावाट नवीनीकरण ऊर्जा उत्पादन का लक्ष्य रखा है, जिसमें 82,500 मेगावाट क्षमता स्थापित की जा चुकी है। अक्षय ऊर्जा उत्पादन से जल की बचत के साथ ही कार्बन उत्सर्जन पर भी नियंत्रण लगेगा।

भूमिगत जल की बचत करने हेतु इसकी आहरण की सीमा तय करनी होगी और भूमिगत जल पुनर्भरण के प्रभावी प्रयास करने होंगे। उपलब्ध वनों की बचत के साथ ही नये वनों को विकसित करना होगा। वर्षा जल संरक्षण हेतु चाल–खाल कार्यक्रम के द्वारा पूरे देश में परती भूमि पर तालाब बनाकर वर्षा जल एकत्र कर प्रयोग में लाना होगा और वर्षा जल संग्रहण को सामाजिक आंदोलन के रूप में अपनानाकर ही भूमिगत जल की बचत हो सकती हैं। नदियों तालाबों झीलों की स्वच्छता हेतु आमजन को अपनी भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी और सरकारों को भी जल के उचित वितरण की ओर ध्यान होगा। भावी पीढ़ी को जल संकट से परिचित कराने और जल संरक्षण हेतु तैयार करने के लिए विद्यालय स्तर से ही एक विशय के रूप में जल शिक्षा आरंभ करनी होगी। विद्यालयों से लेकर सभी प्रकार के सार्वजनिक व निजी भवनों में अनिवार्य रूप से छत जल संग्रहण टेंक बनाने जैसे प्रभावी कदम उठाकर ही आसन्न जल संकट से उबरा जा सकता है। साथ ही शहरों में उत्पन्न जल समस्या और शहरीकरण की प्रवृत्ति को कम करने के लिए गॉवों में शिक्षा व स्वास्थ्य के साथ ही उन बुनियादी का विकास करना होगा जिनके लिए लोग शहरों की ओर आते हैं।

हिंदी के राजभाषा बनने की विकास यात्रा

अभिषेक कुमार सिंह एवं ब्रह्म प्रकाश
भा.कृ.अनु.परि.- भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भाषा

'भाषा' शब्द संस्कृत के 'भाष' धातु से बना है जिसका अर्थ है बोलना या कहना अर्थात् भाषा वह है जिसे बोला जाए। भाषा को विभिन्न विद्वानों ने अलग–अलग रूप से परिभाषित करने का प्रयत्न किया है। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका के अनुसार भाषा यादृच्छिक भाष प्रतीकों का वह तन्त्र है जिसके द्वारा मानव एक सामाजिक समूह के सदस्य और सांस्कृतिक साझीदार के रूप में एक सामाजिक समूह के सदस्य संपर्क एवं सम्प्रेषण करते हैं। स्वीट ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा मानते थे। सोफ्टिस्ट में विचार तथा भाषा के सम्बन्ध के बारे में लिखते हुए प्लेटो ने कहा था कि विचार तथा भाषा में थोड़ा ही अंतर होता है। विचार आत्मा की मूक अथवा अध्वन्यात्मक बातचीत है तथा वही शब्द जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होते हैं तो वही भाषा कहलाते हैं। ब्लाक और ट्रेगर भाषा को यादृच्छिक भाष् प्रतीकों का तन्त्र मानते है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह सहयोग करता है। वेन्द्रीय भाषा को एक तरह का चिह्न मानते है। वेन्द्रीय का चिह्न से आशय उन प्रतीकों से था जिनके द्वारा मानव अपने विचार दूसरों के समक्ष प्रकट करता है। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं जैसे नेत्रग्राह्य, श्रोत्र ग्राह्य और स्पर्श ग्राह्य। वह वस्तुतः भाषा की दृष्टि से श्रोत्रग्राह्य प्रतीक को ही सर्वश्रेष्ठ मानते थे।

भाषा तथा बोली में अंतर

एक अत्यंत सीमित क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा का स्थानीय रूप बोली अथवा उपभाषा कहलाता है। बोलियों के बारे में एक कहावत अत्यंत प्रसिद्ध है "कोस कोस पर पानी बदले, पाँच कोस पर बानी"। इसका अर्थ है कि प्रत्येक कोस पर पानी तथा प्रत्येक पाँच कोस पर बोली में परिवर्तन स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। प्रत्येक भाषा पहले बोली के रूप में ही विकसित होती है। इसी कारण, भाषा का सीमित, अविकसित और आम बोलचाल का स्वरूप ही बोली कहलाता है। किसी भी साहित्य की रचना बोली से नहीं होती। बोली का कोई लिखित व्याकरण नहीं होता तथा न ही शब्दकोष होता है। बोली के विपरीत भाषा एक विस्तृत क्षेत्र में बोली जाती है। भाषा का एक लिखित व्याकरण तथा शब्दकोष होता है एवं साहित्य भी भाषा में ही लिखे जाते हैं। किसी बोली को संरक्षण देने और अन्य कारणों से यदि इसका क्षेत्र विस्तृत होने लगता है तो उसमें साहित्य भी लिखा जाने लगता है तो वह बोली भाषा बनने की प्रक्रिया से गुजरने लगती है तथा उसका व्याकरण भी निश्चित होने लगता है। विभाषा का क्षेत्र बोली की अपेक्षा अधिक विस्तृत होता है। यह एक प्रदेश अथवा क्षेत्र में प्रचलित होती है। एक विभाषा में स्थानीय भेदों के आधार पर कई बोलियाँ प्रचलित रहती हैं। विभाषा में साहित्यिक रचनाएँ मिल सकती हैं। विभाषा विकसित एवं परिमार्जित होकर आदर्श का रूप ले लेती है। इसी भाषा को राष्ट्रभाषा के नाम से भी जाना जाता है।

प्रायः यह देखा गया है कि विभिन्न विभाषाओं में से कोई एक विभाषा अपने गुण–गौरव, साहित्यिक अभिवृद्धि, जन–सामान्य में अधिक प्रचलन आदि के आधार पर राजकार्य के लिए चुन ली जाती है और उसे राजभाषा के रूप में अधिघोषित कर दिया जाता है। राष्ट्रभाषा सम्पूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने वाली वह भाषा होती है जो प्रायः आधिकाधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जाती है। अधिकांश देशों में प्रायः राष्ट्रभाषा को ही राजभाषा का दर्जा दे दिया जाता है। यद्यपि भारत के संविधान अथवा किसी

अन्य कानून में राष्ट्रभाषा को परिभाषित नहीं किया गया है।

स्वतन्त्रता के पूर्व हिंदी को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न व्यक्तियों द्वारा किए गए प्रयास

भारत के एक बहुभाषायी राष्ट्र होने के बावजूद भी भारत में दीर्घकाल से हिंदी अथवा उसके किसी स्वरूप का देश के बहुत बड़े भाग पर संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग किया जा रहा था। भक्तिकाल में उत्तर से दक्षिण तक, पूरब से पश्चिम तक, अनेकों संतों ने हिंदी में अपनी रचनाएँ की। स्वतन्त्रता आंदोलन में हिंदी पत्रकारिता ने भी हिंदी द्वारा देश के विभिन्न भागों में निवास कर रहे तथा विभिन्न भाषाएँ बोलने वालों को एक सूत्र में बांधे रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गांधी, सुभाष चंद्र बोस, सुब्रहमणम भारती आदि अनेकानेक महापुरुषों ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करना का स्वप्न देखा था। 18वीं शताब्दी में भरतपुर राज्य तथा पूर्वी राजस्थान के कई रजवाड़ों में ब्रजभाषा आधिकारिक कामकाज की भाषा थी। वर्ष 1826 में पंडित युगलकिशोर शुक्ल द्वारा हिंदी का प्रथम समाचार पत्र 'उड़ंत मार्तंड' का कलकत्ता से प्रकाशन आरम्भ किया गया था। वर्ष 1829 में राजा राममोहन राय द्वारा 'बंगदूत' का प्रकाशन आरंभ किया था। यह हिंदी सहित, बंगला, फारसी तथा अंग्रेजी भाषाओं में छापा जाता था। वर्ष 1835 में बिहार में आरंभ हुए हिंदी आंदोलन के प्रयास के परिणामस्वरूप बिहार में वर्ष 1875 में कचहरियों तथा विद्यालयों में हिंदी प्रतिष्ठित हुई। वर्ष 1875 में आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश की रचना हिंदी में ही की। वर्ष 1877 में श्रद्धाराम फिल्लौरी ने 'भाग्यवती' नामक हिंदी उपन्यास की रचना की। वर्ष 1878 में 'भारतमित्र' नामक हिंदी समाचार पत्र का प्रकाशन कलकत्ता से आरंभ किया गया। इसे कचहरियों में हिंदी प्रवेश आंदोलन का मुखपत्र कहा जाता है। वर्ष 1882 में भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हंटर कमीशन नाम से जाने–जाने वाले शिक्षा आयोग के समक्ष गवाही देते हुए हिंदी को न्यायालयों की भाषा बनाने की महत्ता पर जोर दिया था। गुजराती के महान कवि श्री नर्मद (1833–1886) ने भी हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का विचार रखा। वर्ष 1886 में इंस्पेक्टर ऑफ स्कूल्स, भूदेव मुखोपध्याय ने न्यायालयों में फारसी के स्थान पर हिंदी चलाने का आदेश दिया था। वर्ष 1893 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना की गई। जनवरी 1900 से इंडियन प्रेस, प्रयाग से 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ। वर्ष 1905 में बाल गंगाधर तिलक ने काशी नागरी प्रचारिणी सभा के अधिवेशन में देवनागरी को सभी भारतीय भाषाओं की संपर्क भाषा तथा हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का आह्वान किया जिसे देश भर में भारी समर्थन प्राप्त हुआ। वर्ष 1907 में गुरुकुल कॉंगड़ी का महाविद्यालय विभाग खोला गया जिसमें हिंदी 1907 में न्यायमूर्ति शरदचरण मित्र द्वारा एक लिपि विस्तार परिषद की स्थापना की गई एवं देवनागरी लिपि में ''देवनागर'' नामक मासिक पत्र का प्रकाशन आरंभ किया गया।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने वर्ष 1917 में भरूच में गुजरात शैक्षित सम्मेलन में अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में भारत में राष्ट्रभाषा की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा था कि भारतीय भाषाओं में अधिकांश भारतीयों की भाषा होने के कारण हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसे राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाया जा सकता है क्योंकि हिंदी ही समस्त भारत में आर्थिक, धार्मिक एवं राजनीतिक संपर्क माध्यम के रूप में प्रयोग के लिए सक्षम है तथा इसे सम्पूर्ण देश को सीखना भी अत्यंत आवश्यक है। महात्मा गांधी ने देश की राजभाषा चुनते समय प्रयोग करने वाले के लिए भाषा को सरल होने, भाषा के द्वारा सम्पूर्ण देश का आपसी धार्मिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवहार संभव हो सकना, देश के अधिकांश लोगों द्वारा उस भाषा को बोला जाना, देश के लिए भाषा का आसान होना जैसे लक्षण अवश्य होना चाहिए। भारत के संदर्भ में उपरोक्त सभी मानदंडों

पर हमारी हिंदी भाषा बिलकुल खरी उतरती हैं। वर्ष 1918 में मराठी भाषी लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने काँग्रेस अध्यक्ष के रूप में हिंदी को ही भारत की राजभाषा बनाए जाने की घोषणा की गई थी। वर्ष 1918 में महात्मा गांधी द्वारा दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की स्थापना की गई थी। वर्ष 1930 के कांग्रेस अधिवेशन में आयोजित राष्ट्रभाषा सम्मेलन में स्वीकार किया गया था कि देश का अंतर्प्रान्तीय कार्य राष्ट्रभाषा हिंदी में ही होना उचित एवं हितकारी है। वर्ष 1935 में तत्कालीन मद्रास राज्य के मुख्य मंत्री के रूप में सी. राजगोपालचारी ने हिंदी शिक्षा को अनिवार्य कर दिया था।

राजभाषा

किसी भी देश के प्रशासन के कामकाज चलाने की भाषा को राजभाषा की संज्ञा दी जाती है। राजभाषा का पद उस देश के संविधान द्वारा प्रदान किया जाता है। सभी सरकारी कर्मचारी, चाहे उनकी मातृभाषा कोई भी हो, अपने सरकारी कामकाज को राजभाषा में ही करने के लिए बाध्य होते हैं। भारतीय गणराज्य भारत के संविधान के अनुसार शासित होता है जिसे संविधान सभा द्वारा 26 नवम्बर 1949 को पारित किया गया था तथा जो 26 जनवरी 1950 से प्रभावी हुआ। संविधान को प्रभावी करते समय भारत में अंग्रेजी आधिकारिक रूप से केन्द्र और राज्य दोनो स्तरों पर उपयोग में ली जाती थी। संविधान सभा द्वारा लंबी चर्चा के पश्चात 14 सितंबर 1949 को हिंदी को भारत की राजभाषा के रूप में स्वीकारा गया था। इस दिवस की स्मृति को ताजा रखने हेतु प्रतिवर्ष 14 सितंबर हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है। 14 सितंबर 1949 के सायंकाल संविधान सभा में सम्पन्न बहस के समापन के पश्चात जब संविधान का भाषा संबंधी तत्कालीन भाग 14क तथा वर्तमान भाग 17, संविधान का अभिन्न अंग बन गया तब डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने अपने भाषण में बधाई देते हुए कहा ''आज पहली ही बार ऐसा संविधान बना है जबकि हमने अपने संविधान में एक भाषा रखी है, जो संघ के प्रशासन की भाषा होगी। इस अपूर्व अध्याय का देश के निर्माण पर बहुत प्रभाव पड़ेगा।''डॉ. प्रसाद ने संविधान सभा द्वारा अत्याधिक बहुमत से भाषा–विषयक प्रावधानों को स्वीकार करने पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए अपने वक्तव्य के अंत में निम्नलिखित अविस्मरणीय बातें कहीं थीं।

''यह मानसिक दशा का भी प्रश्न है जिसका हमारे समस्त जीवन पर प्रभाव पड़ेगा। हम केंद्र में जिस भाषा का प्रयोग करेंगे उससे हम एक–दूसरे के निकटत्तर आते जाएंगे। आखिर अंग्रेजी से हम निकटत्तर आए हैं क्योंकि वह एक भाषा थी। अब उस अंग्रेजी के स्थान पर हमने एक भारतीय भाषा को अपनाया है। इससे अवश्यमेव हमारे संबंध घनिष्ठतर होंगे, विशेषतः इसलिए कि हमारी परम्पराएँ एक ही हैं, हमारी संस्कृति एक ही है और हमारी सभ्यता में सब बातें एक ही हैं। अतएव यदि हम इस सूत्र को स्वीकार नहीं करते तो परिणाम यह होता कि या तो इस देश में बहुत सी भाषाओं का प्रयोग होता या वे प्रांत पृथक हो जाते जो बाध्य होकर किसी भाषा विशेष को स्वीकार करना नहीं चाहते थे। हमने यथासंभव बुद्धिमानी का कार्य किया है और मुझे हर्ष है, मुझे प्रसन्नता है और मुझे आशा है कि भावी संतति इसके लिए हमारी सराहना करेगी।

संविधान के अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा संबन्धित व्यवस्था की गई है। संविधान की धारा 343 (1) के अनुसार भारतीय संघ की आधिकारिक राजभाषा हिन्दी एवं लिपि देवनागरी है। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त अंको का रूप भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप (अर्थात 1,2,3,4,5,........आदि) हैं। किन्तु इसके साथ संविधान में यह भी व्यवस्था की गई कि संघ के कार्यकारी, न्यायिक एवं वैधानिक प्रयोजनों के लिए अगले 15 वर्षों तक अंग्रेजी का सहायक अथवा गौण आधिकारिक भाषा के रूप में प्रयोग जारी रहेगा। अर्थात संविधान द्वारा यह परिकल्पित किया गया था कि अगले 15 वर्षों में अंग्रेजी को चरणबद्ध तरीके से हटाकर विभिन्न

भारतीय भाषाओं, विशेषकर हिंदी, को उपयोग में लाया जाएगा, लेकिन तब भी संसद को यह अधिकार दिया गया था कि वह विधिक रूप से अंग्रेजी का उपयोग हिन्दी के साथ केन्द्र स्तर पर और अन्य भाषाओं के साथ राज्य स्तर पर चालू रख सकती है। उस समय आगामी 15 वर्षों तक अंग्रेजी भाषा का उपयोग भी आधिकारिक कार्यों के लिए होना था। यह प्रावधान किया गया था कि यदि संसद द्वारा अन्यथा निर्णय नहीं लिया जाता, तब 15 वर्षों के पश्चात अर्थात 26 जनवरी 1965 को अंग्रेजी भाषा का उपयोग आधिकारिक कार्यों के लिए समाप्त होना था। परंतु अहिंदी भाषी राज्यों के विरोध के कारण, संसद द्वारा आधिकारिक भाषा अधिनियम को अभिनीत किया गया जिसमें आधिकारिक कार्यों हेतु अंग्रेजी के उपयोग को हिंदी के साथ–साथ वर्ष 1965 के पश्चात भी जारी रखने की स्वीकृति दी गई। भारत के संविधान में देश के राज्यों को अपनी आधिकारिक भाषा विधिक रूप से घोषित करने की स्वतन्त्रता है।

भारत के विभिन्न राज्यों की आधिकारिक भाषाओं की सूची

संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों के अंतर्गत विभिन्न राज्यों ने अपने राज्य में सरकारी काम–काज के लिए आधिकारिक भाषाएँ घोषित की है। कुछ राज्यों ने एक भाषा को आधिकारिक भाषा का दर्जा दिया है जबकि कई राज्यों में विभिन्न भाषाओं को आधिकारिक भाषाओं की मान्यता दी गई है।

राज्य	आधिकारिक भाषा	अन्य आधिकारिक भाषाऐं
आंध्र प्रदेश	तेलुगू, उर्दू	अंग्रेजी
अरुणाचल प्रदेश	अंग्रेजी	–
असम	असमिया, बोड़ो	बांग्ला (बराक घाटी में)
बिहार	हिंदी	उर्दू
छत्तीसगढ़	हिंदी	छत्तीसगढ़ी
गोवा	कोंकणी, अंग्रेजी	मराठी
गुजरात	गुजराती	हिन्दी
हरियाणा	हिंदी	अंग्रेजी तथा पंजाबी
हिमाचल प्रदेश	हिंदी	संस्कृत
झारखंड	हिंदी	अंगिका,बंगला, भोजपुरी, भूमिज, हो, खड़िया, खोरठा, कुरमाली, कुरुख, मगही, मैथिली, मुंडारी, नागपुरी ओड़िया, संधाली तथा उर्दू
कर्नाटक	कन्नड़	हिंदी
केरल	मलयालम	हिंदी
मध्य प्रदेश	हिंदी	–
महाराष्ट्र	मराठी	–
मणिपुर	मणिपुरी	अंग्रेजी
मेघालय	अंग्रेजी	खासी तथा गारो
मिजोरम	मिजो, अंग्रेजी	–
नागालैंड	अंग्रेजी	–

राज्य	आधिकारिक भाषा	अन्य आधिकारिक भाषाएं
ओड़िशा	ओड़िया	अंग्रेजी
पंजाब	पंजाबी	–
राजस्थान	हिंदी	–
सिक्किम	अंग्रेजी, नेपाली, सिक्किमी, लेपचा	गुरुड़, लिम्बू, मगर, मुखिया, नेवारी, किरौती (राय), शेर्पा तथा तामाड़
तमिलनाडु	तमिल	अंग्रेजी
तेलंगाना	तेलुगू	उर्दू
त्रिपुरा	बांग्ला, अंग्रेजी, ककबरक	–
उत्तर प्रदेश	हिंदी	उर्दू
उत्तराखंड	हिंदी	संस्कृत
पश्चिम बंगाल	बंगला, अंग्रेजी	नेपाली (दार्जिलिंग) तथा कुर्सियांग अनुमंडल में), उर्दू, हिन्दी, ओड़िया, संथाली, पंजाबी, कामतापुरी, राजवंशी, कुरमाती, कुरुख तथा तेलुगू

तथा जनभाषा के रूप में प्राचीन काल से प्रयोग में लाया जाता रहा है। भारत में अंग्रेजों के आगमन से पूर्व अवधी प्रशासन की भाषा के रूप में प्रचलित थी। अवधी हिंदी की एक प्रमुख विभाषा है। मुगल साम्राज्य की स्थापना अप्रैल, 1526 में इब्राहिम लोदी और बाबर के बीच हुए पानीपत के युद्ध के पश्चात हुई थी। इस युद्ध में विजय के पश्चात भारत में दिल्ली सल्तनत के शासन का अंत हो गया था तथा मध्यकालीन भारत में मुगल वंश की नींव रखी गई, जिसके बाद लगभग 18 वीं शताब्दी में देश के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम तक मुगलों ने भारतीय उपमहाद्वीप पर राज किया था। ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के आने तक भारत में मुगलों ने अपना शासन चलाया था। मुगल सम्राटों की राजभाषा आरंभ में फारसी ही थी। कालांतर में उन्होने ईरान के भाषाविदों को भारत में आमंत्रित करके उर्दू को फारसी शब्दों से समृद्ध करके उसे अपनी राजभाषा बना लिया। फारसी के कुछ शब्द मूल अरबी भाषा के थे जो ईरान पर इस्लामिक विजय के पश्चात फारसी में सम्मिलित हो गए। यहाँ से वह पहले उर्दू भाषा में सम्मिलित हुए तथा उसके पश्चात भारत की बोलचाल की हिन्दुस्तानी भाषा से होते हुए हिन्दी में समाहित हो गए।

ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन में न्यायालयों में हिंदी भाषा का व्यापक प्रयोग होता था। वर्ष 1793 में ही यह व्यवस्था कर दी गई थी कि पुलिस प्रशासन से सम्बद्ध नियमों का हिंदी अनुवाद बिहार के मजिस्ट्रेट पुलिस कोतवाल एवं दरोगाओं की नियुक्ति के समय इन्हें दिया जाये। वर्ष 1797 में ही ब्रिटिश संसद ने एक अधिनियम बनाकर यह व्यवस्था कर दी थी कि भारत संबंधी विधि के भारतीय भाषाओं में अनुवाद सरकारी तौर पर प्रकाशित किए जाएँ। वर्ष 1803 में गवर्नर जनरल ने कानून बनाकर यह व्यवस्था कर दी थी कि हिंदी भाषी क्षेत्रों में लागू होने वाले कानूनों के हिंदी अनुवाद सरकारी तौर पर प्रकाशित किए

जाएँ। वर्ष 1804 में पुलिस प्रशासन से सम्बद्ध नियमों का हिंदी अनुवाद बिहार के मजिस्ट्रेट पुलिस कोतवाल एवं दरोगाओं की नियुक्ति के समय प्रदान करने की व्यवस्था सभी हिंदी भाषी क्षेत्रों में लागू कर दी गई। काजियों तक से संबन्धित सभी कानूनों का हिन्दी अनुवाद सभी काजियों को दिये जाने का प्रावधान कर दिया गया था। इन काजियों का कार्यसाधक हिंदी की अच्छी जानकारी रखने वाला उच्च स्तर का एक अंग्रेज अधिकारी होता था। यह न्यायालय उस समय सदर दीवानी अदालत के नाम से जाना जाता था तथा उसका न्यायाधीश अंग्रेज ही होता था। हिंदी भाषी क्षेत्रों को भेजी जाने वाली न्यायालय संबंधी सभी आदेशिकाओं, सम्मानों, उद्घोषणाओं आदि हेतु भी हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य था।

सिपाही विद्रोह के पश्चात राजनीतिक कारणोंवश अंग्रेज शासकों की भाषा संबंधी नीतियों में आमूल परिवर्तन के लक्षण परिलक्षित होने लगे थे। कार्यालयों में अंग्रेजी टाइपराइटरों के प्रचलन शुरू होने से शासन के देशी भाषाओं में दिए जाने वाले आदेश भी अंग्रेजी में ही निर्गत होने लग गए। बिहार में वर्ष 1867 में अदालती भाषा के विरोध में व्यापक जन आंदोलन हुआ था। वर्ष 1857 में राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन को कुचलने के लिए अंग्रेजों ने हिंदुओं तथा मुसलमानों में विद्वेष उत्पन्न करने के लिए हिंदी तथा उर्दू भाषा का सहारा लिया था। वर्ष 1873 में भारतेन्दु हरिश्चंद्र की पत्रिका "हरिश्चंद्र मैगजीन" का प्रकाशन आरंभ हुआ। वर्ष 1893 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना के पश्चात वाहवान से प्रकाशित "देवनागरी भजन" पुस्तक के माध्यम से श्रीगौरीदत्त ने "अरे कोई तो बीड़ा उठाओ, देश में नागरी फैलाओ" का आहवान किया था। महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमधन आदि जैसे साहित्यकारों के प्रयत्नों से 18 अप्रैल 1900 को उत्तर प्रदेश की सरकार ने कचहरियों में नागरी को फारसी के समान ही अधिकार प्रदान करके नागरी आंदोलन को गति दी थी।

इस प्रकार 1857 से आरंभ हुई समस्या से इस समय तक हिंदी, उर्दू एवं हिंदुस्तानी भाषाओं के रूप में हिंदी भाषा के तीन रूप अस्तित्व में आ गए थे। वर्ष 1937 में आठ प्रांतों में कांग्रेसी मंत्रिमंडलों के कार्यभार संभालने के पश्चात राष्ट्रभाषा की उन्नति' विषय सभी प्रान्तों में चर्चा का मूल विषय बन गया। इस क्रम में हिंदी–उर्दू–हिंदुस्तानी का संघर्ष आरंभ हो गया। वर्ष 1946 में जब भारत की राजनीतिक समस्या को हल करने के उद्देश्य से ब्रिटिश सरकार ने कैबिनेट मिशन की स्थांपना की। इस कैबिनेट मिशन ने संविधान पर चर्चा करते हुए राजभाषा पर ही गहन विचार–विमर्श किया था। इसी मिशन द्वारा स्वतंत्र भारत के लिए संविधान तैयार किए जाने के लक्ष्य से 'संविधान सभा' का गठन किया गया। इस संविधान सभा द्वारा अनेकों समितियों का भी गठन किया गया। इन समितियों में से एक प्रारूप समिति ने आपसी गहन विचार–विमर्श के उपरांत 21 फरवरी 1948 को संविधान का प्रारूप तैयार किया गया जिसे परिमार्जित करते हुए 26 नवंबर 1949 को संविधान सभा द्वारा स्वीकार कर लिया गया तथा 26 जनवरी 1950 को जब भारत को गणतन्त्र घोषित किया गया, देश में यह संविधान लागू हो गया।

स्वाधीनता आंदोलन के समय से ही हिन्दी तथा हिंदुस्तानी को लेकर चल रहा आंदोलन इस समय और भी अधिक मुखर हो गया। 9 जनवरी 1948 को संविधान सभा की बैठक में इस मुद्दे पर आरंभ हुई चर्चा में हिंदी के समर्थन में श्री घनश्याम सिंह गुप्त ने अपने तर्क प्रस्तुत किए जबकि हिंदुस्तानी का समर्थन करते हुए श्री मोतुरी सत्यनारायण ने श्री गुप्त के तर्कों का खंडन करते हुए देश में हिंदुस्तानी के अस्तित्व को सिद्ध करते हुए हिंदुस्तानी को ही भारत की राजभाषा बनाए जाने की वकालत की। अहिंदी भाषी प्रदेशों का प्रतिनिधित्व करते हुए श्री एम. बी. कृष्णमूर्ति ने देवनागरी में लिखी हिंदी को ही राजभाषा के रूप में स्वीकारने की स्वीकृति दी।

दूसरी तरफ अंकों को लेकर भी सभा के सदस्य एकमत नहीं थी। राजश्री टंडन तथा सेठ गोविंद दास के समर्थकों का मानना था कि संविधान में नागरी अंक स्वीकृत किए जाने चाहिए। वहीं पंडित जवाहरलाल नेहरू के प्रतिनिधि वाले दल का मानना था कि अरबी रोमन शताब्दी में ही अरब गए थे। जो वहाँ से आगे जाकर रोमन अंकों में परिवर्तित हो गए। उनका तर्क था कि क्योंकि रोमन अंक अंतर्राष्ट्रीय अंक का रूप धारण कर चुके हैं। अतः भारत की राजभाषा के रूप में हिन्दी के साथ–साथ देवनागरी तथा रोमन अंकों को ही स्वीकार किया जाना चाहिए। 6 व 7 अगस्त 1949 को 'राष्ट्रभाषा व्यवस्था परिषद' के अधिवेशन में सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित किया गया कि देवनागरी लिपि में लिखित हिंदी को ही देश की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया जाए। परंतु अंकों को लेकर कोई सहमति नहीं बन सकी। बाद में अंतर्राष्ट्रीय रोमन अंकों के साथ देवनागरी में लिखित हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकृति दे दी गई।

संविधान में राजभाषा के रूप में हिंदी को स्थान मिला परंतु व्यावहारिक दृष्टि से संविधान के उपबंधों के कारण हिंदी को समय–समय पर अनेक भाषीय विवादों का केंद्र बिन्दु बनने के कारण इसे गंभीर विरोध का सामना भी करना पड़ा है। तब से अब तक भारत सरकार के अनवरत प्रयासों के बावजूद भी राजभाषा के रूप में हिन्दी की स्थिति बहुत संतोषजनक स्थिति तक नहीं पहुँच पायी है। इसी कारण भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 [खंड (2) में किए गए प्रावधान के अनुसार 27 मई 1952 को राष्ट्रपति ने एक आदेश जारी किया। इस आदेश के द्वारा विभिन्न राज्यों के राज्यपालों, उच्चतम न्यायालयों के न्यायाधीशों तथा उच्च न्यायालयों की नियुक्तियों के अधिपत्रों में संघ के सरकारी प्रयोजनों हेतु अंग्रेजी भाषा के साथ–साथ देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत किया गया। 3 दिसंबर 1952 को राष्ट्रपति महोदय ने पुनः एक आदेश जारी करके जनता के सदस्यों के साथ पत्राचार, प्रशासन–प्रतिवेदनों, शासकीय पत्रों, संसदीय प्रतिवेदनों, शासकीय प्रस्तावों, वैधानिक अधिनियमों, हिंदी को राजभाषा के रूप में स्वीकार करने वाली राज्य सरकारों के साथ पत्राचार, संधियों और समझौतों, देश की सरकारों, उनके दूतावासों तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ पत्राचार तथा राजनयिक तथा वाणिज्यिक दूतावासों के अधिकारियों तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के भारतीय प्रतिनिधियों के पास भेजे जाने वाले औपचारिक अभिलेखों में अंग्रेजी भाषा के साथ–साथ हिंदी भाषा का भी प्रयोग आवश्यक बनाया गया।

भारत को 15 अगस्त 1947 को मिली स्वतन्त्रता के पश्चात राज्यों का गठन शुरू हुआ। वर्ष 1947 में भारत में 565 असम्बद्ध रियासतें सम्मिलित थीं। वर्ष 1947 तथा 1950 के बीच सभी पूर्व स्वतंत्र रियासतों का इस प्रक्रिया में विलय हो गया। ये रियासतें नए राज्यों में परिवर्तित हो गई। विलय से इंकार करने के पश्चात कुछ राज्यों को संघ में सम्मिलित होने के लिए मजबूर होना पड़ा। आजादी के पश्चात से ही कई बार राज्यों के पुनर्गठन की मांग उठनी शुरू हो गई थी। स्वतंत भारत का प्रथम भाषावार राज्य 1 अक्टूबर 1953 को मद्रास के उत्तरी भाग के तेलुगू भाषी क्षेत्रों को आंध्र राज्य में मिलाकर आंध्र प्रदेश नामकराज्य स्थापित हुआ। इस आंदोलन के परिणामस्वरूप भारत सरकार ने 22 दिसंबर 1953 को न्यायाधीश फजल अली की अध्यक्षता में प्रथम राज्य पुनर्गठन आयोग की स्थापना की। इस आयोग के तीन सदस्य न्यायमूर्ति फजल अली, हृदयनाथ कुंजरू तथा के. एम. पाणिक्कर थे।

कालांतर में संविधान के अनुच्छेद 344 (4) के अनुसार राजभाषा आयोग के प्रतिवेदन पर विचारार्थ हेतु 30 सांसदों (लोक सभा के 20 तथा राज्य सभा के 10) की एक संसदीय समिति का गठन किया गया। श्री गोबिन्द बल्लभ पंत की अध्यक्षता में डेढ़ वर्षों तक गहन विचार–विमर्श के उपरांत इस समिति ने अपना प्रतिवेदन 8 फरवरी

1959 को राष्ट्रपति के सम्मुख प्रस्तुत किया। राजभाषा आयोग की संस्तुतियों पर संसदीय समिति की राय को दृष्टिगत रखते हुए भारतीय संविधान के 344 अनुच्छेद खंड (6) द्वारा प्रदत्त अधिकारों का प्रयोग करते हुए राष्ट्रपति ने 27 अप्रैल 1960 को संघ की राजभाषा, उसके प्रवेश तथा प्रयोग के संबंध में आदेश जारी किया। इस आदेश के निर्गत होने के उपरांत ही सही अर्थों में सभी सरकारी कार्यालयों में कामकाज हिंदी भाषा में आरंभ हुआ। ये आदेश ही वास्तव में भारत सरकार की राजभाषा नीति के आधार स्तम्भ हैं क्योंकि इन आदेशों में शब्दावली, प्रशासनिक संहिताओं तथा अन्य कार्यविधि साहित्य का अनुवाद, कर्मचारी वर्ग को हिन्दी प्रशिक्षण, हिन्दी प्रचार–प्रसार, सरकारी कार्यालयों में हिंदी अनुवादक व हिंदी अधिकारी की नियुक्ति जैसे सभी क्षेत्रों को सम्मिलित कर लिया गया था। इसी अनुक्रम में 20 मार्च 1961 को गृह मंत्रालय में एक कार्यालय ज्ञापन द्वारा वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण, प्रशिक्षण तथा अनुवाद के संबंध में उपाय सुनिश्चित करते हुए सभी मंत्रालयों में अधिकाधिक कार्य राजभाषा में करने का अनुरोध किया गया था।

अप्रैल 1963 में राजभाषा अधिनियम का प्रारूप निश्चित किया गया तथा उसे पारित करने के उद्देश्य से इसे संसद के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। यह अधिनियम संसद द्वारा 3 मई 1963 को पारित किया गया। इस अधिनियम के मुख्य उपबंधों के अनुसार संसद तथा राज्य सरकारों की विधान सभाओं की सभी कार्यवाहियों की भाषा क्रमशः हिंदी तथा प्रादेशिक भाषाएँ होंगी तथा उनका प्राधिकृत अंग्रेजी अनुवाद देना अनिवार्य होगा। इस अधिनियम की धारा 5 उपधारा 2 के अनुसार संसद में सभी विधेयक अंग्रेजी और हिंदी में एक साथ प्रस्तुत किए जाएंगे तथा दोनों समान रूप से प्रामाणिक माने जाएंगे।

राजभाषा अधिनियम द्वारा केंद्र सरकार को यह अधिकार दिया गया था कि वह अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से नियम बनाए। वर्ष 1976 में केंद्र सरकार ने राजभाषा नियम बनाए। इन नियमों के अंतर्गत भाषा के आधार पर राज्यों को 'क','ख' व 'ग' तीन वर्गों में विभाजित किया गया। तदनुसार 1976 में संसदीय राजभाषा समिति का गठन किया गया। इस समिति ने अपने अधिकारों का प्रयोग करते हुए तीन उपसमितियों का गठन किया, जिन्हें प्रश्नावली उपसमिति, विधि उपसमिति तथा साक्षी एवं आलेख उपसमिति का नाम दिया। वर्ष 1976 में इन उपसमितियों ने निरीक्षण का कार्य आरंभ किया। संसदीय राजभाषा समिति ने पाँच प्रतिवेदन प्रस्तुत किए हैं। यह प्रतिवेदन वर्ष 1987से 1989 के मध्य प्रस्तुत किए गए। संघ लोक सेवा आयोग में हिंदी के साथ ही साथ क्षेत्रीय भाषाओं को भी मान्यता दी जाये। उन्हें परीक्षाओं का माध्यम बनाया जाए। वर्ष 1954 में काँग्रेस ने यह प्रस्ताव पारित किया। बाद में राजभाषा आयोग तथा संसदीय कार्य समिति ने इसे मान लिया। वर्ष 1979 में सिविल सेवाओं में भारतीय भाषाओं को माध्यम का स्थान मिल गया, लेकिन अंग्रेजी का एक अनिवार्य पक्ष रखे जाने का विरोध अब तक चल रहा है। राजभाषा विभाग द्वारा कंप्यूटर में हिंदी कामकाज को प्रोत्साहित करने के लिए अनेक योजनाएँ 25 जुलाई 9194 से शुरू की गई थी।

राजभाषा नीति का अनुपालन केवल कर्मचारियों की अन्तः प्रेरणा के सहारे नहीं कराया जा सकता। इसके संबंध में स्पष्ट विधि निषेध लागू किए जाने चाहिए। जब तक प्रोत्साहन के साथ–साथ दंड–विधान निर्धारित नहीं किया जाएगा तब तब उसका अनुपालन सुनिश्चित नहीं हो पाएगा। अतः राजभाषा का स्वतंत्र सृजनात्मक स्वरूप स्थापित किया जाए ताकि वह कृत्रिम, दुरूह तथा उलझाऊ झूठी भाषा न बने।

कहानी / कविता

COLDWATER RECIRCULATORY
AQUACULTURE SYSTEM
ICAR-DCFR
BHIMTAL, NAINITAL, UTTRAKHAND

ननिहाल की सैर

रमेश सोमवंशी
ए-336, राजेन्द्र नगर, बरेली, उत्तर प्रदेश

सुबह का समय था। हम सब तांगे में बैठकर लखनऊ के सदर बाजार से डालीगंज जा रहे थे। रास्ते में रेल लाईन के पार पुराना किला, हुसैनगंज चौराहा, ओडियन सिनेमा आदि होते हुए हम केसरबाग पहुंचे। केसरबाग चौराहे पर बहुत भीड़ थी। वहां से तांगा चौक की ओर बढ़ा और फिर पक्का पुल होते हुये डालीगंज की राह पकड़ी जो यहां से बहुत दूर नहीं था। तांगे में हम सात–आठ भाई–बहन तथा हमारी अम्मा बैठी हुयीं थीं। हम लोग गर्मी की छुट्टियों में बक्सी के तालाब के पास स्थित गांव में ननिहाल जा रहे थे। साथ ही साइकिल पर हमारे बड़े मामा गजराज चल रहे थे। डालीगंज में इक्का–तांगा स्टैंड पर हमारा तांगा रूका। मुन्ना तांगे वाला तांगे से नीचे उतरा और बोला–लो भौजी, डालीगंज आ गया। हम सभी तांगे से नीचे उतरे व सड़क के किनारे खड़े हो गये। हमारे बक्से तथा झोले भी उतारे गये। हमारी अम्मा ने तांगे वाले को दो रूपया किराया दिया। मुन्ना तांगे वाला बोला –अच्छा भौजी, सलाम। सबका ख्याल रखना। खुदा हाफिज।

इस बीच हमारे बड़े मामा गजराज आ गये। वे बोले–दिदिया, भोने बैलगाड़ी लेकर आ रहे हैं। थोड़ी देर में हमारे छोटे मामा भोने बैलगाड़ी लेकर आ गये। उन्होंने हमारी अम्मा को देखकर उनके पैर छुये और बोले –कैसी हो दिदिया? ठीक हो। हांठी कहैं–अम्मा ने जबाब दिया। वे बोले–जीजा नहीं आये। अम्मा बोलीं–भईया उनका ऑफिस है। हम ने देखा बैलगाड़ी में एक साफ दरी बिछी हुयी थी। बड़े बच्चे पीछे से बैलगाड़ी में चढ़ गये। हम लोग इसमें बैठ गये। छोटे मामा ने बैलगाड़ी में बैल जोते। उन्होंने हमें थोड़ा आगे–पीछे करके गाड़ी का संतुलन सुधारा। खरामे–खरामे गाड़ी सीतापुर रोड़ पर अपनी मंजिल की ओर चल पड़ी।

डालीगंज एक घनी आबादी वाला क्षेत्र था। सड़क के किनारे परचूनी की पक्की दुकानों के अलावा सब्जी, फलों की दुकाने व ठेले खडे थे। लोग साईकिलों से आ–जा रहे थे। डालीगंज बाजार पीछे छूट गयाा। धीरे–धीरे मड़ियांव का ग्रामीण क्षेत्र शुरू हो रहा था। बैलगाड़ी चूँ–चाँ करके आगे बढ़ रही थी। छोटे मामा बैलों को हांक रहे थे। वे तरह–तरह की आवाजें निकाल रहे थे। ये आवाजें या तो वे ही समझ सकते थे या बैल। वे कह रहे थे – दादा, बाबा। बैलों के धीरे होने पर वे कहते थे –तेरी तो बधिया, चल रे। फिर वह उन्हे एक चाबुक जमा दे रहे थे आदि–आदि। हमारे लिये यह बिल्कुल नया अनुभव था। यह हमारी पहली बैलगाड़ी यात्रा थी।

सीतापुर रोड़ बहुत चौड़ था। मार्ग के दोनों ओर आम, जामुन, नीम, पाकड़ आदि के छायादार व फलदार वृक्ष लगे हुये थे। सड़क के दायीं ओर छोटी रेल लाईन थी व बायीं ओर गांव, बाजार व इक्का–दुक्का दुकानें थीं। तीन मील चलने के पश्चात् बड़े मामा एक हलवाई की दुकान पर रूके। छोटे मामा ने भी बैलगाड़ी सड़क के किनारे रोकी। बड़े मामा मिठाई लेकर आये। हमको पेड़ा खाने को दिया गया। यह बहुत चीनी वाला तथा खूब मीठा था। हमने हैंड पम्प का ठंडा पानी पिया। छोटे मामा ने बैलों को भूसा खिलाया व बाल्टी से पानी पिलाया। इस बीच बैल भी थोड़ा सुस्ता लिये। थोड़ा विश्राम करने के पश्चात् यात्रा पुनः प्रारम्भ हुयी। अब ग्रामीण क्षेत्र प्रारम्भ हो गया था। सड़क के बायीं ओर खेत व आम के बाग दिख रहे थे। गर्मी का समय था अतः आम के पेड़ फलों से लदे थे। खेतों में गेहूँ की फसलकटी पड़ी थी। कहीं–कहीं खलिहानों में बैलों से गेहूँ की मड़ाई चल रही थी। हम सभी को ये सब देखकर बहुत अच्छा लग रहा था। छोटे मामा तथा अम्मा

हमें इसके बारे में जानकारी दे रहे थे। अंततः छठा मील नामक स्थान आ गया। यहां से सड़क के बायीं ओर उतरकर, कच्चे मार्ग पर, हमें अपने ननिहाल के गांव जाना था। आगे की यात्रा और अधिक रूचिकर तथा अविस्मरणीय होने वाली थी।

छठे मील के आगे हमारी ननिहाल का गांव 3–4 मील दूर था। यह दूरी बहुत अधिक तो नही थी किन्तु आगे का मार्ग कच्चा था तथा रास्ता खेतों, बागों व गांव के गलियारों के बीच से होकर जाता था। छोटे मामा ने पक्की सड़क के किनारे खड़ी बैलगाड़ी को एक हल्के ढ़लान वाले रास्ते से धींरे से नीचे उतारा। यह रास्ता कच्चा, असमतल व गढ़ढे युक्त था। अतः बैलगाड़ी ज्यादा हिचकोले खा रही थी। इससे हमारी छोटी बहन लक्ष्मी डर गयी व चिल्ला कर रोने लगी–गिरे–गिरे, बचाव–बचाव। फिर एक बड़ा गढ़ढा आया व हमें जोर का झटका लगा। वह फिर जोर से चिल्लायी –अब की बार तो जरूर गिर जायेंगे। सब लोग हंसने लगे। मामा बोले– शहरूआ बढ़े डरपोक होते हैं। अम्मा बोली– भईया बच्चे डर रहे हैं। हम इनको साथ लेकर पैदल चलते हैं। मामा बोले –ना हीं दिदिया, इससे हमरी बड़ी बेईज्जती हुई ये। सब कहियें प्रधानजी की बहिनी पैदल जा रही हैं। अच्छा दिदिया अई साकरो, लक्ष्मी का आगे बैठा दो, कम झटका लगिहें। लक्ष्मी आगे बैठा दी गयी। उसने बैलगाड़ी के साइड का बांस कस के पकड़ लिया और वह फिर नहीं रोई। हमने भी साइड के डंडे कसके पकड़ रखा था।

दादा, बाबा की आवाजों के साथ छोटे मामा, बैलगाड़ी हांक रहे थे। कच्चे पथ पर बैलगाड़ी चलने के कारण थोड़ी धूल उड़ रही। पथ के दोनों ओर खेत थे व अधिकांश खेतों से गेहूँ की फसल कटकर खलिहान में रखी हुयी थी। कहीं–कहीं उन पर बैलों को चला कर मड़ाई कर गेहूं निकाला जा रहा था। समीप गेहूं के कटे गट्ठर रखे हुये व भूसे के विशाल ढेर थे। कहीं–कहीं स्त्रियां सूप से गेहूं व भूसा अलग कर रहीं थी। हवा से भूसा उड़कर एक ओर थोड़ा दूर व गेहूं समीप नीचे गिर रहा था। हमने किसानों को खलिहान में काम करते पहले कभी नहीं देखा था। ये दृश्य आम थे। कहीं–कहीं ट्यूब बेल से खेतों की सिंचाई चल रही थी। ट्यूबबेल की मोटी जल धारा में किसान व उनके बच्चे नहा रहे थे। वे नंगे बदन व सिर्फ जांघिया (अंडरवियर) पहने थे। बच्चे एक–दूसरे पर पानी ड़ालकर आपस में खिलवाड कर रहे थे। ट्यूबबेलों के पास खरबूजे व सब्जियों के खेत थे। खेतों में खरबूजों की हरी–भरी बेलें फैली हुयी थीं। उनमें छोटे–छोटे, कच्चे–पक्के, हरे–पीले रंग के बहुत से खरबूजे लगे हुये थे। कुछ कृषक खरबूजे तोड़ रहे थे। खेतों के किनारे खरबूजों के ढ़ेर लगे थे। खराब व सड़े–गले खरबूजे एक ओर पड़े थे। इनमें से एक किसान हमारे छोटे मामा को जानता था। वह ऊंची आवाज में बोला –कहो हो भोने, कहां की पल्टन है? मामा बोले–हमरी दिदिया और भांजा और भांजी हैं। बच्चा पार्टी ननिहाल जा रही है। गर्मी की छुट्टी मनाने। दादा–बाबा कह कर वे बैल हांकने लगे। हमारी दूसरी बहन कृष्णा बोली–मामा खरबूजा खायेंगे। मामा बोले– बिटिया अपने खेत के खरबूजा खिलायेंगे। मढ़ियांव के खरबूजा पूरे इलाके में बहुत प्रसिद्ध हैं।

खेतों को पीछे छोड़ते हुय बैलगाड़ी लगातार आगे बढ़ रही थी। चूं, चरर, मरर की आवाज हो रही थी। बैलों के गले की घंटी बज रही थी। हल्की हवा चल रही थी जो कि अब थोड़ी गरम हो रही थी। दूर एक गांव के घरव पेड़ दिख रहे थे। कहीं–कहीं बड़े लोग या बच्चे, गाय–भैंस या बकरी चरा रहे थे। ये लोग हमारी बैलगाड़ी को बड़े ध्यान से देख रहे थे जैसे हम लोग कोई अजूबा हों। थोड़ी दूर पर आम के बहुत से पेड़ दिख रहे थे। मामा बोले– ये राम सिंह का आम का बाग है। यहां के चुसुआ (चूसने वाले) आम बहुत मीठे होते हैं। हमने ध्यान से देखा कि आम के पेड़ छोटे–छोटे, हरे–पीले रंग के आमों से लदे

हुये थे। कुछ आम पक गये थे। बाग में एक झोपड़ी थी जिसमें बाग के मालिक रहकर बाग की रखवाली कर रहे थे। वे थाली बजाकर तोते आदि उड़ा रहे थे ताकि वे आमों को खाकर नष्ट न करें। आमों से लदे पेड़ों को देखकर आनंद आ गया।

अब गांव कितनी दूर है? मैंने मामा से पूछा। वे बोले– वो नाक की सीध पर सामने दूर जो पेड़ दिख रहे हैं बस उन्हीं के पीछे अपना गांव हैं। बस 15–20 मिनट में हम पहुंच जायेंगे। यह कहकर उन्होंने बैलों को ललकारा व हांका। बैल तेजी से चले। दादा, बाबा, चलरे बधिया। चारों ओर खुला वातावरण, ताजी हवा, नीला आसमान, खेत, पेड़ व सरल ग्रामीण लोग यह सब कुछ हमारे भीड़–भाड़ वाले लखनऊ शहर से बहुत अलग था। ग्रामीण परिवेश सुन्दर व अच्छा लग रहा था। मैं मैथिलीशरण गुप्त की कविता ''अहा जीवन भी क्या है ! क्यों न इसे सब का मन चाहे''– गा उठा। हमारी बैलगाड़ी पल्हरी गांव के समीप पहुंच रही थी। गांव के चारों ओर आम के बाग थे अतः घर स्पष्ट नहीं दिख रहे थे। छोटे मामा बता रहे थे–दिदिया यह हमरा आम का बाग है। यह दीनदयाल का खेत है। यह सरकारी ट्यूबबेल है आदि–आदि। बाग पारकर अब गाड़ी गांव की बाहरी सीमा में थी। अब हमारे मामाओं का घर दिख रहा था। उनके घर के सामने सब्जियों का बाड़ा, पशुओं का छप्पर, नीम, कण्डैल आदि के पेड़ थे। घर के दोनो ओर तालाब थे। मकान कच्चे व मिट्टी के बने थे। सामने की ओर चबूतरा तथा छप्पर थे। खूंटों में गाय, बैल, भैंस आदि बंधे थे। जगह–जगह गोबर पड़ा था। घर के सामने चारपाईयां पड़ी थीं। कोई–कोई सफाई या जानवरों को भूसा डाल रहा था। हमारी ननिहाल के बच्चों ने दूर से आती बैलगाड़ी देख लिखा। वे खुशी से चिल्लाते हुये हमारी ओर भागे। फूफू आ गयीं, फूफू आ गयीं। फूफू नमस्ते। सभी बहिनिन और भईयन को राम–राम। अत्याधिक खुशहाल व प्रसन्नता का माहौल था। गाड़ी घर के सामने लगी। तब तक सभी मामियां, भाभियां व अन्य लोग आ गये। हमें गाड़ी से नीचे उतारा गया। मामियों, भाभियों व ममेरी बहनों ने हमारी अम्मा के पैर छुये व आपस में खुशी से गले मिलीं। उन्होंने पूछा–कैसी हो दिदिया? अच्छी हैं–अम्मा बोलीं। आप सब अच्छी हो–अम्मा ने पूछा। हम बच्चों ने बड़ों के पैर छुये। हमे जीते रहो का आर्शीवाद मिला।

हमने बड़े मामा के घर में प्रवेश किया। हम लोग चारपाईयों पर बैठ गये। उन पर नयी दरियां बिछीं हुयीं थीं। माई(मामी) ने शकर व नीबू का शरबत (रस) बनाया। कांसे के गिलास में हमे शरबत दिया। साथ ही हमे लईया–चना तथा गुड़ भी खाने को दिया। हमे भूख लगी थी अतः यह खाने में बहुत अच्छा लगा। मामी व अम्मा बातें कर रहीं थीं। हमारे ममेरे भाई व बहन हमें अपने गांव का हाल सुना रहे थे। दोपहर हो गयी थी। थोड़ी देर में माई ने कहा– खाना तैयार है। हम सभी बच्चों को चौके के सामने वाले बरामदे में पिढ़ई (पीढ़े) पर बैठाया गया। हमने देखा चौके में चूल्हा जल रहा था। उसमें लकड़ियां लगी थीं तथा थोड़ा धुंआ उठ रहा था। माई ने फुंकनी से चूल्हे में हवा फूंकी तथा चूल्हे की आग को तेज किया तथा वे रोटी सेंकने लगीं। हमारे सामने थाली, कटोरी, गिलास आदि रख दिये गये थे। तभी भाभी ने कटोरियों में अरहर की दाल व कटहल की सब्जी परोसी। दाल में देशी घी डाल दिया। थोड़ा चावल दिया व गरम–गरम घी लगी, फूली–फूली रोटी दीं। साथ आम व पुदीना की हरी चटनी भी। खाना बहुत स्वादिष्ट था। आज भी 55 वर्षो बाद उसका स्वाद मुंह में आता है। हम लोगों ने बड़े मन से रोज से जादा खाना खाया। बाद में घर के पुरुषों तथा अन्त में सभी महिलाओं ने भोजन किया।

शाम को हमारे ममेरे भाई कुंवर ने कहा–चलो सबको गांव घुमा लायें। हम सभी लोग उनके साथ चल दिये। घर के पीछे एक बरगद का बहुत पुराना छायादार पेड़ था। उसकी शाखायें जमीन पर लटक रही थीं। यहां बहुत

शीतल वातावरण था। उसके चारों ओर एक बहुत बड़ा चबूतरा था जिसके ऊपर व आस–पास चारपाईयों पर बुजुर्ग लोग बैठे थे। कुछ लोग हुक्का पी रहे थे। वहीं पास में एक बड़ा सा पक्का कुंआ था। कुयें के दोनो ओर छोटे खंबे तथा एक गरारी (पुली) लगी हुयी थी। हमने कुंये में झांककर देखा। वह बहुत गहरा था। बहुत लोग यहां से पानी भरकर अपने घरों को ले जाते थे। यहां लोग न हा भी रहे थे। कुयें के पास एक पतली सी कच्ची नाली थी जिससे बेकार का बचा हुआ पानी एक क्यारी में जा रहा था। वहां बहुत सा हरा भरा पुदीना लगा हुआ था। हम लोग गांव की गलियों में घूम रहे थे। लोग हमारे बारे में पूंछ रहे थे। कहो हो कुंवर, कहां की बच्चा पार्टी है? का लखनऊवा हैं? हां, हमरी फूफू के बेटा व बेटी हैं। गर्मी की छुट्‌टी में गांव घूमने आये हैं। अच्छा, का राम कली आयीं हैं? ई उनके के बिटवा व बिटियां हैं।

हम लोग एक घर के सामने रूके। कुंवर भईया बोले–ये भगत मामा की दुकान है। नमक खरीदना है। हम सब सीड़ियों से दुकान के चबूतरे पर चढ़ गये और बोले–मामा नमस्ते। मामा बोले–अरे लखनऊ वाले बहिना–बहिनी। खुश रहो, खुश रहो। मैंने देखा दुकान कोठरीनुमा कमरा है। टीन के डिब्बों में सामान रखा है जैसे अरहर की दाल, नमक, शकर, गुड़, बताशे, बीडी, सिरगेट, तम्बाकू, मिट्‌टी का तेल आदि। यहां कुछ चींटे भी घूम रहे थे। फर्श पर दूसरी ओर गेहूं का ढ़ेर था। एक किनारे बोरों में आलू व प्याज रखे थे। यानि यहां अति आवश्यक घरेलू उपयोग का सारा सामान उपलब्ध था। तभी घूंघट काढ़े दो–तीन औरतें आयीं। व बोलीं–दऊवा पालागी। उनके हाथों की टोकरियों में गेहूं था जिसे उन्होंने भगत मामा के सामने रख दिया। भगत मामा ने उसे तौला तथा उसके बदले जरूरी सामान जैसे नमक, गुड़ व बीड़ी दे दिया। कुंवर भईया ने बताया कि–गांव में लोगों के पास अधिक नकद पैसे नहीं होते हैं। वे उपज के अन्न को फुटकर में बेचकर जरूरी सामान खरीदते हैं। इस प्रकार से घरेलू स्त्रियां व बच्चे अपना जेब खर्च निकालते हैं। भगत मामा ने हमें लैमन जूस वाली टाफियां दीं। हम खुश हो गये। तभी कुंवर भईया बोले–चलो अब वापस घर चलें, फूफू चिंता कर रहीं होंगी कि हम लोग कहीं हिरा (खो) तो नहीं गये हैं।

शाम को जानवरों के बाड़ों में सफाई की गयी। जानवरों की नांद में भूसा–सानी (चोकर, खली व नमक) लगाया गया। उन्हे हरा चारा डाला गया। यह काम घर का एक नौकर कलुवा कर रहा था। उसने गाय व भैंसों को दुहा फिर बछड़ों को खोला। वे दौड़कर अपनी मांओं के पास गये व दूध पीने लगे। ताजा दुहा हुआ दूध चूल्हे पर गरम करने को रख दिया गया। इससे पहले तो हम लोग गाय पर लेख लिखते थे। असली पशुपालन तो आज देखा। शाम होते ही मामा ने लालटेन, लैम्प व कुप्पी जला दीं। इन्हें यथा स्थान पर रख दिया गया। इससे पूर्व उन्होंने लालटेन व लैम्प के शीशे साफ किये थे। रात का खाना हुआ। बड़े से आंगन में चारपाईयां डाली गयीं। उन पर दरी या गद्‌दे बिछाये गये। हम लोग गप्प लगा रहे थे। अम्मा,मामी–मामा से गांव व घर के लोगों की बातें कर रहीं थीं। तभी भाभी गरम–गरम मलाईदार दूध लेकर आई। हम सबने मीठा दूध पिया। मजा आ गया। फिर लेट गये। आकाश में तारे दिख रहे थे। पता नहीं कब नींद आ गयी क्योंकि हम लोग दिनभर के बहुत थके हुये थे।

सुबह हुई। महेन्द्र भईया सबको दिशा–पान (टवायलेट) हेतु खेतों की ओर ले गये। घर की स्त्रियां मुंधेरे ही खेतों से होकर वापस आ गयी थीं। हम लोगों को पानी भरे लोटे दिये गये। जब लोटे कम पड़ गये तो गिलास में पानी ले लिया। घर से बाहर निकले। सभी महेन्द्र भईया के पीछे–पीछे चल रहे थे। लगभग आधा मील चलने के बाद आम का एक बाग नजर आया। भईया ने गन्ने के खेत की ओर इशारा किया। हम लोग दूर–दूर, ओट में छिपकर बैठ गये। निपटने के

बाद वापस चले। रास्ते में एक ट्यूबबेल पर लोटे मांजे। भईया ने नीम की दातून दिया। हम ने दातून करना शुरू किया। हमारा भाई सुरेन्द्र बोला–ये बड़ी कड़वी है। थू–थू। दातून करने के बाद हमने पानी से कुल्ला किया।मेड़ों के किनारे–किनारे पगदंडी पर चलते हुये हम लोग घर वापस पहुंचे। मामी ने हमें दूध–रोटी का नाश्ता करवाया। नौ बजे हमारे ममेरे भाई–बहन बस्ता व तख्ती लेकर स्कूल के लिये निकले पड़े। उनके स्कूल में अभी गर्मी की छुट्टियां नहीं हुई थीं। आम के बाग के पास स्कूल था। स्कूल का नया भवन पंचायत घर के पास बन रहा था। मैं भी थोड़ी देर बाद टहलता हुआ वहां पहुंचा। पेड़ के नीचे एक स्टैण्ड पर ब्लैकबोर्ड रखा था। बच्चे टाट–पट्टी पर बैठे हुये थे। मास्टरजी अंग्रेजी पढ़ा रहे थे। उन्होंने मुझे देखा और पूछा कहां से आये हो? मैंने कहा–सदर बाजार, लखनऊ से। किस क्लास में पढ़ते हो? मैंने कहा–छठे में। अच्छा इस वाक्य की अंग्रेजी बताओ–यह एक कुंआ है। मेरी सिट्टी–पिट्टी गुम हो गयी। वे थोड़ी देर इंतजार करते रहे और बोले–नहीं मालूम। मैंने बोला–हां, मुझे कुंये की अंग्रेजी नहीं पता है। मेरे शहरी ज्ञान का घमंड चूर–चूर हो गया था। मैं वहां से चुपचाप खिसक लिया। आज 55 वर्ष बाद भी मुझे यह दृष्टांत अच्छी तरह से याद है।

दोपहर के पश्चात जोरदार आंधी आयी। आंधी खत्म होने पर सब कहीं धूल–घूल हो रही थी। जैसे ही आंधी रूकी, घर के सभी बच्चे टोकरी, झोले लेकर आम के बाग की ओर दौड पड़े। हमने पूछा–मामी ये सब बच्चे कहां जा रहे हैं? मामी ने बताया–आंधी में बहुत से आम टूटकर गिरते हैं। अगर बच्चे नहीं जायेंगे तो दूसरे लोग हमारे आम उठा लेंगे। इससे किर–किर की ध्वनि उत्पन्न हो रही थी। यह अच्छा नहीं लगा रहा था। मामी घर में झाड़ू लगाने लगीं। मामा ने झांखड़ (अरहर के सूखे पौधे) से घर के बाहर सफाई किया। ऐसे ही लगातार कई दिनों तक हमारा ननिहाल प्रवास रहा। दिन–रात खुशी से बीत रहे थे। बहुत आनंद आ रहा था। यहां का शुद्ध वातावरण, ताजी हवा, देशी स्वादिष्ट घी युक्त खाना, बढिया दूध–दही, लईया–चना, शरबत (रस), खरबूजों व आमों का सेवन आदि बड़ा ही सुखदायक था। मामा बाल्टी में आम–खरबूजे भरकर कुंये में लटका देते थे। दो–तीन घंटे बाद हम लोग ठंडे आम और खरबूजे खाते थे। मामा कहते थे–ठंडे फल नुकसान नहीं करते हैं। देशी चुसआ आम बहुत रसीले व मीठे थे। हम तो दशहरी आम के आदी थे किन्तु चुसुआ आम व उसके अमरस की बात ही अलग थी।

सप्ताह भर ननिहाल में रहने के बाद हमारी सदर बाजार अपने घर वापसी हुयी। पुनः मामा ने बैलगाड़ी जोती। मामी नेघर के दूध के बने पेड़े, आम का आचार, खटाई, दालें, गुड़, खरबूज़े, कच्चे व पक्के आम आदि भेंट दिया। हम सभी ने बड़ों के पैर छुये। अम्मा मामियों, भाभियों आदि से गले मिलीं। मामी ने हम बच्चों को एक–एक रूपया भेंट दिया। हम बच्चे बहुत खुश हो गये। मुट्ठी में रूपया दबा लिया। इतनी खुशी तो हमें सेवा–निवृत्ति से पहले 2–3 लाख रूपये के मासिक वेतन में भी नहीं हुई। वे कह रहे थे–दिदिया फिर आना। फूफू जल्दी आना। मामा ने गाड़ी हांक दिया।दादा, बाबा, चल रे बधिया। गांव पीछे छूट रहा था।हम मुड़–मुड़ कर भारी मन से सब को देख रहे थे। ननिहाल के सैर की मीठी यादें शेष थीं। कभी न मिटने वाली मधुर स्मृतियां भी जो आज 55 वर्शो बाद भी मानस पटल में सजीव हैं।

पाँच मिनट और सोने की आदत हमें घण्टों सुला देती है,

यही आलस्य जीवन में हमें बरसों पीछे कर देता है।

–रतन टाटा

भुल्लू दादा

तारा दत्त जोशी
राजकीय इण्टर कालेज हरिपुरा हरसान, बाजपुर ऊधमसिंह नगर

आज गोपा को फिर विद्यालय के लिए देर हो गई। वह ज्यों ही बस्ता कंधे में डाल कर विद्यालय जाने को हुई, ठीक उसी समय दादा जी अखबार हाथ में लेकर कमरे में आकर कहने लगे– 'पता नही सब लोग मेरे ही पीछे क्यों पड़े रहते हैं? बेटा गोपू तुमने तो नही देखा मेरा चश्मा?' गोपा बस्ता वहीं पर रखकर चश्मा ढूंढने लगी। सोफा, अल्मारी, मेज, पर कहीं भी चश्मा नही मिला। गोपा फिर बस्ता पीठ में डालने के लिए पीछे को झुकी तो उसकी नजर दादा जी के माथे पर पड़ी और वह झल्लाते हुए बोली, 'आप भी दादा जी ना ..?"

"क्यों क्या हुआ?"

"आपको कुछ याद भी रहता है? चश्मा आपने अपनी टोपी में टांग रखा है दादू.........।" "ओफ्फो......। 'ए बुढ़ापा भी ना!'"अच्छा लो बेटा, तुम विस्कुट खा लेना।" दादा जी ने अपनी अंडर शर्ट की लंबी जेब में हाथ डालकर पांच रुपये निकाले और गोपा को दिये। गोपा मुट्ठी में रूपये दबाकर विद्यालय को दौड़ गई और उतार होने के कारण वह समय पर विद्यालय पहुँच गई।

आजकल गोपा के दादा का भूलना सारे गॉव में चर्चा का विषय बना हुआ है। कोई कहता बुढ़ापा है, अब भूलने के ही दिन हैं तो दूसरा दलील देता बुढ़ापा भी है तो इतना थोड़े ही भूलते हैं। कोई कहता है पागल हो गये हैं। कुछ पुराने हम उम्र लोगों का कहना है कि हो न हो, यह कुल देवी का कोप है। जब तक देवी को बलि नही चढ़ेगी तब तक देवी का कोप शांत नही होगा और दादू ठीक नही होंगे। जितने मुंह उतनी बातें।

रूपा की मॉ जी ने रूपा को बताया कि जब दादा जी अध्यापक थे, तब बच्चों को सवाल याद न करने पर मार लगाते थे। एक दिन एक एक बच्चे ने कह दिया आप भी भूल जाओगे। बस उसी की बात लग गई है।

रूपा गोपा की सहेली है। दोनों एक ही स्कूल में पढ़ती हैं और साथ–साथ स्कूल जाती हैं। स्कूल से आने के बाद दोनों बकरिया चराने जाती हैं। गोपा रोज रूपा को दादू के बारे में बताती है। उसके दादू की तबियत ठीक नहीं हो रही है। अब तो वह कभी कहीं चल देते है और कभी कहीं। गॉव के सभी बच्चे उनको 'भुल्लू दादा' पुकारते हैं। गोपा को 'भूल्लू दादा' कहना अच्छा नहीं लगता है। बेचारे गोपा के घर वाले सब परेशान हैं। कभी अस्पताल का चक्कर लगाते है तो कभी ओझा का। कभी मंदिर जाते है तो कभी किसी फकीर को बुलाते हैं। लेकिन कोई समाधान नहीं। गोपा ने अपनी सहेली रूपा को बताया कि कुछ दिन पहले एक फ़कीर ताबीज बनाने आया था, लेकिन दादा ने उसे पहनने के बजाय फ़कीर के मुँह मारते हुए कह दिया,'दुबारा यहां अपनी शक्ल दिखाई तो मुझसे बुरा कोई नही होगा।' रूपा को यह सुनकर हंसी आ गयी।

उस दिन गोपा बहुत परेशान थी। बकरी का बच्चा 'मूना' उसकी गोद में था और उसने रूंधे गले से रूपा को आवाज लगाई। रूपा भी अपनी बकरियों को ले आई। गोपा बहुत उदास थी। रूपा के पूछने पर उसने बताया कि 'दादू के ठीक होने के लिए बाबू जी 'मूना' की बलि देने वाले हैं। मूना को अपनी गोद में भींचकर वह रोने लगी। रूपा ने गोपा को समझाया लेकिन वह भी क्या कर सकती थी।

कुछ दिन बाद विद्यालय जाते समय रूपा ने गोपा को बताया कि अगले सप्ताह उसके ताऊ

जी आने वाले हैं। वे लखनऊ के बड़े हास्पिटल में डाक्टर हैं और उनके साथ में सोनम भी आएगी फिर वह अपने ताऊ और सोनम के साथ देवी मन्दिर जाएगी। सोनम उसके ताऊ की लड़की है।

देवी मंदिर की बात सुनकर गोपा सहम गई। उसे अपने 'मूना' का ध्यान आ गया। फिर वह रूपा से बोली–"ए रूपा.. देवी मंदिर में मेरी भेंट चढ़ाकर दादू के ठीक होने की दुवा मांग देगी..?

"हां–हां क्यों नहीं।" रूपा ने उत्तर दिया। "रूपा.... कहना ना, ..मेरे दादू को जल्दी ठीक कर दे। नही तो मूना. .. ।

कहेगी न.. ...?"

"हां जरूर कहूँगी गोपा,तू चिन्ता मत कर।" बातचीत करते–करते दोनों स्कूल पहुँच गई।

उस दिन बुधवार था। रूपा अपने ताऊ और सोनम के साथ मंदिर गई थी। उसने मंदिर में गोपा की बात कह दी। पूजा के बाद ताऊ जी बोले– 'बच्चो अगर आप लोग राजी हों तो हम भोजन के बाद वापस पैदल चलें। घूमने का आनंद तो चलने में ही है, क्यों सोनम?"सोनम बोली–"ठीक है पापा," पैदल ही चलते हैं।

भोजन करने के बाद तीनों पैदल चलने लगे। ताऊ जी को बीच–बीच में अपने बचपन के मित्र मिल जा रहे थे। सोनम पर्वतीय ढलानों पर बसे सुंदर छोटे –छोटे गॉवों का आनंद लेते हुए आ रही थी। कहीं पर सीड़ीदार सुंदर खेत तो कहीं पर जंगलों में चरते हुए जानवर, साफ पानी युक्त छोटी–छोटी सर्पीली नदियां और पक्षियों का कोलाहल यह सब रूपा के लिए रोजमर्रा का जीवन था, लेकिन सोनम के लिए अद्भुत रोमांच। सोमन प्रत्येक दृश्य को अपने केंमरे में कैद करते हुए आ रही थी।

सूरज ढलने लगा था। ठंडी हवा चल रही थी। एक सीधे रास्ते पर पहुँच कर सोनम बोली– 'पापा थोड़ी देर आराम करें?' यहां से गॉव ज्यादा दूर नही था। लगभग सौ मीटर के इस सीधे रास्ते के पल्ली तरफ छोटी सी नदी थी और फिर एक–डेढ़ किलोमीटर की खड़ी चढ़ाई। डाक्टर साहब ने अपनी घड़ी देखी और बोले – 'हां बच्चो थोड़ी देर सुस्ता लो।'

तीनों बैठकर आराम करने लगे। डाक्टर साहब एक पत्थर पर पीठ टिका कर बैठे हुए थे। तभी सामने से एक व्यक्ति अपने दोनों हाथों में दो केन लेकर आते हुए दिखाई दिया।काफी पास आने पर ताऊ जी ने उन्हें पहचान लिया।वह गोपा के दादा थे।

पास आने पर ताऊ जी बोले, "'चाचा जी, आप इस समय केन लेकर कहां जा रहे हैं?" "बेटा मैंने सोचा, 'धारे से ठंडा पानी भर लाता हूॅं। थोड़ा टहलना भी हो जाएगा' ।"

"लेकिन आप पानी लेकर इधर कहां जा रहे हैं?"

"पानी लेकर कहां जाऊंगा भला?घर जा रहा हूॅं।" लेकिन हमारा गांव तो उस चढ़ाई के पार है और आप पानी लेकर विपरीत दिशा में जा रहे हैं।(दादू करीब दो किलोमीटर घर से विपरीत आ गए थे।)

गोपा के दादू ने पीछे की ओर देखा और जीभ दांतों से दबाते हुए बोले– "आ.. हा..., मैं यहां कहां पहुंच गया हूँ? अब यह चढ़ाई कैसे पार होगी?"

गोपा ने चुपके से ताऊ के कान में बताया कि दादा जी आजकल पागल हुए हैं, तभी तो..... इनको सब 'भुल्लू दादा' कहते हैं।

"हूँ..... । चलो कोई बात नही चाचा। आप एक केन मुझे दे दीजिए। हम साथ–साथ घर चलते हैं। बेटा सोनम, दादा जी को प्रणाम करो। चाचा जी मेरे गुरू भी रहे हैं।"

दादा जी का एक केन ताऊ ने और दूसरा रूपा ने पकड़ा और चारों धीरे–धीरे चलने लगे।

दादा जी बोले– "तुम्हारा भला हो बेटा! अभी तुम नहीं मिलते तो मैं पता नहीं कहां पहुंच जाता? यह बुढ़ापा बहुत खराब चीज है। मैं अक्सर भूल जाता हूँ,लेकिन घर और गॉव वाले मुझे पागल समझते हैं।"

"हां चाचा जी, आपकी बीमारी बहुत जटिल अवस्था में पहुँच चुकी है। अब इसका इलाज भी सम्भव नहीं है। आपको इस तरह अकेले नहीं घूमना चाहिए।"

दादा जी और ताऊ आपस में बातें करते हुए आगे–आगे और सोनम व रूपा कुछ पीछे चल रहे थे। रूपा, सोनम को दादा जी के बारे में बता रही थी। तभी ऊपर से कुछ लोगों के तेजी से नीचे उतरने की आहट सुनाई दी। पास आने पर ज्ञात हुआ कि, उनमें से एक गोपा के बाबू जी रमेश और दूसरा उसका साथी है। दोनों ही दादा जी को ढूँढने आ रहे थे। दोनों ने डाक्टर साहब को नमस्कार किया और केन अपने हाथों में ले ली। तभी गोपा के बाबू जी झुंझलाकर बोले–"आप भी बाबू जी ना! कभी कहीं चले जाते है, कभी कहीं...।"

'भैया इस तरह गुस्सा मत करो। इनकी बीमारी जटिल अवस्था में पहुँच गई है।' ताऊ जी ने उत्तर दिया।

'अरे अब आपको क्या बताएं? इन बाबू जी ने तो परेशान करके रख दिया है। गोपा और उसकी मां दूसरी ओर ढूढने गये हैं। अम्मा घर में रो रही है। अब आप ही बताइए परेशानी की बात है या नहीं?"

"देखो, आपकी बात तो सही है। लेकिन यह भी तो सोचो यह सब बाबू जी जान बूझकर नहीं कर रहे हैं। वास्तव में ताऊ जी "अल्जाइमर" नाम की बीमारी से पीड़ित है। इस बीमारी में आदमी अक्सर भूल जाता है। इसे भूलने की बीमारी भी कहते हैं। इसी कारण चाचा जी विपरीत दिशा में इतनी दूर चले आए। तुम खुद ही सोचो, क्या उनको चढ़ाई चढ़ना अच्छा लग रहा होगा?"

"भूलने की बीमारी,.....अल्जाइमर..?" रूपा बुदबुदायी।

"हां बेटा, उम्र बढ़ने के साथ–साथ हमारे मन मस्तिश्क में बदलाव आ जाते हैं और शारीरिक मानसिक समस्याएं आ जाती हैं। जिससे व्यक्ति इस रोग का शिकार हो जाता है।"

"तो यह देवी का कोप नही है?"

"जी नहीं। यह एक मानसिक रोग है। जो सिर में चोट लगने, अधिक धूम्रपान करने, आरामदायक जीवन जीने, कार्बोहाइड्रेट युक्त पदार्थों के अधिक सेवन आदि कारणों से हो सकता है। आजकल तो मोबाइल की लत से युवा भी इस रोग की चपेट में आ रहे हैं।"

"इसका इलाज भी तो होता होगा ताऊ जी"? रूपा ने पूछा।

"बेटा, अभी तक इसका कोई कारगर इलाज नहीं है। लेकिन चिकित्सा विज्ञान इस दिशा में काम कर रहा है और कुछ सफलता भी मिली है। किंतु अभी पूरी तरह सफलता नहीं मिली है। खान–पान व आदतों में सुधार करके ही इस बीमारी से बचा जा सकता है।"

"तो इसका मतलब दादू बलि देने से भी ठीक नही होंगे?" तब तो 'मूना' बच जाएगा...। बलि, ...मूना...?

हां, ताऊ जी। गांव के सब लोग कहते हैं कि दादू को देवी का कोप हुआ है और देवी मंदिर में बलि देने से दादू ठीक हो जाएंगे। चाचा जी मूना की बलि देने वाले हैं। है न, चाचा जी...?.।

"बेटा बीमारियॉं बलि देने से ठीक नहीं होती हैं। उनका उपचार करना होता है और सावधानी रखनी होती हैं। बलि, टोटका यह सब बेकार की बातें हैं।"

बातचीत करते–करते सभी गांव में पहुंच गए और रूपा के घर में बैठ गए। रूपा की माता जी ने चाय बनाई। रूपा ने सबको चाय दी। चाय पीकर ज्यों ही सब जाने को उठे तो दादू बैठे हुए ताऊ जी से बोले–" मैंनें आपको पहचाना नहीं?" सबको हंसी आ गई।

डाक्टर ताऊ बोले –"रमेश! चाचा जी की बहुत ध्यान रखने की जरूरत है, हां।" इनको अकेले मत छोड़ना...और हां, अगले सप्ताह मेरे साथ चलने की तैयारी करना। जितना संभव हो पाएगा, चाचा जी का उपचार करेंगे।

गोपा के दादा व बाबू जी घर कों चले गये। तभी गोपा चुपचाप रूपा के घर के पिछवाड़े के दूसरी तरफ से रूपा के पास आकर पूछने लगी। रूपा.... क्या हुआ? मेरी बात...।

रूपा ने गोपा को सारी कहानी बताई और बोली गोपा अब मूना की बलि नहीं चढेगी... हां।

गोपा की आखें खुशी से चमक उठी और वह उछलते हुए घर गई और मूना को अपनी बांहों में भर कर बोली, 'बाबू जी अब मूना की बलि नहीं चढ़ेगी, ना?'

लघु कथा – बकरी

शारदा मालरा
शिव विहार ,फेस-2, कुसुमखेड़ा, हल्द्वानी

किसी पहाड़ी पर रास्ते के बीच में ही एक गडढ़ा था। पहाडी पर चारों तरफ हरियाली और झाड़–झंखाड़ थे। वहाँ चरने वाली बकरियो को भला वह गडढ़ा कहाँ से दिखायी पड़ता। चरते–चरते सबसे पहले नंबर की बकरी धोखे से गडढ़े में गिर पड़ी तो दूसरे नंबर की बकरी को लगा कि जरूर उस गडढ़े में कोई खास चीज होगी। आगे–पीछे का कोई भी विचार किये बिना वह भी उस गडढ़े में जा गिरी।

एक–दो–तीन–चॉर–पॉच......................सिलसिला जारी रहा। धीरे–धीरे वह गड्ढ़ा भरने लगा, लेकिन सबसे आखिरी बकरी ने अपनी अन्य साथी बकरियों का अनुकरण किये बिना, बल्कि उनके सिर पर बड़े ही शान से पैर रखकर आगे निकल जाने का साहस दिखलाया और आगे निकल जाने के बाद पीछे मुड़कर कहा बुद्धू कहीं की! रास्ते में पड़े गडढ़े भी दिखायी नहीं देते?

एक साहस भरा योग्य काम करने की इच्छा करने वाले किसी भी व्यक्ति को, किसी का आर्शीवाद लेने की इच्छा कभी नहीं करनी चाहिए। एक योग्य काम अपना आर्शीवाद अपने साथ ही लेकर चलता है।

–महात्मा गॉधी

डॉ. ई. स्टेनली जोन्स और मेथोडिस्ट आश्रम, सातताल

अजय एस. रावत

नैनीताल

नैनीताल से 22 किलोमीटर की दूरी पर वनों के बीच बसा मेथोडिस्ट आश्रम एक सपने के सच होने जैसा है। यह आस्था का विश्राम स्थल है, जहाँ कोई भी व्यक्ति अपने एकांत और निर्जन स्थान में ईश्वर की उपस्थिति महसूस कर सकता है। पहाड़, पेड़, पौधे और जानवर रोजमर्रा की जिंदगी की मिथकों और वास्तविकताओं में अपनी भूमिका निभाते हैं और यह सामंजस्य सातताल में सबसे अधिक स्पष्ट है। स्थानीय मान्यता के अनुसार, पहाड़ और भगवान यहाँ सह–अस्तित्व में हैं। भौतिकवाद और शहरी जीवन के शोर से अछूते यहाँ एक अकथनीय लेकिन दिव्य अनुभूति का अनुभव होता है, बशर्ते कोई अपने परिवेश के साथ तालमेल स्थापित करने के लिए तैयार हो। अनादि काल से सातताल को पवित्र माना जाता है। घाटी के ऊपर सात पहाड़ियाँ हैं और एक आकर्षक किंवदंती के अनुसार इसका नाम उपयुक्त है।

ऐसा माना जाता है कि प्राचीन काल में एक गाँव की महिला ईंधन के लिए जंगल से गिरी हुई शाखाएँ और सूखी टहनियाँ चुन रही थी, तभी उसने अचानक एक बूढ़े व्यक्ति को पेड़ के नीचे खड़ा देखा। वह बहुत बीमार लग रहा था और प्यास से मर रहा था। उसकी दुर्दशा देखकर, महिला जल्दी से पास के झरने पर गई और अपनी हथेलियों में जितना कीमती पानी भर सकती थी, ले आई। उसने ऐसा सात बार किया। उसके प्रयासों से बूढ़ा व्यक्ति पुनर्जीवित हो गया। वह बहुत प्रसन्न हुआ और उसे आशीर्वाद दिया। उसने कहा, "तुम मेरी प्यास बुझाने के लिए जो पानी की एक–एक बूँद लाई हो, उससे पहाड़ियों के बीच एक झील बन जाएगी।" इस प्रकार सातताल की उत्पत्ति उस बूढ़े व्यक्ति से हुई जो वास्तव में एक संत और गुणी महिला थी। प्राचीन काल में पूरे क्षेत्र को ऋषियों और संतों का निवास माना जाता था और लोग इसके आध्यात्मिक महत्व के कारण इस स्थान पर आते थे। किसी ने भी यहाँ बसने के बारे में नहीं सोचा, क्योंकि इससे इस क्षेत्र की पवित्रता अपवित्र हो जाएगी। जब अंग्रेज 1841 में नैनीताल आए तो उन्होंने सातताल को ब्रिटिश अधिकारियों के लिए सप्ताहांत रिसॉर्ट के रूप में विकसित किया और बाद में 1860 में एक सरकारी चाय बागान के रूप में विकसित किया। 1904 में इसे ए.सी. इवांस ने खरीदा जिन्होंने 1912 में अपनी दिवंगत मां की याद में यहां एक सुंदर चर्च बनवाया। इसे सेंट जॉन चर्च के नाम से जाना जाता है। 1927 में मेथोडिस्ट चर्च ने इसे ईसाई धर्मस्थल के रूप में विकसित करने के उद्देश्य से एस्टेट का एक हिस्सा खरीदा। दो साल बाद 1929 में इवांस ने इंग्लैंड लौटने का फैसला किया और उन्होंने अपनी संपत्ति वार्षिकी के आधार पर बेच दी, जिसका शीर्षक मेथोडिस्ट चर्च ऑफ साउथर्न एशिया के पास था। अमेरिका के डॉ. एली. स्टेनली जोन्स ने इसके लिए अधिकांश धन मुहैया कराया क्योंकि इस क्षेत्र में एक ईसाई आश्रम स्थापित करना उनका सपना था। एली. स्टेनली जोन्स का जन्म 3 जनवरी 1884 को अमेरिका के मैरीलैंड के क्लार्क्स विला में हुआ था। मूल रूप से जोन्स एक वकील बनना चाहते थे लेकिन भगवान ने उन्हें एक प्रचारक बनने के लिए नियत किया था। विल्मोर, केंटकी में एस्बरी कॉलेज से स्नातक करने के बाद वे 1907 में भारत आए। उनका पहला काम लखनऊ के लाल बाग मेथोडिस्ट चर्च में था। 1911 में उन्होंने एक शैक्षिक मिशनरी, मेबल लॉसिंग से विवाह किया। बाद में उन दोनों को सीतापुर में एक काम पर भेजा गया। एक क्रिश्चियन बॉयज स्कूल की प्रिंसिपल/मैनेजर के रूप में और दूसरे को जिला अधीक्षक के रूप में। स्टेनली एक जिला मिशनरी के रूप में बहुत परेशान थे और पूरे भारत से प्रचारकों के अनुरोध स्वीकार करने लगे। इस बीच उनकी एक संतान, यूनिस का जन्म सीतापुर

में हुआ। डॉ. जोन्स की एक प्रचारक के रूप में प्रसिद्धि बढ़ती गई और जल्द ही वे भारत में सबसे अधिक मांग वाले प्रचारक बन गए।

1930 में उन्होंने सातताल में ईसाई आश्रम की स्थापना की। बाद में यह लखनऊ में फैल गया। निश्चित रूप से यह भारत में अपने पहले उपक्रमों में से एक था। उन्होंने सातताल आश्रम को मसीह–केंद्रित और चर्च–केंद्रित आश्रम बनाया। यह समुद्र तल से 1488 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। इसमें 161.88 हेक्टेयर भूमि, 14 कॉटेज वाला मुख्य बंगला और अपनी एक झील शामिल है। संपत्ति दो सरकारी झीलों से घिरी हुई है। आश्रम सरकारी जंगलों से घिरा हुआ है और ट्रेन द्वारा आसानी से पहुँचा जा सकता है। निकटतम रेलवे स्टेशन काठगोदाम है। सातताल आश्रम भारतीय दृष्टिकोण से ओतप्रोत है और सादा जीवन और उच्च विचार के आदर्श को दर्शाता है। आश्रम के प्रमुख रेवरेंड आचार्य आर. एस. वर्मा का मानना है कि यह सभी ईसाई संप्रदायों को एकता में लाने और पवित्र आत्मा में गहरी ईसाई संगति का एक सकारात्मक और रचनात्मक तरीका है। डॉ. जोन्स रेवरेंड सी.एफ. एंड्रयूज के माध्यम से गांधीजी के संपर्क में आए और 1925 में उन्होंने गांधीजी के शिविर में भाग लिया। उसी वर्ष उनकी पहली पुस्तक, 'द क्राइस्ट ऑफ द इंडियन रोड' प्रकाशित हुई, बिशप जेम्स के. मैथ्यूज के अनुसार उनकी कलम से 29 पुस्तकों की धारा बह निकली, जिनमें से उनकी पहली पुस्तक और पाँच अन्य, 'क्राइस्ट्स अल्टरनेटिव टू कम्युनिज्म', 'मैचलेस वेपनरू सत्याग्रह', 'क्राइस्ट एंड प्रेजेंट वर्ल्ड इश्यूज', 'महात्मा गांधी: एन इंटरप्रिटेशन' और 'हाउ टू बी ए ट्रांसफॉर्म्ड पर्सन' को अर्न्तराष्ट्रीय मान्यता मिली।

उनकी आत्मकथा, 'सॉन्ग ऑफ एसेंट्स' 1968 में प्रकाशित हुई और उनकी अंतिम पुस्तक, 'दि डिवाइन यस' 1975 में मरणोपरांत प्रकाशित हुई। उनकी अधिकांश पुस्तकों का अनुवाद दुनिया की प्रमुख भाषाओं में किया गया है। उन्होंने अपने जीवनकाल में 60 हजार से अधिक उपदेश दिए। उनका प्रभाव बहुत अधिक था और द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान उन्होंने संयुक्त राज्य अमेरिका और फिर दुनिया के कई अन्य हिस्सों में आश्रम आंदोलन का विस्तार किया। आश्रम आंदोलन अब दुनिया के 38 देशों में फैल चुका है और भारत में अब तक ऐसे 10 आश्रम हैं। 1950 में उन्होंने लखनऊ में नूर मंजिल मनोरोग केंद्र की स्थापना की, जो भारत में अपनी तरह का पहला केंद्र था। उन्होंने सीतापुर में मेबल जोन्स गर्ल्स हाई स्कूल के रूप में छात्रावास सुविधाओं के साथ एक बालिका विद्यालय भी स्थापित किया। ये सभी संगठन समाज की भलाई के लिए काम कर रहे हैं। डॉ. जोन्स का गांधीजी से संपर्क उन्हें स्वतंत्रता संग्राम की ओर आकर्षित करता है। उन्हें भारतीयों के प्रति अंग्रेजों का रवैया पसंद नहीं आया और वे असहयोग आंदोलन और अहिंसा के प्रबल समर्थक बन गए। परिणामस्वरूप उन्होंने अंग्रेजों से दुश्मनी मोल ली और 1940 से 1946 तक भारत से निर्वासित रहे। निर्वासन की अवधि के दौरान उन्होंने जापान और अमेरिका के बीच युद्ध को टालने की कोशिश की, उन्होंने वाशिंगटन में जापानी दूतावास में अपने ईसाई संपर्कों के साथ मिलकर रूजवेल्ट और सम्राट हिरोहितो के बीच अंतिम क्षण में संपर्क को प्रोत्साहित किया। 1946 में उन्हें भारत लौटने की अनुमति दी गई और 1947 में उन्होंने यूनाइटेड चर्च ऑफ अमेरिका के लिए पहला धर्मयुद्ध शुरू किया। 1959 में उन्हें मेथोडिस्ट ऑफ द ईयर नामित किया गया। उन्हें दो बार नोबेल शांति पुरस्कार के लिए नामांकित किया गया और 1963 में उन्हें गांधी शांति पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

दिसंबर 1971 में उन्हें अमेरिका के ओक्लाहोमा सिटी में लकवाग्रस्त स्ट्रोक हुआ। वे 1972 में सतताल आश्रम लौट आए लेकिन वे स्ट्रोक से पूरी तरह से उबर नहीं पाए। उन्हें बरेली के क्लारा स्वेन अस्पताल में भर्ती कराया गया, जहाँ 25 जनवरी, 1973 को उन्होंने अंतिम सांस ली। उनकी अस्थियों को सातताल और माउंट ओलिवेट कब्रिस्तान, यूएसए में दफनाया गया। इस तरह भारत ने एक प्रचारक और दार्शनिक खो दिया, लेकिन उनकी विरासत अभी भी जारी है।

'कब तक पुकारूँ' : मेरी पहली किताब

दिनेश कर्नाटक

हल्द्वानी

किताबों से मुझे कैसे लगाव हुआ, इसके बारे में ठीक–ठीक तो याद नहीं। ऐसा लगता है कि प्रभाव कोर्स की किताबों से पड़ा। इसमें भी कहानियों ने अधिक प्रभावित किया। मुख्य रूप से भाषा की किताबों का प्रभाव अधिक पड़ा। इसके अलावा सामाजिक विज्ञान की किताबों ने प्रभावित किया। भाषा विषय की किताबों से प्रभावित होने की वजह यह थी कि उसमें अपने आसपास की जीवन की झलक दिखाई देती थी। गणित–विज्ञान आदि विषयों से आत्मीय संबंध नहीं बन पाया। इसकी वजह कुछ तो मेरी अपनी रुचियाँ रही होंगी, दूसरा, इन विषयों को पढ़ाने का तरीका भी हो सकता है।

कविताओं में हमारे कोर्स में पढ़ाए जाने वाली 'चेतक' शीर्षक कविता ने प्रभावित किया। सुभद्रा कुमारी चौहान की 'खूब लड़ी मर्दानी' ने भी मन–मस्तिष्क पर खूब असर डाला। बाद में सामाजिक विज्ञान व इतिहास की किताब में महात्मा बुद्ध के जीवन से संबंधित दो कथाओं का गहरा प्रभाव पड़ा। पहली कहानी घायल पक्षी के न्याय पर आधारित थी, जिसमें दोनों राजकुमार राजा के पास न्याय के लिए जाते हैं कि पक्षी बचाने वाले का होगा या मारने वाले का। इसके बाद वाली कहानी में गौतम बुद्ध के अपने सारथी के साथ शहर में घूमने का उल्लेख आता है, जिसमें बुद्ध बीमार, बूढ़े, व मृतक को देखते हैं तथा जीवन की इस सच्चाई से परिचित होकर विस्मित होते हैं। उस समय तक मैं भी जीवन की इस सच्चाई को देखकर सोच में पड़ जाता था। इस कहानी ने जीवन को यथार्थ दृष्टि से देखने की प्रेरणा दी। कह सकता हूँ कि यह संवेदना दृष्टि जो महात्मा बुद्ध की कहानी से प्राप्त हुई, मेरे व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण हिस्सा बनी।

इसके बाद कोर्स में प्रेमचंद की कहानी ईदगाह पढ़ने को मिली, जिसने धार्मिक ताने–बाने को देखने व समझने की नई दृष्टि दी। मुझे अच्छे से याद है कि उन दिनों मुसलमानों को लेकर बचपन में ही बड़ों के द्वारा हमारे भीतर पूर्वाग्रह भर दिए जाते थे। समझाया जाता था कि मुसलमान खतरनाक होते हैं उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता। एक प्रकार से उनसे दूरी बनाने का संस्कार पारंपरिक रूप से भरा जाता था। इस कहानी ने धार्मिक विद्वेष को मेरे दिमाग से दूर कर दिया। बूढ़ी दादी अमीना की गरीबी और अभाव तथा हामिद की बाल सुलभ प्रतिक्रिया ने यह समझ बनाई कि मनुष्य के रूप में हमारे बीच कोई अंतर नहीं है। सभी के जीवन संघर्ष एक जैसे होते हैं।

फिर कभी एक और यादगार कहानी 'हार की जीत' पढ़ी। इस कहानी का भी मेरी चेतना के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रहा। कहानी में दिखाया गया है कि इलाके का खूंखार डाकू धूर्तता से बाबा भारती का घोड़ा हथिया लेता है, लेकिन जब बाबा भारती उससे कहते हैं कि यह बात किसी को बताना मत, लोग गरीबों पर विश्वास करना छोड़ देंगे। खड़क सिंह का मन बदल जाता है और वह एक दिन चुपचाप बाबा के घोड़े को वापस कर जाता है। कहानी पहले तो मुझे समझ में नहीं आई कि बाबा ने ऐसी क्या बात कह दी कि डाकू का हृदय परिवर्तन हो गया, लेकिन एक बात जरूर समझ में आई कि अच्छाई की रोशनी हर मनुष्य के अंदर होती है।

इस प्रकार किसी किताब को पढ़ने से पहले की पृष्ठभूमि बनी। कह सकता हूं कि पढ़ने का संस्कार बनने में स्कूली किताबों की बड़ी भूमिका रही। इन किताबों से संस्कारित होने के बाद

किताबों के प्रति एक तरह की जिज्ञासा व रुचि का भाव मन में बना। बात कक्षा 6–7 के दिनों की है, जब मैंने अपने घर में एक मोटी सी हार्डबाउंड किताब देखी। यह किताब संभवत पिताजी फौज से लेकर आए थे। पता नहीं वह उस किताब को पढ़ने की मंशा के साथ लेकर आये या ऐसे ही उनको कहीं मिली और उठाकर ले आए। ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूं क्योंकि मैंने कभी उस किताब को उन्हें पढ़ते हुए नहीं देखा। मुझे अच्छे से याद है कि पहले कई बार मैंने उसे उलट–पुलट कर देखा। कई बार उसके साथ खेलता। किताब की मोटाई देखकर पढ़ना शुरू करने की हिम्मत नहीं जुटा पाया।

एक–दो बार पढ़ना शुरू भी किया तो कुछ समझ में नहीं आया। किताब की भाषा और वर्णन हमारी स्कूल की किताबों जैसा नहीं था। बात साफ थी कि वह मेरे जैसे बच्चे के पढ़ने वाली किताब नहीं थी, बल्कि वह बड़ों के पढ़ने वाली किताब थी।

किताब थी रांगेय राघव का मशहूर उपन्यास 'कब तक पुकारूं' और यह उपन्यास ही मेरे जीवन की पहली किताब है। इसको उस उम्र में मैंने पढ़ा, ऐसा मैं यकीन से इसलिए कह सकता हूं कि इस किताब के साथ मेरा रिश्ता चूहे–बिल्ली का जैसा रहा। किताब के आकार और उसकी मोटाई से घबराने के बावजूद मैं जब भी मौका मिलता उसे पकड़ लेता। उलटता–पुलटता और जो पेज खुलता उसमें कुछ ना कुछ पढ़ लेता। यह अलग बात है कि बहुत जल्दी मेरी हिम्मत जवाब दे देती और मैं उसे छोड़ देता।

करीब छह–सात महीने बाद शायद स्कूल की गर्मियों की छुट्टियों के दौरान जब मेरे पास पर्याप्त समय था, इस किताब को पढ़ना शुरू किया। तो एक खास बात ने मुझे उस किताब से जोड़ दिया और आगे पढ़ने के लिए जिज्ञासा उत्पन्न कर दी। वह बात यह थी कि उस किताब में नटों या राजस्थान के खानाबदोशों की कथा थी। नटों के प्रति मेरे मन में जिज्ञासा की वजह यह थी कि उस जमाने में हमारे गांव में हर वर्ष कुछ नटों के परिवार कठपुतलियों का नृत्य दिखाने को आते थे। मेरा बाल मन उन घुमंतुओं को देखकर सवालों से घिर जाता था कि ये लोग कहां से आते होंगे और कहां को जाते होंगे। इनका घर कहाँ होगा ?

वे लोग गाँव में आकर चार–पाँच दिन रहते। इस दौरान कठपुतलियों का खेल दिखाते। मुझे उनका टेंट लगाकर रहना अजीब लगता था, फिर बड़ों के मुंह से सुना कि ये लोग इसी तरह से एक जगह से दूसरी जगह जाते रहते हैं। इस प्रकार मेरे मन में उन लोगों को लेकर भारी कौतूहल व जिज्ञासा थी। उपन्यास ने जैसे मेरी जिज्ञासाओं को शांत करने का उपाय मेरे सामने रख दिया।

इधर जब मैं यह उपन्यास पढ़ने लगा तो उसमें मेरी मुलाकात कहानी के नायक सुखराम से हुई और उसका हुलिया तथा तौर–तरीके गांव में आने वाले नटों से मिलते–जुलते थे। मुझे भरोसा होने लगा था कि उपन्यास के नायक सुखराम के जरिए में खानाबदोश जीवन जीने वाले नटों के बारे में काफी कुछ जान जाऊंगा। धीरे–धीरे उपन्यास और उसके परिवेश से जुड़ाव बनने लगा। जिन लोगों ने उपन्यास पढ़ा है वे जानते होंगे कि उपन्यास की कहानी वर्तमान व अतीत दो स्तरों पर चलती है। सुखराम की दो पत्नियां हैं प्यारी और कजरी। एक कहानी में सुखराम की पुत्री चंदा व नरेश की प्रेम कहानी है। नटों को समाज के सबसे नीचे के पायदान पर रखा जाता है। यहां तक कि जाति के क्रम में सबसे नीचे के पायदान वाला व्यक्ति भी उनके हाथ का छुआ नहीं खाता। ये लोग खेल–तमाशे दिखाने के अलावा अपराध में संलग्न रहते हैं। इसलिए उन्हें संदेह व हेय दृष्टि से देखा जाता था। उनकी स्त्रियां देह व्यापार करती। कहने का अर्थ यह है कि समाज की प्रचलित मान्यताओं या नैतिकता को लेकर उन्हें कोई चिंता नहीं होती थी।

मगर उपन्यास का नायक सुखराम जीने के इस तरीके को स्वीकार नहीं करता, उसे विश्वास है कि वह ठाकुर वंश से है इसलिए वह अपराध भी नहीं करता और अन्याय बर्दाश्त नहीं कर पाता। एक अधूरा किला हमेशा उसकी स्मृतियों में बना रहता है और वह नटों के जीवन के दुष्चक्र से निकलकर अपने ठाकुर होने को सिद्ध कर उसे प्राप्त करना चाहता है।

इस तरह उस उम्र में जितना हो सका मैंने यह उपन्यास पढ़ा। कह नहीं सकता कि पूरा पढ़ा लेकिन बहुत हद तक पढ़ा। कुछ जगह जहां कहानी उलझ गई है या मुख्य कहानी से इधर–उधर जाकर बोझिल हो गई थी उन हिस्सों को छोड़कर मैं आगे बढ़ गया और सुखराम से प्रभावित होकर उपन्यास में उसी के जीवन की कहानी को तलाश करता रहा। यह भी सच है कि उपन्यास को जितना पढ़ा उसके बाद सुखराम, कजरी और प्यारी के जीवन को किसी पार लगता हुआ न देखकर सार्थक अंत ना होने के कारण काफी निराश भी हुआ था।

यह भी ध्यान में है कि उनके जीवन की त्रासदी और विडंबना मेरे मन मस्तिष्क में लंबे समय तक छाए रही। उस उदासी भरे प्रभाव को मैं आज भी महसूस करता हूँ। आगे जाकर मैंने जैसा कि उस उम्र में होता है, उपन्यास के पेजों को बीच से उखाड़ दिया। किताब के बाहर का जिल्द लंबे समय तक मेरी किताबों के साथ इधर–उधर डोलता रहा। बीच के पेज भी कुछ समय तक जीवित रहे, फिर उनकी नाव बनी, जहाज बने और माँ के लिए वे चूल्हे की लकड़ियों को सुलगाने के काम आए।

इस तरह से इस किताब को पढ़ने के बाद मैंने उसे नष्ट भी कर दिया, मगर उपन्यास के नायक सुखराम की बेचौनी मुझे लगातार परेशान करती रही। बाद में जब किताबों से ठीक–ठाक रिश्ता बना और यह लगने लगा कि एक बार फिर से इत्मीनान से उपन्यास को पढ़ा जाए, गुना जाए और समझा जाए तब वह किताब मेरे पास उपलब्ध नहीं थी। तभी आगे के लिए एक सबक मिला कि किताब को नष्ट नहीं करना चाहिए था। वह बचपन की बात थी और बच्चे अच्छी लगने वाली चीजों को तोड़कर उनके भीतर की बनावट को देखना चाहते हैं। मुझे किताब के अंदर तो कुछ नहीं मिला, अलबत्ता किताब की बाइंडिंग उसकी सिलाई के तरीके को देख पाया। इस किताब के अंजाम के कारण अब मैं आगे की किताबों को काफी संभाल कर रखने लगा था।

अब हालत यह है कि किताबें मेरे लिए सोने–चांदी से ज्यादा बहुमूल्य हो चुकी हैं। मेरी नजर में दुनियाँ की सबसे कीमती चीज है किताबें। मुझे उनके साथ लापरवाही, उनको तोड़ना–मोड़ना परेशान कर देता है। शायद इस तरह की सुरक्षा का भाव मेरे द्वारा पहली किताब के साथ किए गए ऑपरेशन की वजह से बना। इस पहली किताब ने मुझे किताबों के लिए जिज्ञासा से भर दिया। समझ में आया कि किताबों के जरिए हम दूर–दूर की यात्रा कर सकते हैं। उन सब जगहों में पहुंच सकते हैं, जहां पहुंचना हमारे लिए प्रायः संभव नहीं होता। सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि लोगों और जीवन के बारे में जितना किताबों से जान सकते हैं और किसी से नहीं जान सकते।

परिश्रम करने की उम्र में अगर आराम करोगे
तो आराम करने की उम्र में परिश्रम
–गाँधीजी

कर्म फल

तारा दत्त जोशी
राजकीय इण्टर कालेज, हरिपुरा हरसान, बाजपुर, ऊधमसिंह नगर

विज्ञान का 'क्रिया प्रतिक्रिया नियम' केवल विज्ञान ही नहीं सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त है। प्रत्येक क्रिया के बराबर प्रतिक्रिया होती है और विपरीत दिशा में होती है। जिस प्रकार बंदूक से छूटी गोली बंदूक को पीछे की ओर धक्का देती है,ठीक उसी प्रकार धरती की गहराई में बोया हुआ बीज भी ऊपर की ओर प्रकट होता है।

प्रकृति के साथ ही हमारे द्वारा किए गए प्रत्येक कार्य में भी यह नियम लागू होता है। हमारे द्वारा किए गए हर अच्छे कर्म का प्रतिफल अच्छाई के रूप में और हर बुरे कर्म का प्रतिफल बुराई के रूप में हमारी ओर लौटता है। कर्मफल का प्रभाव इतना व्यापक होता है कि यदि हमारी उम्र इसके फल को भोगने हेतु कम पड़ जाती है तो अगले जन्म में भी हमें इनका फ़ल भोगना होता है। हमारे पिछले जन्म के कर्म इस जन्म का भाग्य बनते हैं और इस जन्म के कर्म अगले जन्म का भाग्य।

महाभारत के पात्र धृतराष्ट्र से हम सब परिचित हैं। वह जन्म से ही अंधे थे। जिस कारण उन्हें जीवन भर अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। अंधा होने के कारण ही बड़े होने के बाद भी वह राजा नहीं बन सके। बाद में उनके भाई पांडु के अवसान के बाद राजा बने धृतराष्ट्र के पुत्र को युवराज के रूप में नहीं स्वीकार किया गया। वह राजा होने के बाद भी अंधेपन के कारण कुछ नहीं कर सकते थे। महाराज धृतराष्ट्र को यह अंधापन उनके पूर्व जन्म के कर्मो के कारण प्राप्त हुआ था। वह पिछले जन्म में क्रूर अन्यायी और अत्याचारी राजा थे। एक बार वह पर्यटन के लिए किसी उद्यान में गये हुए थे। उद्यान सुंदर पुष्प और लताओं से सुशोभित था। उद्यान में जगह–जगह बने सरोवर ओर उनमें खिले हुए कमल के पुष्प उद्यान की शोभा बढ़ा रहे थे।

राजा ने अपने सारथी से उद्यान के मध्य में स्थित सरोवर के पास चलने को कहा। यह उद्यान की सबसे सुंदर जगह थी। सरोवर में हंसों का समूह विचर रहा था। इन हंसो में भी एक सुंदर हंस अपने परिवार के साथ सरोवर में घूम रहा था। संपूर्ण परिवार के साथ इस हंस की शोभा देखते ही बनती थी। राजा कुछ देर तक हंस और उसके बच्चों को देखते रहा। किंतु कुछ देर बाद उसके मन में शरारत सूझी और उसने आदेश दिया कि हंस को पकड़कर लाओ। फ़िर उसने हंस की आंखें निकाल दी। हंस की आंखें निकालते समय हंस बहुत ही करुण चीत्कार करने लगा। उसकी चीत्कार सुन उसका पूरा परिवार भी राजा के निकट चीत्कार करने लगा।

हंसो की चीत्कार सुन कर राजा के क्रोध की सीमा न रही। उसने हंस के पूरे परिवार को मार दिया। जब नेत्र विहीन हंस अपने परिवार की चीत्कार सुनता रहा और आंखें निकाले जाने के कारण अपने सुंदर बच्चों को बचाने के लिए कुछ नहीं कर सका। उसने राजा को श्राप देकर कहा–"हे राजा ! तुमने बिना किसी कारण मेरी आंखें निकाल दी और मेरे परिवार को मरवा दिया। तुम अगले जन्म में अंधे पैदा होओगे। जिस प्रकार तुमने मेरे सामने ही मेरे परिवार को समाप्त कर दिया उसी प्रकार तुम्हारे सामने ही तुम्हारे पुत्रों का बध होगा और तुम कुछ नहीं कर पाओगे। अपने पुत्रों के बध का समाचार सुनकर तड़पते रहोगे।

हंस के श्राप के कारण ही राजा अगले जन्म में धृतराष्ट्र के रूप में पैदा हुए और उनके सामने ही उनके सौ पुत्रों का बध हुआ। इसीलिए कर्म का प्रभाव जन्म जन्मों तक पीछा करता है और कर्मफल भोगने के लिए प्राणी को बार–बार जन्म लेना पड़ता है। अतः हम सभी सत्कर्म के अनुगामी बने।

हरियाली तीज

सुषमा परमार सिंह
बसंत कुंज, नई दिल्ली

सद्यः स्नाता स्त्री जैसे,
धरती खिलखिला कर हँस पड़ी,
बरिश की बौछारों ने जब,
हरितिमा की चादर ओढ़ाई।

हरे–हरे पत्तों से सज कर,
फूलों की डोली में चढ़कर,
हरियाली तीज फिर से आई,
बीते दिनों की यादों में भर कर।

वो माँ के घर जाने की चहक,
वो छाँट–छाँट कर हरा सब कुछ,
पहन ओढ़ कर हरी चूड़ियाँ,
वो मेंहदी भरे हाथों से झूलते झूले।

वो सखियों संग बचपन दोहराना,
''नन्ही–नन्ही बुंदिया रे सावन का मेरा झूलना'' गीत गाना
याद आती है माँ की दी मनपसंद साड़ी लेना,
और घेवर का लेना।

खो गये वो नीम के पेड़ के झूले,
खो गयी वो मल्हार गाने की गूँज,
पर सपने अभी भी जगे हुए हैं,
जिनको याद दिला जाती है हरियाली तीज,
सावन की पड़ती बूँदों में,
खिलती हरियाली में,
हरियाली तीज।

माँ

इन्दिरा पाण्डेय
आजमगढ़, उत्तर प्रदेश

तेरी याद न जाती माँ,
याद बहुत तुम आती माँ।
काश तुम्हें मैं पाती माँ,
भींच के गले लगाती माँ,
जीवन के सुख–दुख की गाथा,
सब तुमसे कह जाती माँ।
जबसे मैं तुमको हूँ मैं खोई,
चुपके–चुपके हर दिन रोई,
नहीं कोई ऐसा दिखता है,
जिसमें तुमको पाती माँ।
सारे जग को छोड़ चली तुम,
सबसे नाता तोड़ चली तुम,
क्या तुमको अपनी बिटिया कि,
तनिक याद ना आती माँ।
तुमसे घर मधुबन सा लगता,
खिला खिला गुलशन सा लगता,
प्यार से अपने प्रफुल्लित कर,
घर आंगन को सजाती मॉं।
तेरा घर मैं छोड़ चली हूँ,
इक नया रिश्ता जोड़ चली हूँ,
ऋणी बन मैं तेरे जैसी,
सबका कर्ज चुकाती माँ।
इतना सम्बल मुझमें देना,
ममता क्षमता सब भर देना,
महकाऊ जीवन की बगिया,
जैसे तुम महकाती माँ।

"माता का नि:स्वार्थ प्रेम सामान्य बच्चे
को भी महान काम करने में सक्षम बना सकता है।"

फुहार

सुषमा परमार सिंह
बसंत कुंज, नई दिल्ली

साँवरे भूरे हवा संग आए,
बादल घनघोर छाए,
धीरे–धीरे बरसे रिमझिम,
हवा, फुहार बिखराए।
उसकी नन्ही नन्ही बूंदें,
तन मन गीला करती जाए,
एक सिहरन सी उठे मन में,
उनकी याद दिलाए।
लगातार उड़ती फुहार,
वो चेहरा झिलमिल सा आए,
आने की वो आस दिला कर,
बारिश की बूँदों सा खोता जाए।
फुहार से छन कर आती बूँदों को,
मैं अंजुरी में भर लूँ,
प्रकृति प्रदत्त इस अद्भुत देन का,
बार बार धन्यवाद करूँ।

लिख रहा हूं मैं अजांम जिसका कल आगाज आयेगा,
मेरे लहू का हर एक कतरा इंकलाब लाऐगा।

नया दौर

संदीप जोशी
मुख्य उद्यान अधिकारी कार्यालय, विकास भवन, भीमताल

वक्त का एक दौर चला जायेगा,
जो आज है वो कल खोजा जाएगा,
फिर से एक नया दौर आयेगा।

दिन के उजाले के बाद रात का अंधेरा रह जायेगा,
अंधेरे को हटाने फिर उजाला आयेगा,
फिर से नया दौर आयेगा।

मुसाफिर राह चलते थक के बैठ जायेगा,
मंजिल की चाह मे वो फिर उठकर अपने कदम बढायेगा,
फिर से नया दौर आयेगा।

सफलता की चाह मे ठोकर खा के तू अगर गिर भी जायेगा,
गिर के ही तो तू फिर सफल बन पायेगा,
फिर से नया दौर आयेगा।

कभी दुख, कभी खुशी, कभी ऑसू, कभी हंसी,
जीवन मे आता–जाता जायेगा,
जीवन निरंतर चलता जायेगा,
फिर से नया दौर आयेगा।

तू जीव है, र्निजीव नही जो कष्टों से बच पायेगा,
असत्य को जीतकर ही सत्य को पायेगा,
फिर से नया दौर आयेगा।

कर्मभूमि की दुनियाँ में श्रम सभी को करना है...
ईश्वर सिर्फ लकीरें देता है
रंग हमें ही भरना है।
–भागवत् गीता

मैं नारी हूँ

इन्दिरा पाण्डेय
आजमगढ़, उत्तर प्रदेश

हमीं ने तुमको जनम दिया है, हमीं ने तुमको पाला है।
हाथ पकड़ कर चलना सिखाया, मुँह डाला में डाला निवाला है।

अट्ठखेली की बहना बनकर, बाल सखा बन साथ दिया।
एक आंगन में पले बढ़े हम एक ही गुरू से ज्ञान लिया।

पढ़ें लिखे तुम बने सयाने, माँ चरणों को नमन किया।
यश कीर्ति फैलाने को, देश–विदेश का गमन किया।

कौन सी बैरन लगी हवा, तुम हिंसक बन गये हे भैया!
माथ पकड़ कर बप्पा रोए, छाती पीट रही मैंया।

कुल मर्यादा तक पे रख कर, किया हवस का सौदा तुम।
माँ–बहनों की स्मित लुटी, बालाओं को रौंदा तुम।

माँ के दूध को किया कलंकित, गुरजन का शीश झुकाया।
रती भर के भोग के कारन, कुल का नाश नशाया है।

भोग विलास की थी अभिलाषा, माथा पे मौर बंधा लेते।
परिणय सूत्र के बन्धन में, प्रिया बना अपना लेते।

मैं नारी हूं रुप अनेक है, हर रिश्ते में जीतीं हूँ।
धरती मां सा रुप है मेरा, सदा गरल में पीती हूँ।

शब्दों को कोई भी स्पर्श नहीं कर सकता,
पर शब्द सभी को स्पर्श कर जाते है।
–विनोवा भावे

बारिश की बूँदें और आस के पंछी

सुषमा परमार सिंह
बसंत कुंज, नई दिल्ली

पानी की कुछ बूँदें चमका कर, धरती को भरमा कर,
बोली वर्षा ऋतु मैं आयी, तभी हवा झकोरे ले उड़े,
बादल के तिरते टुकड़े, आसमान से जा मिले।

धरती प्यासी, बोली स्नेहसिक्त शब्दों में,
अब तो आ, और ना तरसा,
पानी के राजा, ऋतुओं के राजा।

बहता समूह मेघों का, ठहरा और इतराया,
बोला चहक चहक कर, धरती से,
बिन मेरे तेरा अस्तित्व क्या, अब तो बतला जा।

...फिर मुस्काया, मैं आया...मैं आया ..,
एक अनोखा दोनों का रिश्ता, प्यार के बदले में हरियाली,
नई कोंपलों ने भी, धीरे धीरे ली अंगड़ाई।

बूँदों की यही ठिठोली, और छुअन की सिहरन,
देती रही पता, इठलाती हुई,
हर पात की, थिरकन का,
बारिशों की बूंदों से, धरती की खुशबू से,
लहराती हवाओं से, झूमते फूल,
हिलते पत्ते, गाते गीत।

मन के पनघट पर, कलरव करते,
आस के पंछी, भावों में बह कर,
उड़ते रहते, दूर गगन में,
बादलों से जुड़ कर, चमकीली बूँदों में,
बारिश की बूँदों में ....

**अपनी छोटी-छोटी बाधाओं को पार करना चाहिए,
क्योंकि इंसान पहाड़ से नहीं छोटी-छोटी पत्थरों से
ठोकर खाता है**
-अरस्तु

कुमाऊँ के लोकगीत

शारदा मालरा
शिव विहार,फ़ेज-2, कुसुमखेड़ा, हल्द्वानी

मनुष्य अपने स्वभाव के कारण सौन्दर्य की ओर आकर्षित होता है। जिस प्रकार पक्षी अपने भीतर की किसी पुकार पर चहक उठते हैं, ठीक उसी प्रकार जब मनुष्य भी सौन्दर्य में डूबा रहता है तो वह अपने भीतर के उल्लास को व्यक्त करने के लिए उत्सुक होता है, वही उल्लास हमारे सामने लोकगीतों के रूप में आता है।

कुमाऊँ प्रदेश देवताओं की क्रीडास्थली है। यह हिमालय की गोद में स्थित है। यहां प्राकृतिक सुशमा का अपार भण्डार है। पक्षियों का कलरव, बादलों की गर्जन, पिक की तान आदि का जैसा रसा स्वादन इस स्थली में है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। लोकगीत सभी प्रदेशों में मधुर और रसयुक्त होते हैं। लोकगीत सभी सुंदर होते है, परंतु कुमाऊँ के लोकगीत हिमालय के केन्द्र में प्रकृति की तरह अति सुंदर होते है।

मानव सर्वत्र समान है, राजा हो या रंक, पंड़ित हो या मूर्ख, शुभ अवसरों पर सभी को प्रसन्नता होती है, मृत्यु आदि के समय सभी को दुख होता है, इस प्रकार मानव में एक ओर तो उल्लास और आशा है, दूसरी ओर दुख एवं निराशा।

कुमाऊँ प्रदेश शहरी चमक–दमक से अति दूर है, इस प्रदेश का जीवन अति सरल है। पर्वतीय प्रदेश तथा शहरी सुविधाओं से दूर होने के कारण यहाँ का जीवन कठोर एवं परिश्रम से युक्त है। कुमॉऊ में अनेक प्रकार के लोकगीत प्रचलित है। उत्सवों, ऋतुओं आदि अवसरों पर लोक गीत गाये जाते है।

न्योली कुमाऊँ का अनुभूति प्रधान लाकेगीत है। विरह का भी मनुष्य जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। विरहिणी एकान्त में बैठकर अपने प्रिय की स्मृति में न्योली छेड़ देती है –

बरखा लागी बरखा गरखा, पाख दन्यारि च्वींछ।
म्योरो सुवा परदेशा मा, जाग–जाग में र्वींछ।।

नव युवती कहती है कि मूसलाधार वर्षा हो रही है मेरे प्रिय परदेश में है, मै अपने प्रिय की स्मृति में जहाँ भी जाती हूँ रोती रहती हूँ।

ओ भिना कस कै जानू द्वारहाटा।
हिट साली कौतिक जानू द्वारहाटा।।

युवती अपने भीना (जीजा जी) से द्वाराहाट मेले में चलने की जिद करती है, कहती है, मेरे पास अच्छे आभूषण व कपड़े नहीं है, भिना कहते है वही हम मेले से आभूषण व अन्य सामान खरीदेंगे।

डानकाना हौल लागौ– निशास लागेछ।
एकली पराणी सुवा झुर–झुरी ऐंछ।।

बरसात के दिन है युवती अकेले घास काटने जाती है चारों ओर कोहरा लगा हुआ है युवती कहती है– चारों ओर कोहरा लगा हुआ है मेरे प्रिय परदेश में हैं मै तो अकेली हो गयी हूँ कब तक इस प्रकार रोती रहूँगी।

बास कफुआ बास मैतिन को देस।
इजु मेरी सुनली, तब भेटली लगाली॥

नव युवती खेत में बैठी हुई है, वह काफुआ पक्षी से कहती है कफुआ तू मेरे मैत मायके में जाकर बोल, मेरी ईजा (माँ) सुनेगी तो मेरे लिए भिटौली लायेगी।

"आई रैछ रंग रंगीली, कैसी बहारा"।
"मैत न जा मेरी सुवा, सुण ले पुकारा"॥

पत्नी अपने पति से आग्रह करती है कि मै अपने मायके जाती हूँ उसका पति कहता है कि चारो ओर हरियाली छायी है। खेत मे रंग बिरंगे फूल खिले हुए हैं तू अभी मायके मत जा।

"जा चेली चम्पा चेली"।
"ससुराल जाण बेटा नौकनी मानण"।।

विवाह के समय लडकी जब अपने माँ पिता व घर के अन्य सदस्यों से रोती हुई विदा लेती है तो पिता अपनी लड़की से कहते हैं कि चेली चम्पा ससुराल तो तुझे जाना ही है, तू इतना क्यू रोती है? खुशी–खुशी जा हर लड़की को अपना घर छोडकर दूसरे घर मे जाना ही पड़ता है।

तू म्यर कै मान चैली, सरास हूँ जा।
तू गण–गण नी लगा, ओ मेरी ईजा।।

माँ अपनी लड़की से आग्रह करती है कि ससुराल को चली जा माँ को क्या पता न जाने उसको ससुराल में क्या–क्या कष्ट सहने पड़ते हैं। वह माँ से कहती है तू गण–गण (बार–बार) मुझे ससुराल जाने को मत कह मै नही जाती हूँ।

काले कौआ काले, घुघती माला खाले।
ले कौआ भात, मैके दिये सुनक हाथ।।

मकर संक्राति के दिन घुघुतिया नामक पर्व मनाया जाता है काले कौआ घुघुती की माला व भात खा और मुझे सोने का हाथ दे जा।

इस प्रकार का इतिहास इन्ही लोक गीतों में छिपा है। लोक गीत में धरती गाती, पहाड़ गाते, उत्सव–मेले ऋतुएँ गाती हैं। साथ ही परम्पराएें भी गाती हैं। ये गीत मानव मन की एकता और भारतीय संस्कृति की एकता के प्रतीक हैं।